सोना और ख़ून

प्रथम भाग

पूर्वार्द्ध

उपन्यासकार

आचार्य चतुरसेन

राजहंस प्रकाशन

दिल्ली-६

सोना और खून

प्रथम भाग, पूर्वार्द्ध

संख्या	विषय		पृष्ठ
प्रथम खण्ड			
१.	मियाँ खुरशैद मुहम्मदखां उर्फ बड़े मियाँ	...	२३
२.	मुहम्मद अहमद उर्फ छोटे मियाँ	...	२६
३.	बावर्चीखाना	...	२६
४.	बाप-बेटे	...	३०
५.	चौधरी	...	३४
६.	शिकार का दाव	...	४३
७.	मेहतर की बेटी का ब्याह	...	४७
द्वितीय खण्ड			
१.	काफ़ला	...	५३
२.	गढ़ मुक्तेश्वर	...	५५
३.	राजनीति की चौसर	...	५७
४.	चौधरी प्राणनाथ	...	६०
५.	पहला प्रभात	...	६२
६.	बसेसर साहू	...	६६
७.	भाऊ की ओर	...	७०
८.	मुक्तेसर पर दखल	...	७१
६.	चौधरी के जोड़-तोड़	...	७३
१०.	समरु बेगम	...	७६

संख्या	विषय		पृष्ठ
११.	नवाब बब्बू खाँ	...	८२
१२.	होल्कर के सम्मुख	...	८६
१३.	होल्कर से परामर्श	...	९२
१४.	रणजीतसिंह से भेंट	...	९५
१५.	लार्ड लेक	...	१००
१६.	अठारहवीं शताब्दी के अंतिम चरण	...	११०
१७.	नया दौर	...	११८
१८.	सफेद शहनशाह	...	११९
१९.	दो सच्चे अंग्रेज़	...	१२५
२०.	हुसैनी कबाड़ी	...	१३३
२१.	शहनशाहे हिन्द और अंग्रेज रेज़ीडेण्ट	...	१४०
२२.	शाहीदरबार	...	१४२
२३.	चौधरी की निराशा	...	१४३

तृतीय खण्ड

संख्या	विषय		पृष्ठ
१.	एलफिंस्टन की गिरफ्त	...	१४९
२.	१८१३ का चार्टर	...	१५३
३.	गूढ़ पुरुष	...	१५७
४.	कलंगादुर्ग	...	१६१
५.	सिंधिया को किश्तमात	...	१६५
६.	बाजीराव	...	१६७
७.	नवागंतुक	...	१६९
८.	नए देश का मेहमान	...	१७१
९.	पेशवा के हुज़ूर में	...	१७५
१०.	पिंडारी	...	१८०

संख्या	विषय		पृष्ठ
११.	सेना का जाल	...	१८३
१२.	अंग्रेज़ी कूटनीति का जाल	...	१८६
१३.	विजयादशमी	...	१८९
१४.	पार्वती शिखर पर	...	१९१
१५.	खिड़की संग्राम	...	१९६
१६.	पूना का छत्र-भंग	...	१९९
१७.	मराठाशाही का अंत	...	२०१
१८.	शक्ति संतुलन के बीस बरस	...	२०५
१९.	लार्ड मैकाले के विचार	...	२१०
२०.	हिज मैजस्टी	...	२१८
२१.	दिल्ली की गंडेरियाँ	...	२२२
२२.	नवाब कुदसिया बेगम	...	२२७
२३.	कासिम अलीशाह कलंदर	...	२२९
२४.	नाजुक ठोकर	...	२३१
२५.	बाज़ार का रुख	...	२३२
२६.	शरीफजादे	...	२३७
२७.	शाह अब्बास की दरगाह में	...	२४१
२८.	इशरतमंज़िल का जश्न	...	२४३
२९.	हीरे की कनी	...	२४७
३०.	नया माल	...	२४९
३१.	शाही मेहमान	...	२५४
३२.	शाही नज़र	...	२६०
३३.	दो राजपुरुष	...	२६३
३४.	लार्ड विलियम वैंटिंक	...	२६७
३५.	लखनऊ का दरबार	...	२७५

संख्या	विषय		पृष्ठ
३६.	कुत्ते की मौत और कुत्ते की ज़िंदगी	...	२७९
३७.	पुराने घरानों का ख़ात्मा	...	२८२
३८.	शतरंज का दूसरा मोहरा	...	२८४
३९.	मुक्तेसर की तबाही	...	२८६
४०.	चौधरी की विपत्ति	...	२८९
४१.	हाबूड़ों की धाड़	...	२९६
४२.	मेरठ की जेल में	...	२९८
४३.	भाग्य के हेरफेर	...	३००

सोना और खून

सोने का रंग पीला होता है और खून का रंग सुर्ख़। पर तासीर दोनों की एक है। खून मनुष्य की रगों में बहता है, और सोना उस के ऊपर लदा हुआ है। खून मनुष्य को जीवन देता है, और सोना उस के जीवन पर ख़तरा लाता है। पर आज के मनुष्य का खून पर मोह नहीं है, सोने पर है। वह एक-एक रत्ती सोने के लिए अपने शरीर का एक-एक बूँद खून बहाने को आमादा है। जीवन को सजाने के लिए वह सोना चाहता है, और उसके लिए खून बहा कर वह जीवन को ख़तरे में डालता है। आज के सभ्य संसार का यह सब से बड़ा कारोबार है। सब से बड़ा लेन-देन है, खून देना और सोना लेना।

सोना और खून के इस लेन-देन ने आज मनुष्य ही को मनुष्य का सब से बड़ा ख़तरा बना दिया है। उस का सब से बड़ा दुर्भाग्य यह है कि वह बुद्धिमान् है। सोना और खून के इस कारोबार ने उस के सारे बुद्धिबल को उस के अपने ही विनाश में लगा दिया है; और अब विनाश ने उसे चारों ओर से घेर लिया है। ज़िन्दा रहने की उस की सारी ही चेष्टाएँ अब हास्यास्पद हो गई हैं। वह मनुष्यता का बोझ अपने कन्धों पर लादे हुए, थकावट से चूर-चूर, पसीने से लथपथ, विश्राम की खोज में भटक रहा है। और मौत उसे कह रही है—यहाँ आ, और मेरी गोद में विश्राम कर।

सुधारक लोग सुपने देखते हैं, कि ज्ञान और सदाचार मनुष्य के दुःख-दर्द हर लेंगे। मनुष्य का जीवन सफल होगा। जेलखाने ढहा दिए जाएँगे। फांसी के तख्ते दुनिया से उठा दिए जाएँगे। जेल की काल कोठरियाँ प्रकाश से जगमगा उठेंगी। कोई दरिद्र न रहेगा। कोई भीख के लिए हाथ पसारता नज़र न आएगा। सारे मनुष्य समझदार, सदाचारी और सुखी हो जाएँगे, किन्तु कब ? ये सुपने तो उन्होंने युग-युग से देखे हैं, और युग-युग तक देखते रहेंगे।

* * *

असभ्य युग का आदमी भी मन का कमज़ोर-भीरु और आलसी था। वह जो देखता था, उसे ही समझता था। विपत्ति पड़ने पर प्रकृति से परे किसी अदृष्ट शक्ति को खोजता था। सहस्राब्दियों तक वह बलि-दानों, प्रार्थनाओं और अलौकिक पूजाओं से उस की उपासना करता रहा। बहुत धीरे-धीरे बड़े कष्ट से उस की विचार-सत्ता विकसित हुई। मन शरीर का सहायक बना, विचार और परिश्रम एकत्र हुए, मनुष्य की उन्नत्ति का सूत्रपात हुआ, कि उसे सोना मिल गया। उस ने तत्काल ही खून से सोने का लेन-देन आरम्भ कर दिया। और देखते ही देखते वह घनघोर युद्धों के बीच में जा फंसा। जिन्होंने उसे कर्ज़दार, दिवालिया और असहाय बना दिया।

* * *

इस नए युग का नया खूनी देवता है—देश। इस देवता ने इस सभ्य युग में जन्म ले कर दुनिया के सब देवताओं को पीछे धकेल दिया। आज वह संसार के मनुष्यों का सब से बड़ा देवता है। असभ्य युग में, असभ्य जातियों ने कभी भी किसी देवता को इतनी नर-बलि न दी थी, जितनी इस सभ्य युग में इस खूनी और हत्यारे देवता को मनुष्य ने दी है, और देता जा रहा है। इस भयानक देवता के खून की प्यास का अन्त

नहीं है। बलिदान की पुरानी तलवार के स्थान पर मनुष्य ने अपना सारा बुद्धिबल खर्च कर के एक से एक बढ़कर खूनी हथियार इस देवता को नर-बलि से सन्तुष्ट करने को बनाए हैं। रोज़-रोज़ मनुष्य का ताज़ा रक्त इस देवता को चाहिए। जो सब से अधिक नर-वध कर सकता है, वही सब से अधिक इस देवता का वरदान प्राप्त कर सकता है। यह हत्यारा देवता शायद संसार के सारे नृवंश को खा जायगा। एक भी आदमी के बच्चे को जीता न छोड़ेगा।

* * *

यह खूनी देवता यूरोप में उत्पन्न हुआ, और वहाँ से अंग्रेज़ उसे भारत में अपने साथ लाए। पाश्चात्य संस्कृति ने इस देवता को जन्म दिया था। उसकी नींव ग्रीकों ने डाली थी। मिस्र और बेबिलोनिया के प्राचीन साम्राज्यों के नष्ट होने पर जब ग्रीकों का उदय हुआ—तो उस में सर्वप्रथम सार्वभौम राजा की पूजा खत्म कर दी गई। इससे वहाँ के मध्यम वर्ग के अधिकार बहुत बढ़ गए और कला-कौशल और तत्व-ज्ञान में वे अपने काल की सब जातियों से बढ़ गए। रोमन विजेताओं ने ग्रीक दासों से ही कला-कौशल और तत्वज्ञान सीखे। बाद में रोमन प्रजातन्त्र का उदय हुआ, और उसके बाद यूरोप में ईसाई धर्म का उदय हुआ, और साम्राज्य का नेता पोप बन

बैठा। शताब्दियों तक सारे यूरोप की राजसत्ताएँ उस के हाथ की कठ-पुतलियाँ बनी रहीं। यह यूरोप की अन्धाधुन्धी का मध्य-युग था। उसी समय यूरोप पर मंगोलों ने आक्रमण किया और उस के बाद ही तुर्कों ने समूचे पूर्वी यूरोप को ग्रस लिया। परन्तु यूरोप का विकास तेरहवीं शताब्दी से ही होने लगा था। वेनिस, जेनेवा, पीसा, फ्लोरेन्स आदि नगरों का उदय हो चुका था, जिन का पोषण व्यापार से होता था। उस समय सारे व्यापार का केन्द्र मार्ग कुस्तुन्तुनिया हो कर था। भारत और चीन के सम्बन्ध में उस समय भी यूरोप के लोग कुछ नहीं जानते थे। परन्तु जब भूमध्यसागर और अटलांटिक महासागर की छाती पर सवार होकर पोर्चुगीज़ नाविक दीयाज़, कोलम्बस, वास्को-द-गामा के ऐतिहासिक अभियान हुए, तो पूर्व का द्वार यूरोप के लिए खुल गया। भारत, चीन और अमेरिका की उन्हें उपलब्धि हुई। और इन देशों की सम्पत्ति पर सारे पश्चिमी यूरोप की लोलुप दृष्टि पड़ी, जिस से उन में प्रतिस्पर्द्धा बढ़ने लगी। पोर्चुगीज़ों के बाद डच और उस के बाद अंग्रेज़ों ने उद्योग किए। फ्रेन्चों ने भी हाथ-पैर मारे। अन्त में प्लासी के निर्णायक युद्ध में अंग्रेज़ी राज्य की नींव भारत में पड़ी। आज इस राजा का, और कल उस नवाब का पक्ष ले कर, उन्होंने, अन्ततः सारा भारत अपने अधिकार में कर लिया। इस के बाद उन्होंने रजवाड़ों को हड़पने की चेष्टा की, जिस के फलस्वरूप सत्तावन का विद्रोह उठ खड़ा हुआ। जिस में फाँसी और तोप के मुँह पर बाँध कर जीवित मनुष्यों को उड़ा कर नर-वध का महा-ताण्डव कर के अंग्रेज़ भारत के एकनिष्ठ अधिराज बन बैठे।

* * *

भारत में पोर्चुगीज़, डच और फ्रेन्चों के मुक़ाबिले में अंग्रेज़ों को जो सफलता मिली, वह केवल अंग्रेज़ों के भाग्योदय के कारण नहीं। इस का कारण वह औद्योगिक क्रान्ति थी, जिस का श्रीगणेश यूरोप में पन्द्रहवीं शताब्दी में ही आरम्भ हो गया था। इसके अतिरिक्त अपनी कूटनीति

और उद्योग से, अंग्रेज़ सब यूरोपियन देशों से बाज़ी मार ले गए। इस समय अंग्रेज़ सरदारों और मध्यम वर्ग के लोगों ने जो राजा पर अंकुश लगा कर पार्लमेंट की स्थापना कर ली थी, उस से इस औद्योगिक क्रान्ति के पर लग गए थे। इस के बाद सोलहवीं शताब्दी में इंगलैण्ड ने मार्टिन लूथर का पंथ स्वीकार कर पोप के धार्मिक प्रभुत्व का अन्त कर दिया। सत्रहवीं शताब्दी में इंगलैण्ड के मध्यम वर्ग में और भी जागृति हुई। बढ़ते हुए मध्यम वर्ग ने अपनी बात पर आड़ लगाने के अपराध में अपने बादशाह चार्ल्स का सिर काट लिया। उन के नेता दृढ़-निश्चयी क्रामवेल के सामने यूरोप भर के राजाओं ने विद्रोह किया, पर बेकार। इस के बाद तो राजा के अधिकार कम होते ही गए और मध्यम वर्ग पनपता गया। फिर भी अंग्रेज़ों ने प्रजातन्त्र की स्थापना नहीं की, क्योंकि उस का जाल यूरोप के दूसरे देशों में फैल गया था। इन देशों के राजाओं से पत्र-व्यवहार करने और विजित देशों पर निरंकुश शासन की आड़ में निर्द्वन्द्व हो कर उनका लोहू चूसने के लिए 'राजा' नामक एक खिलौने की उन्हें बड़ी आवश्यकता थी। इसी से उन्होंने अपनी राज सत्ता को क़ायम रखा। जब कभी पार्लमेण्ट ग़लती करके कोई संकट खड़ा कर देती, तो यह खिलौना राजा उस से बच निकलने में अंग्रेज़ों की मदद करता था। इस प्रकार अंग्रेज़ों ने अपनी यह जातीय नीति बना ली—कि चाहे राज-सत्ता हो चाहे धर्म सत्ता, जब उस से लाभ उठाने का अवसर मिले लाभ उठा लेना; जब वह राह का रोड़ा बने, उसे ठोकर लगा देना। अंग्रेज़ों की यह नीति भारत ही में नहीं, यूरोप के अन्य देशों के मध्यम वर्ग पर विजय पाने में भी बड़ी सहायक हुई। स्पेन और पुर्तगाल पोप के फेर में पड़ कर धर्मान्ध बने रहे, और पूर्व तथा पश्चिम में भी अपना महत्व खो बैठे। फ्रांस की रक्त-क्रान्ति ने भी उलझनें पैदा कर के अंग्रेज़ों को यूरोप के सारे देशों से आगे निकाल दिया। उन्होंने समुद्र पर एकाधिपत्य क़ायम कर लिया और सारे यूरोप के राष्ट्रों से उस ने युद्ध ठान दिए। और वे लहरों के स्वामी हो बैठे।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रथम चरण तक यूरोपीय राष्ट्र परस्पर स्पर्द्धा करते और लड़ते-झगड़ते रहे। इसी बीच अंग्रेज़ी साम्राज्य की पूर्व में स्थापना दृढ़ हो गई। अब यूरोप के परस्पर के युद्ध बन्द हो गए, और यूरोप तथा अमेरिका के विद्वानों की सम्मिलित वैज्ञानिक खोजों ने एक के बाद एक, नए नए आविष्कार किए, जिनके सहारे पूँजीपति अपने व्यवसायों को उन्नत करते चले गए। तेल, कोयला और बिजली की उपलब्धि ने इन महाजातियों के शक्ति-स्रोत को प्रवाहित कर दिया।

अब उनके आर्थिक स्वार्थ परस्पर टकराने लगे, जिसने एक नए संघर्ष का रूप धारण कर लिया, और इन पूँजीवादी देशों में लोग 'श्रमिक' और 'पूँजीपति' इन दो दलों में विभक्त हो गए। इस संघर्ष को दूर करने में इन शक्तिशाली राष्ट्रों ने सुदूरपूर्व के पिछड़े हुए राष्ट्रों पर अधिकार कर, उन्हें कच्चे माल का उत्पादक और पक्के माल का ग्राहक बना लिया। इससे अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष उठ खड़े हुए, जिसके फलस्वरूप यूरोप को दो महायुद्ध करने पड़े, जिन से वह तबाह हो गया।

उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक संसार की खोज समाप्त हो गई थी और उसके अधिकांश भाग को यूरोप के लोभी राष्ट्रों ने बाँट लिया था। परन्तु, दुर्भाग्य से यूरोप कभी भी एक राष्ट्र नहीं बन सका; छोटे-छोटे परस्पर विरोधी राष्ट्रों में बंटा रहा। इसका एक गम्भीर कारण था। यद्यपि वह मूल ग्रीक संस्कृति से प्रभावित था, परन्तु पुर्तगाल, फ्राँस और इटली पर लैटिन संस्कृति का विशेष प्रभाव था। ब्रिटेन, जर्मनी, आस्ट्रिया, इंगलैंड, डेनमार्क, नार्वे और स्वीडन पर उत्तरी आर्यजाति का प्रभाव था। रूस और बाल्कन प्रदेशों पर एशियाई संस्कृति का असर था। इसी से सारा यूरोप ग्रीक-रोमन संस्कृति का माध्यम पाकर भी कभी एक न हो सका, विभिन्न राष्ट्रों में बँटा रहा। और वे राष्ट्र परस्पर लड़ते रहे। अनेक संघर्षों का सामना करते हुए ब्रिटेन के राजनीतिज्ञों की शक्ति-संतुलन-नीति यूरोप का नेतृत्व करने लगी। और चूँकि यूरोप की सत्ता का संसार के अन्य भू-भागों पर भी प्रभाव था, इस लिए ये संघर्ष दिन-

दिन अन्तर्राष्ट्रीय प्रभाव धारण करते गए।

*　　　　*　　　　*

सन् १९१५ के बाद यूरोप के सभी भू-भागों का राष्ट्रीय संगठन हो चुका था। यूनान और बाल्कन तुर्क शासन से मुक्त हो चुके थे। इटली भी स्वतन्त्र हो गया था। जर्मन-भाषा-भाषी भू-भाग जर्मन साम्राज्य के नाम से संगठित हो चुका था। यद्यपि रूस और ब्रिटेन का उसे पूरा सहयोग था, पर ये दोनों देश एशिया को घेर रहे थे। उस समय रूस प्रशान्त में पैर बढ़ा रहा था और ब्रिटेन भारत में। रूस की आवश्यकताएँ बहुत थीं और उसे निष्कंटक जल-मार्ग प्राप्त नहीं थे। इसलिए ब्रिटेन की संतुलन-नीति उसके विपरीत पड़ने लगी। उसने तुर्की की केन्द्रीय शक्ति को नष्ट करना चाहा, फिर अफ़गानिस्तान पर हाथ रखा, पर ब्रिटेन चौकन्ना था। उसने दोनों को संरक्षण दिया और जापान से दोस्ती गाँठी और उसे रूस से भिड़ा दिया। रूस जापान से परास्त हुआ। इस पराजय को सारे एशिया ने आश्चर्य से देखा। परन्तु इसी समय जर्मनी ने पैर निकाले। जर्मनी श्रमिकों का देश था। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में वह शीघ्र ही ब्रिटेन को ललकारने लगा। इस समय भी ब्रिटेन यूरोप का नेता बना हुआ था। वह जर्मनी की शक्ति तोड़ने की ताक में था।

*　　　　*　　　　*

और अन्त में इन्हीं सब कारणों से, १९१४ में प्रथम यूरोपीय महायुद्ध छिड़ गया। यह युद्ध मानव इतिहास में पिछले सब युद्धों से अनोखा युद्ध था। पिछले युद्धों में सेनाएँ लड़ा करती थीं, और जनता को केवल युद्ध-व्यय का भार ही सहन करना पड़ता था। पर इस युद्ध में प्रथम बार लड़ने वाले राष्ट्रों के सब वयस्क नागरिक स्त्री-पुरुषों को सामरिक सेवा के लिए संगठित होना पड़ा। इस व्यापक, राष्ट्रों के युद्ध का प्रभाव बाहर के उन

राष्ट्रों पर भी पड़ा, जो युद्ध में सम्मिलित नहीं थे। वास्तव में यह युद्ध राज्यों की राज्य-लिप्सा का युद्ध न था, राष्ट्रों की भूख का युद्ध था। यह संसार का प्रथम युद्ध था जो अकल्पित युद्ध-क्षेत्र में फैल गया। उसका पश्चिमी क्षेत्र स्विटज़रलैण्ड तक पाँच सौ मील से भी कुछ अधिक लम्बा था। और पूर्वी क्षेत्र बाल्टिक सागर से कृष्ण सागर तक एक हज़ार मील लम्बे क्षेत्र में फैला हुआ था। इस युद्ध में दो विरोधी राष्ट्रों के गुट्ट परस्पर टकराए। एक वह गुट्ट था जिसके पास साम्राज्य और धन था। दूसरा वह, जो इनसे कुछ छीनना चाहता था। युद्ध का अन्त साम्राज्यों के पक्ष में हुआ। परन्तु साम्राज्य-सत्ता डगमगा गई। रूस में सर्वथा नवीन 'लाल क्रांति' हुई। युद्ध कोई सवा चार बरस चला। इसमें लगभग दस लाख अंग्रेज़ और चौदह लाख फ्राँसीसी युवकों की हत्या हुई। लगभग तीस लाख पुरुष अंगभंग हो गए, और लगभग एक हज़ार अरब रुपया स्वाहा हो गया।

* * *

इस युद्ध ने दुनिया के तीन टुकड़े कर दिए। दो टुकड़े तो दोनों ओर से लड़ने वाले, दोनों राष्ट्रों के थे, और तीसरा तटस्थ देशों का था। हारे हुए देशों की अर्थात् जर्मनी और मध्य यूरोप के छोटे-मोटे देशों की मुद्रा प्रणाली नष्ट हो गई थी तथा उनकी साख जाती रही थी। इससे वहाँ का मध्यम वर्ग बर्बाद हो गया। उधर सारे विजेता राष्ट्र अमेरिका के कर्जदार हो गए। इसके अतिरिक्त 'राष्ट्रीय-युद्ध-ऋण' का भी उन पर असह्य भार था। इन दोनों कर्जों के असह्य भार से वे लड़खड़ा रहे थे। अब उनकी आशा केवल जर्मनी से मिलने वाले हर्जाने के रुपयों पर ही थी। पर जर्मनी सोलहों आना दिवालिया हो गया। उस समय केवल अमेरिका में ही रुपयों की बाढ़ आ रही थी। परंतु सौदों-सट्टों ने अमेरिका की सम्पन्नता का जल्द ही दिवाला निकाल दिया। और सारे संसार के साथ अमेरिका भी मंदी के चंगुल में फँस गया। उन दिनों अमेरिका में

छोटे-छोटे स्वतन्त्र बैंक बहुत थे। वे सब बालू की दीवार की भांति ढह गए। चार ही साल में दस हज़ार बैंकों का दिवाला निकल गया। अब अमेरिका को अपने लाखों मजदूरों को ज़िन्दा रखना दूभर हो रहा था। वे आवारा और गुण्डे हो रहे थे। उधर इंगलैंड जो डेड़ सौ वर्षों से संसार-व्यापी साम्राज्यवादी शोषण के बल पर सम्पन्न हो रहा था—डगमगा रहा था। देश भर के कारखाने खाली पड़े थे। लंकाशायर जो कभी आधी दुनिया को कपड़ा देता था, सूना हो रहा था। वहाँ के मज़दूर भूखों मर रहे थे।

इस समय दुनिया में खाद्य पदार्थों की कमी न थी। वे ज़रूरत से ज्यादा उत्पन्न हो रहे थे, फिर भी संसार में व्यापक भुखमरी फैली थी। खाद्य पदार्थ नष्ट हुए जा रहे थे। फसलें नहीं काटी जा रहीं थीं। उन्हें खेतों ही में जला डाला जाता था। फलों को वृक्षों पर सड़ने को छोड़ दिया जाता था। अनेक देशों में खाद्य पदार्थ नष्ट किए जा रहे थे। करोड़ों बोरियाँ खाद्यान्न समुद्र में फेंक दी गई थीं। ये सब अमानुषी कार्य मन्दी से बाज़ार का उद्धार करने के लिए किए जा रहे थे। इस मन्दी के भार से जहां अमेरिका के किसानों पर वज्र टूटा वहाँ, दक्षिणी अमेरिका, अर्जन्टाइना, ब्राज़ील और चिली की प्रजातन्त्री सरकारों का तख्ता ही उलट गया था। परन्तु एक उद्योग था, जो इस मन्दी की चपेट से बचा था। हथियार और युद्ध की सामग्री बनाने का। यह संसार व्यापी मन्दी पूंजी-वाद का अन्त-काल था। दूसरे ऋणों के बोझ ने विश्व के उद्योगों की रीढ़ की हड्डी तोड़ दी थी। क्योंकि युद्ध काल में उधार लिया हुआ रुपया किसी उत्पादक रक़म में नहीं लगा था, वह तो विनाशक अर्थों में खर्च हुआ था और जिसने अपने पीछे भी विनाश ही छोड़ा था।

परन्तु इस समय संसार के बाज़ार पर एकाधिपत्य स्थापित करने में अमेरिका और इंगलैंड में तुमुल संग्राम छिड़ रहा था। इस समय तक भी संसार में यही दो शक्तियां सबसे बड़ी थीं। पर एक पतनोन्मुखी और दूसरी उद्ग्रीव। युद्ध से पूर्व तो इंगलैण्ड का सर्वत्र प्रभुत्व था ही। पर

अब अमेरिका दुनिया का सबसे बड़ा साहूकार था। इंगलैण्ड के पुराने दमख़म ख़त्म हो रहे थे। पर अकड़ वह नहीं छोड़ता था। इस तरह अमेरिका और इंगलैण्ड की आर्थिक खींचा-तानी संसार को दूसरे महा भयंकर युद्ध की ओर खींचे लिए जा रही थी।

अन्त में इंगलैण्ड घुटनों के बल गिर गया। वह अपने पौण्ड की रक्षा न कर सका। अपना सोना बचाने के लिए उसे पौण्ड को सोने से पृथक् करना पड़ा, जिस से पौण्ड की कीमत गिर गई। यह एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय घटना थी। इससे उसके हाथ से विश्व का वह आर्थिक नेतृत्व चला गया, जिसकी बदौलत लंदन संसार का केन्द्र बना हुआ था। बैंक आफ इंगलैण्ड, जो दुनिया का दो-तिहाई सोना सदा खरीदता था, और जिसके बल-बूते पर इंगलैण्ड सौ वर्षों से भी अधिक काल तक संसार का स्वर्ण सम्राट् बना हुआ था, अपनी साख कायम न रख सका, और इंगलैण्ड के टाट उलटने के लक्षण प्रकट होने लगे।

अमेरिका के पास इस समय संसार का दो-तिहाई सोना जमा था। संसार के सारे राष्ट्र उसके कर्ज़दार थे। यूरोप पर इस समय उसका दस अरब डालर का कर्ज़ा था, और अब वह अपने कर्ज़े की मांग करके किसी भी यूरोपियन देश को दिवालिया बना सकता था। इस लिए अब यह स्वाभाविक ही था कि वह मांग करे कि अब लंदन क्यों? न्यूयार्क संसार की आर्थिक राजधानी बने। फिर क्या था, अपनी-अपनी सरकारों के हाथ अपनी-अपनी पीठों पर पाकर न्यूयार्क और लंदन के धन-कुबेर उद्योग में ताश के पत्ते फेंकने लगे। परन्तु इंगलैण्ड का पौण्ड हिल गया और सारी दुनिया में अकेला अमेरिकी डालर अटल चट्टान की भाँति खड़ा रहा।

इसी समय जापान अपनी मुद्रा लेकर एशिया के बाज़ार में उल्का की भाँति आ टूटा, जिससे ब्रिटेन और अमेरिका दोनों ही थर्रा उठे। और अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार पर अपना एकाधिकार क़ायम रखने के लिए ब्रिटेन, अमेरिका और जापान तीनों के हाथ अपनी-अपनी तलवारों की मूंठ पर जा पहुँचे।

इसी समय रूज़वेल्ट ने अमेरिका के सिंहासन को सुशोभित किया। यह पहला अमेरिकन राष्ट्रपति था जिसने दुनिया के मामलों में खुल कर हिस्सा लिया। पर, अब दुनिया बदल गई थी। समाजवाद जन्म तो ले चुका था, पर अभी वह पूंजीवाद से ही उलझ रहा था। इंगलैण्ड ने एक बार भारत का सोना लूट कर सिर उठाना चाहा, पर बेकार। ब्रिटिश पार्लमेंट अब पूंजीवाद और लोकसत्ता का अखाड़ा बन रही थी। भारत में हज़ारों आदमी जेलों में सड़ रहे थे। गांधीजी यरवदा जेल में बन्द थे। दमन जोरों पर था। यतीन्द्र ने जेल में भूखों रह कर प्राण दे दिए थे। सीमान्तों पर ब्रिटिश विमान बम बरसा रहे थे। दक्षिणी अफ्रीका में जातीय द्वेष और आर्थिक संघर्ष ने ग़ज़ब ढाया था। यही हाल पूर्वी अफ्रीका का था। जब से केनिया में सोना निकला था, अफ्रीकियों के दुर्भाग्य में चार चांद लग गए थे। मिश्र में आज़ादी की बेचैनी फैली थी। दक्षिण-पूर्वी एशिया के देशों—इन्डोनेशिया, हिन्दचीन, जावा-सुमात्रा, डचइंडीज़ और फिलिपाइन द्वीपों में विदेशी शासन का जुआ उतार फेंकने की जद्दो-जहद चल रही थी। चीन में जापान क़त्ले आम कर रहा था। जापान के हौसले बढ़े हुए थे, और वह विश्व साम्राज्य के सुपने देख रहा था। पर उसकी सब से बड़ी बाधा सोवियत रूस थी, जो इस समय समूचे उत्तरी एशिया में एक संसार का निर्माण कर रहा था। वह एक प्रकार से लड़खड़ाते सभ्य संसार को चुनौती दे रहा था। जहाँ मंदी और बेकारी पूंजीवाद का गला घोंट रही थी। सोवियत संघ के इलाकों में आशा, शक्ति और उत्साह के अंकुर फूट रहे थे। संयुक्त राज्य अमेरिका पर संकटों के बादल उमड़ रहे थे। इंगलैण्ड अब समूचे संसार का मुखिया नहीं रह गया था। उस की लहरों पर हुकूमत ख़त्म हो चुकी थी। वह समूची दुनिया से सिकुड़ कर अपने साम्राज्य में सीमित हो गया था। और अब वह साम्राज्य भी डगमग-डगमग हो रहा था। हिटलर और उसके साथी अब युद्ध की भाषा बोल रहे थे। संसार के सारे देश आर्थिक राष्ट्रवाद की राह पर दौड़ कर युद्ध-स्थली पर एकत्र होते जा रहे थे। घटनाएं अटल भाग्य की भाँति संसार

को उधर ही धकेले लिए जा रहीं थीं, जहाँ सोने के घेरों के महाकुण्ड बनाए गए थे। जिन में मनुष्य का ताज़ा खून भरा जाने वाला था।

और अन्त में वे सोने के घेरे के बने हुए महाकुण्ड बारह करोड़ मनुष्यों के रक्त से भरे गए। जिन में हिटलर और मुसोलिनी डूब मरे। पर उनका वह खून से सींचा हुआ राष्ट्रवाद दुनिया के मनुष्यों को कंगाल और तबाह करने के लिए अब भी क़ायम है। और वह समूचे नृ-वंश को खींच कर भावी महायुद्ध की रंगभूमि पर खींचे लिए जा रहा है। जहाँ अब सोने के कुण्ड खून से न भरे जाएंगे। खून और सोना पिघल कर एक नई धातु को जन्म देंगे। संसार के सारे नगर, जनपद विध्वंस हो जाएंगे। संसार का सारा जीवन समाप्त हो जायगा। रह जाएंगे इस नई धातु के बने असंख्य पर्वतों के शृंग, जिनका रंग लाल और पीले रंग का मिश्रण होगा। और जो सूने संसार में सूर्य की धूप में व्यर्थ चमकते रहेंगे। जिन्हें देखने वाली सब आँखें फूट चुकी होंगी, समझने वाले सब हृदय जल कर खाक हो चुके होंगे। सब जीव अपने को नष्ट करके जीवन का मूल्य अदा कर चुके होंगे।

यही सोना और खून का सम्मिलित रूप होगा, जो आज मिल कर एक होने को बेचैन है। खून मनुष्य की रगों में बह रहा है और सोना उसके शरीर पर लदा हुआ है। जब तक ये नसें चीर कर साफ नहीं कर दी जातीं, खून की एक-एक बूंद उन में से बाहर नहीं निकाल ली जाती, तब तक सोने को चैन कहाँ !!!

सोना और खून

प्रथम खण्ड

: १ :
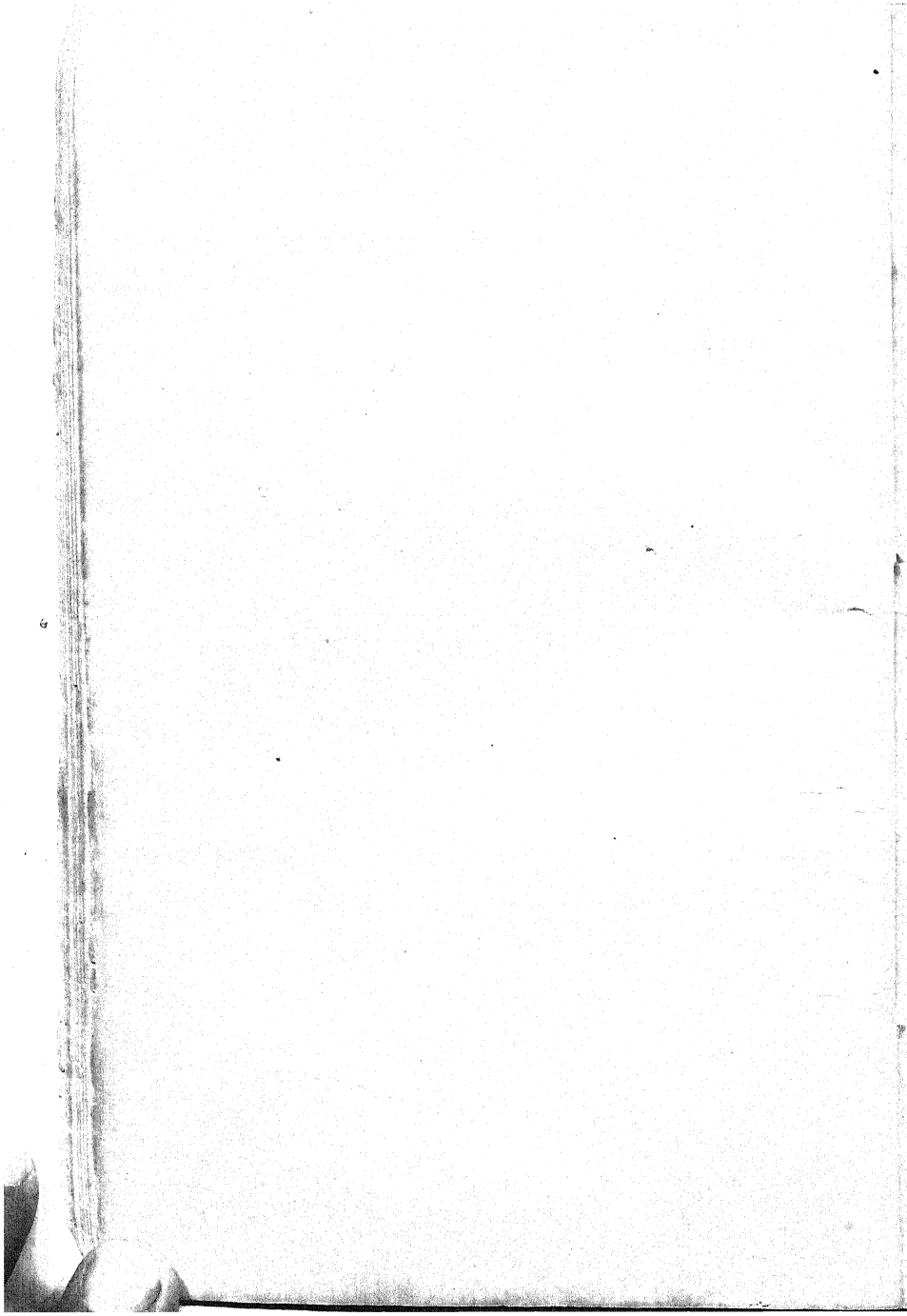
मियाँ खुरशैद मुहम्मद खाँ उर्फ बड़े मियाँ

असल मुग़ल खून। मोती के समान रंग। उम्र अस्सी के पार, लम्बे पट्टे बगुला के पर जैसे सफेद। बड़ी-बड़ी आँखें, जिन में लाल डोरे, भारी भारी पपोटों के बीच से झांक कर प्यार और शान को निमन्त्रण देती हुईं। क़द लम्बा, किसी क़दर दुबले पतले, मगर कमज़ोर नहीं। कमर ज़रा झुकी हुई। डाढ़ी ख़सख़ासी—बहुत सावधानी से तराशी हुई। जो उनके रुआबदार चेहरे पर बहुत भली लगती थी। आँखों पर अभी चश्मा नहीं लगा। सुर्मा लगाते थे। सिर पर मखमली ऊदी कामदार टोपी। पैरों में अलीगढ़ी पायजामा और वसली के असली कलावत्तू के काम के जूते। बदन पर पर जामदानी का अंगरखा, उस पर कमख़्वाब की नीमास्तीन। हाथ में ज़मर्रुद की कीमती तस्वीह, प्रतिक्षण सरकती हुई। पान की लकीरों से आरास्ता ओठ, निरन्तर हिलते हुए। दाँतों की बत्तीसी असली क़ायम, जिन पर पान की लाल झलक, ठीक अनार के दानों की शोभा को मात करती हुई। यही थे मियाँ खुरशैद मुहम्मद खां, रईस बड़ागांव !

जब चलते तो हाथ में लाठी रखते थे। उनकी पानीदार आँखें इस उम्र में भी रोशन थीं। मियाँ कभी गुस्सा नहीं करते थे। शाइराना तबियत पाई थी। वे गम्भीर, चिन्तनशील, मितभाषी और खुश मिज़ाज थे। सभी छोटे बड़े उन्हें प्यार से मियाँ कहते थे। हक़ीक़त तो यह थी,

वे आदर्श रईस थे। रईसी उन पर फ़बती थी। उनकी सख़ावत, दरिया-दिली, रईसी और पाक-मिजाजी की चर्चा दूर-दूर तक आस-पास के गांवों में थी। उन्हें देखते ही लोगों के सिर झुक जाते थे, और हर छोटे बड़े परिचित को देखते ही उनके हिलते हुए ओठ मुस्करा उठते थे। उनकी आज्ञा की अवहेलना नहीं की जा सकती थी। पास-पड़ौस के सभी ज़मींदार और रईसों में उन की इज्ज़त और धाक थी। सुना जाता था कि मियाँ का घराना दिल्ली के शाही ख़ानदान से भी कुछ सम्बन्ध रखता था। बादशाह उनका आदर करते, और कभी-कभी उन्हें लाल क़िले में बुलाते थे। मियाँ की उम्र बादशाह सलामत की उम्र से भी अधिक थी। इसी से बादशाह कभी-कभी दर्बारे तख्लिए और कभी-कभी शाही दस्तर-ख़ान पर भी मियाँ को बुलाकर उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाते थे। इसी से रईस-रियाया सभी पर उनका दबदबा था। घुड़सवारी के शौकीन थे। सुबह

की नमाज़ अदा करके घोड़ी पर सवार हो, खेतों पर चक्कर लगाने जाते। यह उनका नित्य का दस्तूर था।

सर्दी के दिन, सुबह का वक्त। अभी पूरी धूप नहीं खिली थी, कोहरा छाया था, खेतों से वापस लौट रहे थे। कल्लू भंगी अपनी झोंपड़ी के आगे आग ताप रहा था और हुक्का गुड़गुड़ा रहा था। मियाँ ने घोड़ी रोक दी। बोले, "कल्यान मियाँ सर्दी बहुत है।"

कल्लू घबरा कर हुक्का छोड़ उठ खड़ा हुआ। उसने ज़मीन तक झुक कर मियाँ को सलाम किया। और हाथ बाँध कर कहा, "हाँ सरकार।"

"अमाँ, तुम्हारे पास तो कुछ ओढ़ने को भी नहीं है। लो, यह लो।"

उन्हों ने अपनी कमर से लपेटा हुआ शाल उतार कर भंगी के ऊपर डाल दिया। भंगी ने घबरा कर कहा—"सरकार, यह क्या कर रहे हैं, इतना क़ीमती शाल यह गुलाम क्या करेगा, न होगा तो मैं गढ़ी में हाज़िर आ जाऊँगा। कोई फटा पुराना कपड़ा बख़्श दीजिएगा।"

लेकिन मियाँ ने भंगी की बात सुनी नहीं। उन्हों ने कहा—"अमाँ, कल्यान, तुम्हारी लड़की की शादी कब की रही ?'

"इसी चौथे चाँद की है सरकार।"

"अच्छी याद दिलाई, मैं तो दिल्ली जाने वाला था, जहाँपनाह का पैग़ाम आया था। अब शादी के बाद ही जाऊँगा। मगर देखना, बारात की तवाज़ा ज़रा ठीक-ठीक करना, ऐसा न हो भई, गाँव की तौहीन हो। तुम ज़रा लापरवाह आदमी हो। समझे।"

"समझ गया सरकार।"

"जिस चीज़ की ज़रूरत हो छुट्टन मियाँ से कहना।"

"जो हुक्म सरकार।"

मियाँ ने घोड़ी बढ़ाई। और कल्लू भंगी शाल को सिर से लपेटते हुए दूर तक मियाँ की रकाब के साथ गया।

: २ :

मुहम्मद अहमद उर्फ छोटे मियाँ

मियाँ के इकलौते साहबज़ादे थे मियाँ मुहम्मद अहमद । उम्र इक्कीस साल । दिल्ली में पढ़ते थे । अंग्रेज़ी का शौक था । अंग्रेज़ी लिबास पहनते थे । इस समय ग़ाजी बादशाह अकबर शाह का अदल महज़ लाल किले ही तक सीमित था । बादशाह बड़े मियाँ को तो दोस्त की तरह मानते थे और छोटे मियाँ को बेटे की तरह । मुहम्मद अहमद अंग्रेज़ों के मिशन कालेज में पढ़ते थे पर बीच-बीच में बादशाह का मुजरा करने लाल किले में जाते रहते थे । इससे उनके हौसले ज़रा बढ़े हुए थे । अंग्रेज़ी पढ़ने और अंग्रेज़ों के सम्पर्क में रहने से उनके विचारों में भी बहुत क्रान्ति हुई थी । उम्र का भी तक़ाज़ा था । वे हर चीज़ को और हर बात को नई नजर से देखते थे । धर्म-ईमान पर भी उनके विचार नए पन को लिए हुए थे ।

परन्तु इसके विपरीत बड़े मियाँ बिलकुल पुराने ढंग के न केवल रईस थे—वे पुराने ढंग के मुसलमान भी थे । रोज़े-नमाज़ के पाबन्द, और सच्चे खुदापरस्त । नेक और रहीम । बड़े आदमियों के सभी गुण उन में थे । लेकिन वे सब गुण बहुधा छोटे मियाँ को अखरते रहते थे । वे पिता की काफी इज्ज़त करते थे पर कभी-कभी बाप-बेटों में हुज्जत भी हो जाती थी ।

मियाँ ने घोड़ी साईस के हवाले की । और दीवानखाने में आ मसनद पर बैठ गए । मियाँ के दीवानखाने का अन्दाज़ा शायद आप न लगा सकें । आप के ड्राइंग रूम से बिलकुल जुदा चीज़ थी ।

मियाँ के मसनद पर बैठते ही मुहम्मद अहमद ने आ कर कहा—
"अब्बा हुज़ूर, मियाँ अमजद और वासुदेव पण्डत बड़ी देर से बैठे हैं ।"

"किस लिए ?"

"वही, क़र्ज़ा मांग रहे हैं । मियाँ अमजद को तो कम्पनी बहादुर की

मालगुज़ारी भरनी है, उसका वारंट लेकर कम्पनी का आदमी दरवाज़े पर डटा बैठा है। अमज़द पिछवाड़े की दीवार फांदकर आया है। कहता है—घर रोना पीटना मचा है। कम्पनी के प्यादे बरकन्दाज़ एक ही बदज़ात होते हैं। बहू बेटियों की, बेहुर्मती करना तो उनका बायें हाथ का खेल है।"

"बहुत खराब बात है। कितने रुपये चाहिएँ उसे।"

"चार सौ मांगता है।"

"और वासुदेव महाराज।"

"उनकी लड़की की शादी है। कहते हैं, ज़हर खाने को भी पैसा नहीं है। बिरादरी में नाक कट गई तो जान दे देगा।"

"म्याँ ग़ैरतमन्द आदमी है। उसे कितना रुपया चाहिए।"

"वह छह सौ मांगता है।"

"इस वक्त तहवील में तुम्हारे पास कितना रुपया है ?"

"वही एक हज़ार है, जो चौधरियों के यहाँ से क़र्ज़ आया है।"

"तब तो दोनों का काम हो जाएगा। दे दो।"

"मगर अब्बा हुज़ूर, वह तो हम ने सरकारी लगान अदा करने के लिए क़र्ज़ लिया है।"

"उस पाक परवरदिगार की इनायत से हमें कर्ज़ा अभी मिलता है, दे दो, ये गर्ज़मन्द हैं। पीछे देखा जायगा।"

लेकिन छोटे मियाँ को बड़े मियाँ की यह उदारता अच्छी नहीं लगी। वे चुपचाप खड़े रहे। बड़े मियाँ ने नर्मी से कहा—"कोई सख़्त कलाम न कहना बेटे; ये गरीब गर्ज़मन्द हैं, हमारी परजा हैं, सुख-दुःख में हमारा ही तो आसरा तकते हैं। यह भी तो देखो।"

"लेकिन हुज़ूर, हम मालगुज़ारी कहाँ से अदा करेंगे। ये फ़िरंगी के प्यादे और अमीन तो बादशाह तक की छीछालेदर करने में दरेग़ नहीं करते हैं। कल ही वे आ धमकेंगे ड्योढ़ियों पर, और हुज़ूर की शान में बेअदबी करेंगे तो मैं उन्हें गोली से उड़ा दूँगा। पीछे चाहे जो कुछ हो।"

"लेकिन ऐसा होगा क्यों, मालगुज़ारी दे दी जायगी।"

"कहाँ से दे दी जायगी ?"

"चौधरी तो हमारे दोस्त हैं। वे क्या कभी नाहीं कर सकते हैं। वे भी खानदानी जमींदार हैं। इज्जतदार की इज्ज़त बचाना वे जानते हैं।"

"तो यह भी खूब रही। क़र्जा लिए जाइए, और दूसरों को बांटे जाइए। ये ही क्यों नहीं जाते चौधरी के पास ?"

"बेटा, वे ग़रीब आदमी हैं, मगर इज्ज़तदार तो हैं। फिर, यह तो गाँव की इज्ज़त का सवाल है। हमारे गाँव का आसामी ग़ैर के सामने हाथ पसारेगा तो हमारी भी इज्ज़त कहाँ रही।"

"लेकिन हुज़ूर, सारी रियासत तो रहन हो गई। जब कर्ज़ा भी न मिलेगा तब क्या होगा।"

"जो ख़ुदा को मंज़ूर होगा। जाओ, दे दो बेटे, बहुत देर से बैठे हैं वे। न जाने उनके घर पर क्या बीत रही होगी। पाजी बरकंदाज़ बड़े बद-तमीज़ होते हैं।"

छोटे मियाँ आहिस्ता से चले गए। मियाँ ने आराम से मसनद का सहारा ले कर पूरी तस्बीह पर उँगलियाँ फेरीं। इतने ही में ख़ादिम महमूद और लतीफ़ छिद्दू काछी को धकेलते हुए दीवानख़ाने में घुस आए। छिद्दू मियाँ के सामने पहुँचते ही ज़मीन में औंधा लेट गया।
मियाँ ने हैरत में आ कर कहा—"क्या हुआ, क्या हुआ ?"

"हुज़ूर इस ने रात-भर में आधा खेत साफ कर दिया। दो गट्ठर बाँधे हैं। न जाने कब से चोरी करता था। हाथ ही नहीं लगता था। आज रंगे हाथों पकड़ा गया है।"

मियाँ ने छिद्दू की ओर देख कर आहिस्ता से कहा—

"क्या तूने खेतों में नुकसान किया ?"

"हुज़ूर, ग़लती हो गई। कान पकड़ता हूँ माई-बाप।"

"जा भाग, अब ऐसा न करना।"

छिद्दू मियाँ को लम्बी-लम्बी सलामें झुकाते हुए चला गया।

दोनों ख़िदमतगार इस तरह शिकार को हाथ से बाहर जाते देख

खड़े के खड़े रह गए। मियाँ ने उनके मनोभावों को समझ कर कहा—"अरे म्या, भूखा ग़रीब है। नियत बदल गई। हमें खुदा और देगा। हज़रत ने कहा है—मेरे बन्दे के लाखों रास्ते हैं।"

दोनों खादिम चुपचाप सलाम कर और सिर झुका कर चल दिए।

: ३ :

बावर्चीख़ाना

मियाँ का बावर्चीख़ाना क्या था, लंगर था। जहाँ तीसरे पहर तक अग़लम-बग़लम जिसका जी चाहे खाना पा सकता था। सौ-पचास आदमी रोज़ ही मियाँ के बावर्चीख़ाने से खाना पाते थे। नौकर-चाकर, सिपाही-प्यादे, भिश्ती-महतर, कमेरे-टहलुए तो खाना पाते ही थे, फ़ालतू मटर-गश्ती लोग भी बहुत से आ जुटते थे। मियाँ की ओर से तो सभी को खाना लेने की छूट थी। फिर भी छुटभैये लोग, नौकर-चाकर, ख़ानसामा, बावर्ची अपनी टाँग अड़ाते ही थे।

मियाँ मसौती पक्के अहदी। अफ़ीम घोलना और पीनक में झूमना, मगर खाना लेने दोनों वक्त बावर्चीख़ाने पर हाज़िर। बावर्ची का नाम था हुसैनी। मोटा-ठिगना, एकदम सुर्मई रंग, मंहदी से रंगी हुई डाढ़ी। मोटे-मोटे लटकते हुए ओठ। नंगी कमर में गहरा उन्नाबी तहमद। मसौती ने बावर्चीख़ाने में पहुँच कर कहा—"मियाँ, ख़ाना दो?"

हुसैनी ने ज़रा करारी आवाज़ में कहा—"क्या काम किया है तुम ने आज, जो सुबह-सुबह सब से पहले चले आए खाना लेने?"

मसौती मियाँ ने बड़े इतमीनान से कहा—"अमा, हम ने मियाँ को लतीफ़े सुनाए हैं।" हुसैनी ने बड़बड़ाते हुए चार चपातियाँ और सालन उनकी हथेलियों पर रख दिया। इसी समय जमाल भिश्ती ने आ कर कहा—"म्या, खाना दो।"

"हाँ हाँ, हम ने मियाँ की मुर्ग़ियों को पानी पिलाया है।"

कुर्दू मियाँ आँखें मिचमिचाते आए, और हुसैनी को अस्सलाम वालेकुम् कहा। मोटे हुसैनी ने गर्दन हिला कर कहा—"आ गए खालू जान! कहो, आज क्या काम किया है?"

"छोटे मियाँ की जूतियाँ सीधी की हैं; लाओ झटपट दो खाना। खुदा की कसम, इस रियासत में सब हराम की खाते हैं, बस हम तुम कसाला करते हैं। जीते रहो भाई, जरा सालन ज़्यादा देना।"

ये हुज्जतें चलती रहतीं, मगर खाना सब को मिलता। ऐसा नहीं कि कभी-कदाच, एकाध दिन। नित्य बारहों मास—तीसों दिन।

: ४ :
बाप-बेटे

रात को जब मियाँ पलंग पर दराज़ हुए, तो उनका ख़ास ख़िदमतगार पीरू पलंग के पाँयते बैठ कर उनके पैर दबाने लगा। हमीद ने पेचवान ऊंचा कर रख दिया। मियाँ ने हुक्के में एक-दो क़श लिए और हमीद को हुक्म दिया—कि छोटे मियाँ जग रहे हों तो उन्हें ज़रा भेज दो।

बड़े मियाँ का सन्देश पा कर छोटे मियाँ ने आ कर पिता को आदाब किया। बड़े मियां ने हुक्के की नली मुँह से हटा कर कहा—"अहमद, कल अल-सुबह ही मुक्तेसर चलना है। तुम भी चले चलना ज़री।"

"मेरा वहाँ क्या काम है?"

"काम नहीं, चौधरी बहुत याद करते हैं तुम्हें। जब जब जाता हूँ, तभी पूछते हैं। भई, एक ही नेक ख़सलत रईस हैं।"

"लेकिन अब्बा हुज़ूर मुझे तो वहाँ जाते शर्म आती है।"

"शर्म किसलिए बेटे?"

"हम लोग उनके कर्ज़दार हैं, और इस बार भी आप इसी मक़सद से जा रहे हैं।"

"तो क्या हुआ। सूद उन्हें बराबर देते हैं और रियासत पर कर्ज़ा लेते हैं। फिर चौधरी ऐसे शरीफ़ हैं कि आँखें ऊँची कभी करते देखा नहीं। हमेशा 'बड़े भाई' कहते हैं। और उनकी साहबज़ादी, अरे हाँ; अहमद, वे खिलौने जो दिल्ली से आए थे, सब हैं न? उन्हें साथ रखना। देखना, मैं भूल न जाऊँ।"

"खिलौने किस लिए?"

"साहबज़ादी के लिए, चौधरी की लाड़ली पोती है। वाह, बड़ी सूरत और सीरत पाई है। मुझे वह दादाजी कहती है। और हाँ, एक टोकरा अमरूद और सफेदा, उम्दा चुन कर रख लेना। मियाँ पीरू, तुम चले जाओ, अभी इसी वक्त बाग़ में।"

पीरू सिर झुका कर चला गया। महमूद ने कुछ नाराज़ी के स्वर में कहा—"आप नौकरों के सामने भी.........।"

छोटे मियाँ पूरी बात न कह सके—बीच ही में बड़े मियाँ ने मीठे लहज़े में कहा—"पीरू तो नौकर नहीं है। घर का आदमी है। खैर, तो तैयार रहना। और हाँ, वह गुप्ती भी लेते चलना।"

"वह किस लिए?"

"चौधरी को नज़र करूँगा। उम्दा चीज़ है।"

"उम्दा चीज़ें घर में भी तो रहनी चाहिए।"

"मगर दोस्तों को सौगात भी तो उम्दा ही जानी चाहिए।"

"दोस्ती क्या, चौधरी समझेगा मियाँ कर्ज़े के लिए खुशामद कर रहे हैं।"

"तौबा, तौबा, ऐसा भी भला कहीं हो सकता है। चौधरी एक ही दाना आदमी हैं। चलो तो तुम, मिल कर खुश होओगे।"

छोटे मियाँ जब जाने लगे तो बड़े मियाँ ने टोक कर कहा—"अमा, जरा रघुवीर हलवाई के यहाँ कहला भेजना—मिठाई अभी भेज दे। कल ही मैंने कहला दिया था, तैयार रखी होगी। सुबह तो बहुत देर हो जायगी।"

"बहुत अच्छा अब्बा," कह कर छोटे मियाँ अपने कमरे में चले गए।

बड़े मियाँ देर तक हुक्का पीते रहे। पीरू मियाँ आकर फिर पैर दबाने लगे। पैर दबाते-दबाते पीरू ने कहा—"हुज़ूर बस, अब तो हज को चल ही दीजिए। आप के तुफ़ैल से गुलाम को भी ज़ियारत नसीब हो जाए।"

"मियाँ पीरू, हज की मैं दिली तमन्ना रखता हूँ। मगर दिल मसोस कर रह जाता हूँ। सोचता हूँ, साहबज़ादा घर-बार सम्हाल लें, उनकी शादी हो जाय तो बस, मैं चल ही दूँ।"

'सरकार, ये सब तो दुनिया के धन्धे हैं। चलते ही रहेंगे। फिर छोटे मियाँ, अल्लाह उनकी उम्र दराज़ करे, अब नादान नहीं हैं, ज़हीन तो बचपन ही से हैं, अब तो सरकार, आलिम हो गए हैं। अंग्रेज़ों की सोहबत में रह चुके हैं। साहब लोगों से फरफर अंग्रेज़ी बोलते हैं।"

"खुदा के फ़जल से सब क़ाबिल हैं, सब कारोबार सम्हाल कर मुझे छुट्टी दे सकते हैं। मगर अभी नादान हैं। काम में कुछ भी सहारा नहीं लगाते। बस, पढ़ने ही की धुन है।"

"तो पढ़ाई भी तो अब खात्मे पर है।"

"बस एक साल और है।"

"तो हुज़ूर, कोई एक अच्छी-सी लड़की देख कर शादी कर दीजिए। खुदा की क़सम, आँखें तरस रही हैं। न जाने कब ज़िन्दगी धोखा दे जाय। मियाँ की दुलहिन का चाँद-सा मुखड़ा और देख जाऊँ। क्या करूँ सरकार, जब से हुज़ूर मालकिन जन्नत-नशीन हुईं, घर काट खाने को आता है। बस, अब तो शहनाई बज ही जाए।"

"लेकिन छोटे मियाँ तो शादी के नाम से ही भड़कते हैं। फ़िरंगियों के साथ रह कर अब वे भी नई-नई आदतें सीख रहे हैं।"

"माशा अल्लाह, अभी उनकी उम्र ही क्या है सरकार। मगर उनकी ज़हनियत बहुत ऊँची है। फिर जब तक हुज़ूर का साया उनके सर पर है, उन्हें किस बात का ग़म है। इसी से शायद वे बेफ़िक्र हैं।"

"लेकिन भई, मैं भी तो अब पचासी को पार कर चुका। सुबह का चिराग़ हूँ।"

"तौवा, तौबा, यह क्या क़ल्मा ज़बान पर लाए हुजूर,। जी चाहता अपना मुँह पीट लूँ। हुज़ूर का दम ग़नीमत है।"

बड़े मियाँ हंस दिए। उन्होंने कहा—"तैयारी कर दो पीरू। ज़रा दिन गर्माए तो बस चल ही दें। तब तक छोटे मियाँ की तालीम भी ख़त्म हो जायगी।"

"बस तो चैत की ठहरी। ऐसा कौन बड़ा सफ़र है। एक इन फ़िरंगियों का कलेजा तो देखिये सरकार, सात समंदर पार से आते हैं, फिर भी चुस्त ओर चालाक। फ़िरंगियों के जहाज़ में चलेंगे हुजूर, किराया तो कुछ ज्यादा लगेगा, मुल आराम और हिफ़ाज़त का पूरा इन्तज़ाम होगा। लेकिन उनके जहाज तो सूरत से नहीं जाते हुज़ूर।"

"नहीं, बम्बई से जाते हैं। नया बन्दरगाह बसाया है उन्होंने।"

"सुना है, खूब गुलज़ार है।"

"हाँ तेज़ी से आबाद हो रहा है। फ़िरंगियों की क़ौम ही ऐसी है जहाँ-जहाँ जाती है, बहबूदी और चहल-पहल बढ़ती ही जाती है।"

"तो बस, इन गर्मियों की रही सरकार।"

"हाँ, हज़रत सलामत बादशाह से भी जिक्र करूँगा। उनका पैग़ाम भी आया था। लालकिले में बुलाया है। कल्यान की लड़की की शादी हो जाए तो जाऊँ। कहीं ऐसा न हो जाय कि नाक कटी हो। कल्यान है ज़रा बेफ़िकरा। तुम भी ख्याल रखना पीरू।"

"खुदा की शान है, सरकार। किस की मजाल है कि बड़ेगाँव पर उंगली उठाए, जहाँ आप जैसे दरियादिल मालिक हैं, जो भंगी की लड़की की शादी के लिए बादशाह की मुलाक़ात को मुल्तवी कर देते हैं। सुभान अल्लाह।"

पीरू ने झुक कर मियाँ के क़दमों पर बोसा लिया और आँसू

बहाता हुआ चला गया।

बड़े मियाँ देर तक पेचबान में कश लगाते रहे। फिर सो गए।

: ५ :

चौधरी

चौधरी बीमार थे। दिल्ली के कोई हकीम उनका इलाज कर रहे थे। उन्हें जब बड़े मियाँ की आमद की सूचना दी गई तो उन्होंने उन्हें अपने पलंग के पास ही बुलवा लिया। छोटे मियाँ को देख कर चौधरी खुश हो गए। साहेब-सलामत के बाद चौधरी ने कहा—

"आप को मैं याद ही कर रहा था। शायद आजकल में आदमी भेज कर बुलवाता।"

"तो आप ने तो ख़बर भी नहीं दी, इस क़दर तबियत ख़राब हो गई। अब इन्शा अल्ला ताला जल्द सेहत अच्छी हो जायगी, मगर अह-तियात शर्त है। हकीम साहेब क्या फ़र्माते हैं? आदमी तो लायक मालूम देते हैं।"

"जी हाँ, बीस सालों से मेरे यहाँ वही इलाज करते हैं। हज़रत बादशाह सलामत के भी ये ही तबीब हैं। हकीम नज़ीर अली साहेब।"

'जानता हूँ। आलिम आदमी हैं। सुना है बड़े नव्वाज़ हैं।"

"लेकिन वे इलाज ही तो कर सकते हैं, ज़िन्दगी में पैबन्द तो लगा नहीं सकते।"

"यह आप क्या फ़र्मा रहे हैं।"

"बस, यह मेरा आख़िरी वक्त है। इस गिर्दोनवा में सिर्फ एक आप मेरे हमदर्द हैं। बिटिया सयानी हो गई है, इसके हाथ पीले हो जाते तो इतमीनान से मरता। अब, भगवान् की मर्ज़ी।"

"लेकिन चौधरी, आप इस कदर पस्त-हिम्मत क्यों हो रहे हैं। आप जल्द अच्छे हो जायंगे।"

"ख़ैर, तो आप से मेरी एक आरज़ू है, आप मेरे बड़े भाई हैं। अब

इस घर की देख-भाल आप ही पर छोड़ता हूँ। नादान बच्चे हैं, आप ही को उनकी सरपरस्ती करनी होगी। सब भाई समझदार और दाना आदमी हैं, उम्मीद है ख़ानदान को दाग़ न लगने पायगा, सिर्फ़ आप का साया सर पर रहना चाहिए।"

"उस घर से भी ज़्यादा यही घर मेरा है चौधरी, आप किसी बात की फ़िक्र मत कीजिए। क्या साहेबज़ादी की बात कहीं लगी है?"

"अभी नहीं। उसे तो बस पढ़ने की ही धुन लग रही है। बेगम समरू जब से तशरीफ़ लाई हैं, उस का सिर फिर गया है। बेगम ने ही उसे पढ़ाने को एक अंग्रेज़ लेडी रखवा दी है। देखता हूँ उस की सोहबत में वह नई-नई बातें सीखती जा रही है। मगर बिना माँ की लड़की है। सात भाइयों में अकेली। सभी की आँखों का तारा। इसी से हम लोग कोई उस की तबियत के खिलाफ़ काम करना नहीं चाहत।"

"यही हाल छोटे मियाँ का है। हज़रत सलामत के कहने से इसे फ़िरंगियों के मिशन कालेज में दाखिल किया था। अब वह अंग्रेज़ी पढ़ कर नई दुनियाँ की नई बातें करता है।"

"भगवान् इस की उम्र बड़ी करे; तो हर्ज़ क्या है। नई दुनिया आने वाली है। नई दुनिया के आदमी भी नए ही होंगे। इन फ़िरंगियों को ही देख लो; हर बात नई है। अच्छा है, बच्चे नए ज़माने की रोशनी से वाकिफ हो जाएं। हमारा क्या, आज मरे—कल दूसरा दिन।"

इसी वक्त मंगला हाथ में दूध का गिलास ले कर कमरे में आ गई। सत्रह साल की स्वस्थ लड़की। हर अदा में अल्हड़पना, कुछ जवानी और कुछ बचपन का मिला-जुला रंग, सुर्ख़ नारंगी-से गाल, बड़ी-बड़ी आँखें, चाँदी से उज्ज्वल माथे पर खेलतीं हुई काली घूँघरवाली लटें। तिल के फूल सी कोमल नाक, और कुछ फूले हुए लाल ओंठ।

कमरे में बाहरी आदमियों को देख वह ठिठकी। और मुँह फेर कर लौट चली। पर चौधरी ने क्षीण स्वर में कहा—"चली आओ बेटी, चली आओ; दादा जान हैं, पहचाना नहीं।"

मंगला का मुँह मुस्कान से भर गया। उलट कर उस ने बड़े मियाँ की ओर देखा। पर तभी उस की नज़र छोटे मियाँ पर भी पड़ी। इससे उस का मुँह लाज से झुक कर लाल हो गया।

उस ने दूध का गिलास चौकी पर रख कर दोनों हाथ जोड़ कर बड़े मियाँ को प्रणाम किया ।

चौधरी ने कहा--' चाचा जान भी हैं, बेटी, उन्हें भी नमस्कार करो ।"

मंगला ने छोटे मियाँ को भी उसी तरह हाथ जोड़ कर नमस्कार किया । चौधरी ने कहा--"दो गिलास दूध और ले आ बेटी । दादा और चाचा के लिए ।"

मंगला तेज़ी से चली गई । दोनों हाथों में दो गिलास दूध भर कर ले आई, उस के साथ ही एक ख़िदमतगार बड़े से थाल में गुड़ के गिंदौड़े भर कर मियाँ के सामने रख गया । छोटे और बड़े मियाँ ने एक-एक गिंदौड़ा उठाया और दूध का गिलास हाथों में लिया । बड़े मियाँ ने फिर हंस कर कहा--"बिटिया, ज़रा देखो तो तुम्हारे लिए तुम्हारे चाचा दिल्ली से कैसे-कैसे खिलौने लाए हैं ।" उन्होंने बड़ी फुर्ती से खिलौनों का टोकरा खोला । मंगला ने उत्सुकता से एक बार खिलौनों के टोकरे की ओर और दूसरी बार छोटे मियाँ की ओर देखा । फिर उसके चेहरे पर मुस्कान फूट पड़ी । उस ने बड़े मियाँ से कहा--"आप ने तो मेरे लिए विलायती कुत्ता लाने का वायदा किया था ।

बड़े मियाँ हँस दिए, "किया तो था बेटी, अब इस बार जब अहमद दिल्ली से लौटेगा, तेरे लिए विलायती कुत्ता जरूर लायगा ।"

"अन्ना के पास कुत्ता है दादा जी, वह अंग्रेज़ी समझता है, मुल बोलता है कुत्ते की बोली ।"

चौधरी और बड़े मियाँ दोनों हँस पड़े । बड़े मियाँ ने कहा--"बेशक, बेशक, बिटिया, थोड़े दिनों में ये कुत्ते अंग्रेज़ी बोलने भी लगेंगे ।"

"दादा जी, मैं अन्ना के साथ अंग्रेज़ी बोलती हूँ । क्या आप अंग्रेज़ी समझ सकते हैं ?"

"नहीं बिटिया, मैं बूढ़ा आदमी भला अंग्रेज़ी क्या जानूं ।"

"दद्दा भी अंग्रेज़ी नहीं बोल सकते ।"

"कैसे बोल सकते हैं बेटी, वे भी तो मेरी तरह बूढ़े आदमी हैं ।"

"अन्ना कहती हैं, जो अंग्रेज़ी नहीं जानता वह गँवार आदमी है। साहब लोग उसे पसन्द नहीं करते।"

"अन्ना ठीक कहती हैं बेटी, इसी से मैं और तेरे दद्दा दोनों ही साहब लोगों से दूर ही दूर रहते हैं।"

"साहब लोग तो बहुत अच्छे होते हैं दादा जी।"

"बेशक, लेकिन हम बूढ़े आदमियों से साहब लोगों का मिलान नहीं खाता।"

"आप भी अंग्रेज़ी पढ़िए दादा जी, अन्ना आप को पढ़ा देंगी।"

"अच्छी बात है बिटिया, मैं और तुम्हारे दद्दा दोनों तुम्हारी अन्ना से पढ़ा करेंगे।"

"आप ने मेरी किताबें देखी हैं दादा जी ?"

"नहीं देखीं बेटी।"

"मैं अभी दिखाती हूँ।"

वह तेजी से चली गई। चौधरी ने आँखों की कोर में आये आँसू पी कर कहा—"बस दिन भर ऐसी ही बातें करती है। भले-बुरे का कुछ ज्ञान नहीं है, न जाने कैसे घर जाना पड़ेगा। इसी सोच में घुला जाता हूँ।"

"सोच न करो चौधरी, बड़ी समझदार बिटिया है। खुदा ने चाहा तो दोनों ख़ानदानों को रोशन करेगी।"

मंगला अपनी किताबें ले आई। वह बड़ी देर तक बड़े मियाँ को उस की तस्वीरें दिखाती रही। अन्त में बड़े मियाँ ने कहा—"अहमद इस बार दिल्ली से आयगा—तब तेरे लिए अंग्रेज़ी की बहुत-सी किताबें भी लायगा।" मंगला इस बात से प्रसन्न हो गई। उस ने हँसती हुई आँखों से अहमद मियाँ की ओर देखा—और वह अपनी किताबें समेट कर चल दी।

बड़े मियाँ ने कहा—"खुदा उस की उम्र दराज़ करे। चौधरी, ठाठ का लड़का ढूँढ़ना। अंग्रेज़ी पढ़ा-लिखा, हमारी साहबज़ादी को बिना

अंग्रेज़ी पढ़ा दूल्हा न जंचेगा। और शादी वह धूम की करना कि चौरासी गाँवों में धूम मच जाय।"

चौधरी के चेहरे पर उदासी छा गई। इन्होंने एक ठण्डी साँस खींच कर कहा—"अब इस की क्या उम्मीद है भाई साहब, जो घड़ी बीतती है, ग़नीमत है। ख़ैर, यह कहो—इस वक्त तकलीफ़ कैसे की ?"

"यों ही चला आया, बिटिया को देखने को दिल बेचैन था। छोटे मियाँ भी आप को सलाम करना चाहते थे।"

इतनी देर तक छोटे मियाँ की ओर तो दोनों बूढ़ों ने ध्यान ही नहीं दिया था। अब चौधरी ने कहा—"होनहार हैं, ज़हीन हैं, ईश्वर ने चाहा तो नेकनामी और इज्ज़त का वह रुतबा हासिल करेंगे कि जिस का नाम।" उन्होंने प्रेम से छोटे मियाँ की ओर देखा। उन का हाथ पकड़ कर अपने पलंग के पास खींच गोद में बैठा लिया। बड़े मियां ने कहा—"चौधरी चचा को मुकर्रिर सलाम करो बेटे।"

छोटे मियाँ ने अदब से खड़े हो कर चौधरी को सलाम किया। "जीते रहो, जीते रहो बेटे !" चौधरी ने प्रेम विभोर हो कर कहा। "हाँ, तो अब पढ़ाई कितनी बाकी है ?"

"बस एक साल की। फिर डिग्री मिल जायगी।"

"बहुत खुशी की बात है। तो अगले साल कोई अच्छी सी लड़की देख कर शादी तय कर डालो बड़े भाई। क्या कहीं से पैग़ाम आया है ?"

"बहुत—मगर मैंने मंज़ूर नहीं किया। तालीम खत्म हो जाय तो देखा जायगा। उधर मिर्ज़ा ज़ोर लगा रहे हैं कि हज चलो। हील-हवाला करते चार साल हो गए। अब सोचता हूँ ज़िन्दगी का क्या भरोसा, नदी किनारे का दरख्त हूँ। जाऊँ, हज कर आऊँ।"

"क्या हर्ज़ है, सवाब की बात है।"

"लेकिन मियाँ तो अभी कुछ समझते ही नहीं। बस किताबों में ही ध्यान रखते हैं।"

"क्यों न रखेंगे भला। हमारे बुज़ुर्गों ने कहा है पुस्तकें ही आदमी की सच्ची गुरु हैं।"

"हाँ, हाँ, लेकिन आदमी को दुनिया भी तो देखनी चाहिए।"

"सब देखेंगे। सब देखेंगे। लाख हो—पर अभी बच्चे ही तो हैं। फिर जब तक आप हैं, इन्हें क्या फिक्र ! ये तो खेलने-खाने के दिन हैं।"

"इसी से दिल कच्चा हो जाता है। सोचता हूँ जाऊँ या न जाऊँ।"

"ज़रूर जाओ बड़े भाई। मेरा भी इरादा है, जो इस बार चारपाई से उठ खड़ा हुआ तो ज़रूर चारधाम करूँगा।"

"खुदा करे, आप की मुराद बर आए।"

"अच्छा, अब काम की बात कहो।"

"काम की बात कुछ नहीं।" बड़े मियाँ की आँखें झेंप गईं। पर चौधरी ने ताड़ लिया। उन्होंने पूछा—"क्या मालगुज़ारी अदा हो गई ?"

"अभी कहाँ, वह रुपया जो आप के यहाँ से उस दिन गया था—दूसरे एक ज़रूरी काम में खर्च हो गया। लेकिन चौधरी, आप इस वक्त परेशान न हों। कुछ इन्तज़ाम हो ही जायगा। अभी तो आप अपनी सेहत पर ध्यान दीजिए।"

लेकिन चौधरी ने इस का कोई जवाब नहीं दिया। थोड़ी देर इधर-उधर की बातें हुईं। बहुत देर तक चौधरी छोटे मियाँ से दिल्ली—और वहाँ के फ़िरंगियों के हाल-चाल पूछते रहे।

खाने का वक्त हुआ। दोनों ने खाना खाया।

दीवानखाने में पलंग लग गए और दोनों मियाँ लेट कर आराम करने लगे।

तीसरे पहर जब वे चौधरी के पलंग के पास रुखसत लेने पहुँचे, तो चौधरी ने एक कागज़ उनके हाथ में थमा दिया। बड़े मियाँ ने देखा—तमाम कर्जे की भर पाई की चुकता रसीद थी। बड़े मियाँ ने आश्चर्य-चकित हो कर चौधरी की ओर देख कर कहा—

"यह क्या चौधरी ?"

"बस, दुलखो मत बड़े भाई। साहबज़ादे पहली बार मेरी ड्योढ़ी पर आए हैं। यह उन की नज़र है।"

"लेकिन यह तो तमाम कर्ज़े की भरपाई की रसीद है।"

"तो क्या हुआ। आप की सख़ावत ने तो सारी रियासत को रहन रख दिया। अब छोटे मियाँ को मेरी तरफ से यह छोटा-सा नज़राना है।"

"यह न हो सकेगा चौधरी, यह भी कोई इन्साफ़ है। तौबा, तौबा!" उन्होंने काग़ज़ चौधरी के पलंग पर फेंक कर दोनों हाथों से कान पकड़ लिए। चौधरी की आँखों में पानी भर आया। उन्होने कहा—"बड़े भाई, मेरे साथ इस क़दर सख़्ती! ऐसी बेरुखी! आप तो कभी ऐसे न थे। भला सोचो तो—हमारे आप के बीच कोई फर्क है। मैंने तो कभी उस घर को अपने घर से अलग नहीं समझा। जैसे मुझे अपने बच्चों का ख़्याल है—वैसे ही छोटे मियाँ का भी है। फिर यह मेरा आखिरी वक्त है। छोटे मियाँ को मैं कैसे छँछे हाथ रहने दे सकता हूँ।"

"तो जमीदारी पर ही क्या मौसूफ है। खुदा ने चाहा तो उसे कम्पनी बहादुर की कोई अच्छी सी नौकरी मिल जायगी।"

"मिल जायगी तो अच्छा ही है। मगर बाप-दादों की जायदाद से भी तो मियाँ को बरतरफ़ नहीं किया जा सकता।"

"कौन बरतरफ़ करता है, चौधरी; तुम्हारा रुपया मय सूद चुकता करके जमीदारी छूट जायगी—तब वही तो मालिक होगा।"

"अच्छी बात है, रसीद तो आप रख लीजिए। जब रुपया हो, उसे मेरी तरफ से छोटे मियाँ की शादी में दुलहिन को दहेज दे दीजिएगा।"

"यह तो वही बात हुई।"

"तो दूसरी बात कहाँ से हो सकती है।"

"खैर, तो आप जानिए—और छोटे मियाँ, मैं तो मंजूर नहीं कर सकता।"

"तो छोटे मियाँ को हुक्म दे दीजिए।"

"नहीं, हुक्म भी नहीं दे सकता।"

"अच्छा साहेबजादे, यह काग़ज़ तुम रख लो।"

"चाचा जान, मैं अर्ज़ करता हूँ। फिरंगियों ने मुझे एक नया सबक़ सिखाया है, उम्मीद है आप उसे पसन्द करेंगे।"

"कौन-सा सबक़ है बेटे ?"

"कि अपने पसीने की कमाई खाओ।"

"अच्छा सबक़ है।"

"इसी से आप इसरार न कीजिए। और यह रसीद अपने ही पास रखिए। अब्बा हुज़ूर आपका रुपया ब्याज समेत चुकता कर देंगे, तो यह रसीद ले लेंगे।"

"तो बेटे, तुम अपने इस बूढ़े चचा की इतनी-सी बात टालते हो ?"

"चाचा जान, यह उसूल की बात है।"

"बेटे, तुम जानते हो, मैं बूढ़ा आदमी हूँ, कमजोर हूँ, बीमार हूँ, मेरा दिल टूट जायगा। अगर तुम यह काग़ज़ न लोगे।"

चौधरी की आँखों से आँसू बह चले। बड़े मियाँ न कहा—

"चौधरी, छोटी रक़म नहीं है, चालीस हज़ार से ऊपर ही की रक़म होगी। आखिर खुदा के सामने मैं क्या जवाब दूँगा।"

"तो तुम ने मेरा दिल तोड़ दिया बड़े भाई," चौधरी ने कातर कण्ठ से कहा।

बड़े मियाँ की भी आँखें भीग गईं, उन्होंने कहा—"खैर, एक वादा करें तो मैं मियाँ को रसीद लेने की इजाज़त दे सकता हूँ।"

"कैसा वादा ?"

"कि जब भी रुपये का बंदोबस्त हो जाए, रुपया आप ले लेंगे।"

"खैर यही सही। अच्छा यह सम्हालिए।"

"यह क्या ?"

"यह दो तोड़े हैं, मालगुज़ारी भी अदा कर दीजिए और हज भी कर आइए। कम हो तो खबर भेज दीजिए, रुपया और पहुँच जाएगा।"

"लेकिन……"

"लेकिन क्या बड़े भाई ।" उन्होंने खिदमतगार को पुकार कर कहा—तोड़े रथ में रख आ। और दो सवार साथ जा कर बड़े मियाँ को पहुँचा आएं। "लो बेटे, सम्हाल कर रखो।" उन्होंने रसीद छोटे मियाँ के हाथ में दे दी। तीनों ही आदमियों की आँखें गीली थीं। बड़ी देर सन्नाटा रहा। छोटे मियाँ ने कहा—"अब्बा हुज़ूर, यह गुप्ती आप चाचा जान को नज़र करने लाए थे न।"

"बेटे, तुम्हीं दे दो, मुझे तो शर्म लगती है। भला इस फरिश्ते को मैं क्या नज़र कर सकता हूँ। छोटे मियाँ ने पिता के हाथ से गुप्ती ले कर चौधरी के हाथ में थमा दी और कहा—"चचा जान, अब्बा हुज़ूर इसे आप ही के लिए लाए थे।"

चौधरी ने हँस कर कहा—"बड़ी नायाब चीज़ है बेटे, इसे हर वक्त हाथ में रखूँगा। कहा भी तो है, बूढ़े को लाठी का सहारा।"

वे उसी गुप्ती पर शरीर का ज़ोर डाल कर उठ खड़े हुए। छोटे मियाँ को छाती से लगा कर प्यार किया। फिर बड़े मियाँ से बग़लगीर हो कर मिले और विदा किया। चलते-चलते पुकार कर कहा—"हज से मेरे लिए कोई उम्दा सौगात लाना बड़े भाई।"

बड़े मियाँ के खून की प्रत्येक बूँद आँसू बन रही थी। मुँह से उनके बोली न फूटी। उन्होंने सिर्फ ज़रा ठिठक कर सिर झुका दिया। और छोटे मियाँ के कंधे पर सहारा दिए रथ की ओर बढ़े।

: ६ :
शिकार का दाव

इसी समय सुरेन्द्रपाल ने पीछे से पुकारा—"यह क्या ताया जी, आप जा रहे हैं, बिना ही मेरी इजाज़त लिए।"

बड़े मियाँ रथ में चढ़ते-चढ़ते ठिठक गए, उन्होंने कहा—"बड़ी ग़लती हुई बेटा। लेकिन अब इजाज़त दे दो। सूरज छिप रहा है और सर्दी की रात है, पहुँचते-पहुँचते अँधेरा हो जायगा।"

"आपको इजाज़त दे सकता हूँ, मगर भाई साहेब को नहीं।"

"ये फिर आ जाएँगे, अभी तो छुट्टियाँ हैं।"

"यह नहीं हो सकता। मैं तो आज इन्हीं के लिए तमाम दिन परेशान रहा हूँ।"

"परेशान क्यों रहे बेटे ?"

"शिकार के बन्दोबस्त में। कछार में एक नया शेर आया है। कल ही कई आसामियाँ शिकायत के लिए आई थी। आदमखोर है। उधर गाँवों में उसने बहुत नुक्सान किया है। बस सुबह जब आप आए तो मैंने तय कर लिया कि भाईसाहेब और मैं शिकार करेंगे उसका। अब सब बंदोबस्त हो गया है। और आप खिसक रहे हैं चुपचाप। यह नहीं हो सकेगा।" उसने आगे बढ़ कर छोटे मियाँ का हाथ पकड़ लिया। शेर के शिकार की बात सुन कर छोटे मियाँ का कलेजा उछलने लगा। कभी शेर का शिकार नहीं किया था। यों बन्दूक का निशाना अच्छा लगाते थे। कभी-कभी शिकार भी करते थे। मगर मुर्गाबियों और हिरनों का। सुन कर खुश हो गऐ। उन्होंने मुस्करा कर बड़े मियाँ की ओर देखा।

बड़े मियाँ ने कहा—"तो बेटे, रह जाओ दो दिन, भाई के पास।"

बड़े मियाँ चले गए। छोटे मियाँ को खींच कर सुरेन्द्रपाल अपने कमरे में ले गए। दोनों की समान आयु थी। रात-भर में दोनों तरुण पक्के दोस्त हो गए। साथ खाया और साथ सोए। दूसरे दिन शिकार की तैयारियाँ हुईं। शिकारी इकट्ठे हुए। बन्दूकें लैस की गईं। हाका बैठाया गया। मचान बाँधे गए। और शाम होते-होते दोनों दोस्त मचान पर जा बैठे। सुरेन्द्रपाल कई शेर मार चुका था। उसका हौसला बढ़ा हुआ था। पर छोटे मियाँ के लिए पहला अवसर था। उत्सुकता और घबराहट दोनों ही उसके मन में थीं। सुरेन्द्रपाल ने कहा—

"शर्त बदो।"

"कैसी शर्त ?"

"शेर अगर तुम्हारी गोली से मरे तो मैं यह अंगूठी तुम्हें नज़र

करूँगा। लेकिन यदि मेरी गोली सर हुई तो बोलो तुम मुझे क्या दोगे ।" सुरेन्द्र ने हंस कर कहा ।

"शर्त की क्या ज़रूरत है। गोली तुम्हीं सर करना। मैं महज़ तमाशा देखूँगा।"

"वाह, यह शिकार का दस्तूर नहीं। तुम मेहमान हो, पहली गोली तुम्हें ही चलानी होगी।"

"लेकिन मेरे पास तो अंगूठी है ही नहीं।"

"तो और कुछ दाव पर लगाओ।"

छोटे मियाँ ने हंस कर कहा—"अच्छी बात है। मेरे पास एक चीज़ है, अगर शेर तुम्हारी गोली से मरा तो, मैं वह चीज़ तुम्हें नज़र करूँगा।"

"वह क्या चीज़ है, दिखाओ पहले।"

"नहीं, दिखाऊँगा नहीं। छोटी-सी चीज़ है। मुमकिन है तुम्हारी अंगूठी के बराबर कीमती न हो। लेकिन तुम्हें वही कबूल करनी होगी।"

"वाह, नज़र की चीज़ की भी क़ीमत आँकी जाती है भाई जान। तुम एक तिनका ही उठा कर दे देना।"

"तब शर्त पक्की रही। पहले गोली कौन दागेगा।"

"तुम ?"

"और यदि गोली शेर को न लगी। और शिकार भाग गया, तो बिगड़ोगे तो नहीं।"

"भाग कर शिकार कहाँ जायगा। देखना बीच खेत मारेंगे। लो होशियार हो जाओ।"

"दोनों दोस्त हरबे-हथियार से लैस हो बैठे। हाका हुआ। शेर की दहाड़ सुन कर छोटे मियाँ के हाथ पाँव फूल गए, उनसे निशाना नहीं सधा, गोली ख़ता कर गई। सुरेन्द्र पाल की गोली ने शेर का काम तमाम कर दिया। खुशी-खुशी दोनों दोस्त मंच से उतरे। शिकार की नाप तौल की। घर आए। जब छोटे मियाँ चलने लगे तो उन्होंने कहा—"शर्त का नज़राना हाजिर करता हूँ।"

"अरे, मैं तो भूल ही गया था। अब जाने दो भाई जान। हक़ीक़त में मैं अपनी यह अंगूठी तुम्हें अपनी दोस्ती की यादगार के तौर पर देना चाहता था। शिकार की शर्त का महज़ बहाना था।"

"यह न होगा। शर्त पूरी करना फर्ज़ है। यह लीजिए।"

उन्होंने जेब के भीतर हाथ डाल वह रसीद निकाली और सुरेन्द्र के हाथ पर रख दी।

"यह क्या है ?"

"वही चीज़, जो मैंने तुम्हें देने का क़सद किया था।"

सुरेन्द्र पाल ने कहा—"यह तो महज़ एक काग़ज़ का टुकड़ा है।"

"तिनका ही सही। तुम्हीं ने कहा था कि नज़राने की क़ीमत नहीं आंकी जा सकती।"

सुरेन्द्रपाल को इस रसीद की बाबत कुछ भी पता न था। यह वास्तव में चालीस हज़ार कर्ज़े की भरपाई की वही रसीद थी, जो चौधरी ने छोटे मियाँ को दे दी थी। सुरेन्द्रपाल ने न उसे देखा, न पढ़ा। न उसने इस बात पर विचार किया कि यह क्या है। उसने सोचा कि इस चिट्ठी में प्यार मुहब्बत की दो बातें होंगी। उन्होंने हंस कर वह कागज़ जेब में रख लिया। फिर कहा—"यह अंगूठी हमारी दोस्ती और इस मुलाकात के सिलसिले में तुम्हें रखनी होगी।"

"अंगूठी नहीं। देते ही हो तो वह खाल दे देना। वह मेरे पास तुम्हारी निशानी रहेगी।"

"खाल तैयार करा कर भिजवा दूंगा। लेकिन अंगूठी भी ले लो।"

"बस इसरार न करो दोस्त। खाल ही लूंगा।"

और वह सुरेन्द्रपाल से बग़लगीर होकर मिले और चले गए। उस रसीद की बात सुरेन्द्रपाल एक बारगी ही भूल गए। कई दिन बाद उन्हें ध्यान आया। उन्होंने उसे पढ़ा तो कुछ मतलब समझा, कुछ नहीं समझा। वे बड़े भाई के पास गए और सब माजरा कह कर वह रसीद उनके हाथ पर रख दी।

रामपालसिंह कों रसीद की बात मालूम हो चुकी थी। यह बात उन्हें अच्छी नहीं लगी थी। पर पिता के सामने बोलने की उनकी जुर्रत न हुई थी। अब अकस्मात् अनायास ही वह रसीद हाथ में आई देख वह हैरान हो गए। उन्हें ऐसा लगा—जैसे चालीस हज़ार रुपया पड़ा पा गया हो। उन्होंने रसीद चुपके से अपनी जेब में रख ली। और कहा—"सुरेन्द्र, दद्दा से इस बात की चर्चा न करना। किसी से भी न कहना।"

सुरेन्द्र ने बड़े भाई की बात गाँठ बाँध ली। और शीघ्र ही वह तरुण उस महत्वपूर्ण काग़ज़ की बात एक बारगी ही भूल गया।

: ७ :

मेहतर की बेटी का ब्याह

कल्यान मेहतर आस-पास के गाँवों के भंगियों का चौधरी और सरपंच था। उसकी बड़ी इज्जत थी। इसलिए उसकी लड़की के ब्याह की धूम भी साधारण न थी। चालीस गाँव के भंगियों को न्योता गया था। बारात आने वाली थी लखनऊ से। बेटे का बाप भी नवाब साहब का मेहतर था। उसका भी बड़ा रुआब दबदबा था। बारात में वह लखनऊ के तायफे, बनारस के भांड़, जौनपुर की आतिशबाजी और मिर्ज़ापुर के कव्वाल लाया था। बनारस की मशहूर शहनाई भी बारात में थी। बारात में चार सौ भंगी आए थे। सब एक से एक वज़ादार, बड़े-बड़े कड़े हाथों में पहने, भारी-भारी कण्ठे गले में, और बाले कानों में पहने, बगुले के पर जैसे अंगरखे और मिर्ज़ई डांटे आए थे। बारात बहलियों, घोड़ों और मझोलियों पर आई थी। गाँव के बाहर बारात को जनवासा दिया गया था। जनवासा आम की संघन अमराइयों में था। अम्बरी तमाखू और उपलों का ढेर जमा था। दर्जनों हुक्के और नहचे गुड़गुड़ा रहे थे। बड़े-बड़े चौधरी हुक्का गुड़गुड़ाते हुए ज़ोर-ज़ोर से ब्रादरी के कज़िए चुका रहे थे। शहनाई बज रही थी। रोशन चौकी की बहार थी। एक ओर लखनऊ के तायफे अपनी ठुमरियों की ठमक से गाँव वालों के

कलेजे निकाल रहे थे, दूसरी ओर बनारस के भांड़ हँसाते-हँसाते लोगों को लहालोट कर रहे थे। शहनाई वाले अपनी ही तान में ऐंठे जा रहे थे। इधर कल्यान ने भी हापुड़ की डेरेदार डोमनियाँ और नटनियाँ बुलाई थीं—वे पंचम तार पर जो कजरी और बिरहा अलापतीं, तो गाँव वालों के कलेजे उछल कर रह जाते थे। इधर यह धूम-धाम, उधर घोड़ों की हिनहिनाहट, ऊँटों की वलवलाहट, घसियारनों और कोचवानों का जमघट, सब मिल कर खासी धूम मची हुई थी। आस-पास के गाँवों से बहुत लोग इस बारात को देखने आए थे। ब्याह के मण्डप के पास जाजम पर बड़े मियाँ कमर में शाल लपेटे, भारी मंडील सिर पर लगाए, रुपयों की भरी थैली आगे रखे बैठे सब नेग चुका रहे थे। वे प्रत्येक मेहतर से चौधरी-भाई, सरदार, कह कर बोल रहे थे। उनका व्यवहार ऐसा था मानो इन्हीं की बेटी का ब्याह है।

कल्यान बफरे शेर की तरह दहाड़ता हुआ आया, और आते ही बड़े मियां के सामने पैर फैला कर बैठ गया। उसने कहा—"सरकार, चाहें मारें चाहें बख्शें, मगर मैं नखलऊ के नकटे को बेटी नहीं देने का।"

"क्यों क्या हुआ, इस क़दर क्यों बिगड़ रहे हो?"

"बस हुज़ूर, मर्द का क़ौल है। बस हुक्म दीजिए—बज्ज़ातों को गाँव से निकाल बाहर किया जाय।"

"आखिर बात क्या है, कुछ कहोगे भी।"

"हुज़ूर, छोटे मुँह बड़ी बात। कहता है, समधी की मिलनी सरकार से करूँगा। सरकार जब यहाँ बैठे हैं, तो वे ही लड़की के बाप हैं।"

"तो झूठ क्या है, लड़की का बाप मैं ही तो हूँ। तुम्हारी ही क्या, गाँव भर की लड़कियों का बाप मैं ही हूँ।"

"आप तो सरकार हमारे भी माई-बाप हैं, सरकार तो परमेसुर के रूप हैं मेहतर की जाजम पर आकर आप बैठ गए। पर उस साले भंगी के बच्चे की यह जुर्रत—कि सरकार से समधी की मिलनी करेगा।"

'बस, या और भी कुछ?"

"साला चोट्टा, नखलऊ जाकर सारी बिरादरी में शेखी बघारेगा, कि बड़े गाँव की बेटी ब्याह लाया हूँ। सरकार ने खुद समधी की मिलनी दी है।"

"वह कहाँ है?"

"वह क्या गुड़गुड़ी मुँह से लगाए मुँह फुलाए बैठा है चोट्टा।"

"तो उसे यहाँ बुलाओ कल्यान मियाँ।"

"हुजूर, वह आप के सामने बेअदबी कर बैठेगा तो नाहक खून हो जायगा। बस हुक्म दीजिए—झाड़ू मार कर गाँव से बाहर करूँ।"

"उसे यहाँ बुलाओ।"

"लेकिन सरकार.........।"

"हमारा हुक्म तुमने सुना नहीं कल्यान।"

कल्यान का और साहस नहीं हुआ। जा कर समधी को बुला लाया। उसके आते ही बड़े मियाँ दुशाला छोड़ कर खड़े हो गए। दोनों हाथ फैला कर कहने लगे—"आओ चौधरी, मिलनी कर लें। यह मैं अपनी बेटी तुम्हें दे रहा हूँ, भूलना नहीं।"

लखनऊ का मेहतर मूछों में हंसता हुआ आगे बढ़ा। सारे भंगी दंग रह गए। चारों ओर से भीड़ आ-जुटी। कल्यान मोटा लठ्ठ लेकर मियाँ और लखनऊ वाले के बीच खड़ा हो गया, उसने ज़ोर से चिल्लाकर कहा—'नहीं हो सकता, जान से मार ही डालूँगा चौधरी, जो आगे क़दम बढ़ाया। अबे भंगी के बच्चे, तेरी यह मजाल, कि तू हमारे बादशाह से मिलनी लेगा, जो लाल किले के शहनशाहे हिन्द के रिश्तेदार हैं।" लेकिन लखनऊ का चौधरी शान्त शिष्ट और दृढ़ खड़ा था, अचल-अडिग, ओठों में मुस्कान भरे हुए। चारों और तमाशाइयों की भीड़ जमा होती जा रही थी। भांड-भडेलों के तमाशे बन्द हो गए, रंडियों के मुजरों में सन्नाटा छा गया, जिसने सुना दौड़ पड़ा। कभी न देखा न सुना दृश्य सामने था, जाजम पर चौरासी बरस के बड़े मियाँ, जिन की रियासत और बड़प्पन की धूम दिल्ली के लाल किले तक थी, जो बाईस गांवों का राजा था, शान्त प्रसन्न मुद्रा से दोनों बांह पसारे खड़ा था, मेहतर से बग़लग़ीर होने के लिए। उन्होंने

प्रसन्न मुद्रा से कहा—"आओ चौधरी, आगे बढ़ो। और तुम— कल्यान, मेरे पास आओ। लाठी फेंक दो।"

कल्यान ने नीचे सिर झुका लिया। वह चुपचाप चौधरी के पीछे आ खड़ा हुआ। सहमते-सहमते लखनऊ का मेहतर आगे बढ़ा—और बड़े मियाँ ने दोनों बाहों में उसे बांध लिया। अपने हाथ से उसके कंधे पर दुशाला डालते हुए कहा—"कल्यान. ये दोनों तोड़े अपने हाथ से मिलनी में समधी को दे दो।"

"दुहाई सरकार, ऐसा तो न देखा न सुना।"

लखनऊ वाला भंगी भी दुशाला कन्धे से उतार कर बड़े मियाँ के क़दमों पर लोट गया। उसने कहा, "बेशक कल्यान, ऐसा न कभी किसीने सुना, न देखा, न किसी ने किया। परन्तु याद रखना, यह ग़रीब परवरी मैं चौहद्दी में मशहूर कर दूंगा। और यह दुशाला मेरे खानदान में हमेशा पूजा जायगा। आगे आने वाली पीढ़ियां इस का साखा गाएँगी।"

"अरे निहाल हो गया नकटे, ले ये तोड़े सम्हाल।"

"इन्हें लुटादे ग़रीबों को, मेरे सरकार के क़दमों पर निछावर कर के। मैं रुपयों का भूखा नहीं, मुझे मिलनी देकर मेरी सात पुश्तों को सरकार ने तार दिया। अब लोग साखे गाएँगे और कहानियां कहेंगे, कि बड़े गाँव के बादशाह ने अपने गाँव के भंगी की बेटी के ब्याह में भंगी को समधी की मिलनी दी थी। लूट लो यारो, ये रुपए, और यह भी लो। उसने फेंट से अशर्फियों का तोड़ा निकाल कर बखेर दिया, गले का सोने का कण्ठा तोड़ कर उसके दाने हवा में उछाल दिए, फिर वह उन्मत की भाँति हो-हो करके हंसने और नाचने लगा। देखते-देखते रुपए-अशर्फियों और सोने की लूट मच गई। बड़े मियाँ की सखावत, बड़प्पन और दरिया दिल्ली की धूम मच गई, तवायफों ने उसी वक्त क़सीदे कहे, भाड़ों ने नई नक़ले कीं और शायरों ने नए बंधेज गाए।

कल्यान की लड़की का ब्याह हो गया। बड़े मियाँ धीरे-धीरे लाठी का सहारा लिए अपनी गढ़ी में लौट आए।

सोना और खून

द्वितीय खण्ड

: १ :

काफ़ला

पिछले परिच्छेदों में जिन घटनाओं का वर्णन है, उस से कोई पैंतीस बरस पहले, विक्रम सम्वत् १८६२ के बैसाख की चतुर्दशी या पूर्णिमा के दिन, तीन सरदारों ने मुक्तेसर के सिवानों पर आ कर अपने घोड़े रोके। सन्ध्या होने में अब विलम्ब नहीं था। दिन भर तप कर इस समय सूरज की धूप पीली पड़ गई थी। तीन सरदारों में से दो बलिष्ठ प्रौढ़ पुरुष थे। तीसरा तरुण था। तीनों हथियारों से लैस थे। घोड़े उन के पानीदार जानवर थे। पर वे बुरी तरह थक गए थे। सवारों के चेहरों और वस्त्रों पर धूल-गर्द भरी थी।

सरदारों के साथ भारी काफ़ला था। काफ़ले में कोई पचास साठ वाहन थे। वाहनों में ऊँट, घोड़े-रथ, बहल और छकड़े थे। कुछ लोग पैदल थे। ज़नानी सवारियाँ रथों पर और बहलों पर थीं। मर्द घोड़ों पर, ऊँटों पर और टट्टुओं पर थे। कुछ टट्टुओं और गधों पर सामान लदा था। कुछ सामान छकड़ों पर था। पैदल जन उन्हें घेर कर चल रहे थे। सब मिला कर काफ़ले में दो सौ के लगभग स्त्री-पुरुष होंगे। सब थक रहे थे। सब के कपड़े-लत्ते धूल से भर गए थे।

तीनों सरदार काफ़ले के आगे-आगे चल रहे थे। काफ़ला उन से कोई पचास गज के फ़ासले पर था। सरदारों के रुकने पर सारा काफ़ला रुक गया।

सरदारों में जो सब से ऊँची रास वाले घोड़े पर सवार प्रौढ़ पुरुष था, उस की घनी काली डाढ़ी थी। सतेज आँखें थीं। डाढ़ी को उसने ढाठे से बाँध कर सिर पर एक बड़ी सी सफ़ेद पगड़ी बाँध रखी थी। वह लम्बे डौल-डौल का बलिष्ठ पुरुष था। उस का वक्ष चौड़ा था और उस की भाव-भंगिमा में हुकूमत और प्रभुत्व का आभास प्रकट होता था। उस की अवस्था चालीस के लगभग होगी। रंग उस का ताँबे के समान था।

दूसरे पुरुष की भी आयु इतनी ही थी। परन्तु उस की डाढ़ी मुँडी हुई और मूँछें तराशी हुई थीं। उस ने एक सादा बगलबन्दी पहनी थी, जिस में एक कमरबन्द लपेटा हुआ था। उसके सिर पर भी सफ़ेद पगड़ी थी। तथा माथे पर तिलक की छाप थी। यद्यपि यह पुरुष भी शरीर का बलिष्ठ था और उस ने कमर में दो-दो तलवारें बाँध रखी थीं। फिर भी स्पष्ट था कि वह ब्राह्मण है।

प्रथम पुरुष ने घोड़ा रोकते हुए एक पैनी दृष्टि अपने चारों ओर के वातावरण पर डाली। फिर अपने साथी की ओर देखकर कहा—"अच्छा स्थान है, यहीं डेरा डाला जाए।" फिर उसन तरुण को पुकार कर कहा—"रामपाल, ज़रा देखो तो—यहाँ पास कहीं जल का ठिकाना हो, तो यहीं मुक़ाम किया जाए। बस्ती के निकट जाने से तो बड़ी दिक्क़त होगी। वह सामने वाला बाग़ और उसके बग़ल वाला मैदान कैसा है। उस ने अपनी दाहिनी ओर के एक सघन बगीचे की ओर हाथ फैला दिया। बाग़ बहुत बड़ा, बीघों में फैला हुआ था। और उसके सामने बहुत भारी मैदान था।

जिस तरुण को रामपाल कह कर सम्बोधन किया गया था, उसकी आयु बाईस बरस की थी। छरहरा बदन, पानीदार आँखें, चीते सी कमर, और सुर्ख़ अनार सा चेहरा, उस पर भीगती हुई मसें। चुस्त पायजामा, पर गुलाबी अंगरखी। जिस पर केसरी फैंट में पेशकज और क़टार खुसी हुई। हाथ में तोड़ेदार बंदूक। कमर में दुहरी तलवार।

तरुण घोड़ा बढ़ा कर उधर गया, उसने एक चक्कर बाग़ का लगाया।

फिर उसने मैदान की जाँच की, तब लौट कर कहा—"बहुत अच्छी जगह है दद्दा। तालाब भी है, कुआँ भी है। कुटी के पास शिवाला भी है। जगह साफ़-सुथरी है।"

"तो भाया, तू सवारियों के डेरे का ठौर ठीक कर।"

इतना कह कर—उस पुरुष ने अपना घोड़ा आगे बढ़ाया। उस का साथी भी साथ-साथ चला। तरुण पीछे काफ़ले की ओर लौट गया।

दोनों पुरुष घोड़े से उतर पड़े। एक सघन आम के पेड़ के नीचे पहुँच कर उन्होंने अपने वस्त्रों की धूल झाड़ी। घोड़ों का चारजामा खोल कर उन्हें छोड़ दिया। वे हरी-हरी घास चरने लगे। इतने ही में काफ़ला भी वहाँ पहुँच गया।

सब ने यथा स्थान डेरा डाला। स्त्रियों का पड़ाव बीच में डाला गया।

आम की छाया में जगह साफ़ करके जाजम बिछा दी गई। दोनों सरदार जाजम पर बैठ गए। ख़िदमतगार ने हुक्का भर कर आगे ला धरा। सरदार हुक्का पीने और साथ ही धीरे-धीरे बातें करने लगे। तरुण घोड़ा ख़िदमतगार को सौंप, सब काफ़ले को यथा स्थान डेरा देने में व्यस्त हो गया। काफ़ले के लोग भी अपना-अपना ठीया डाल—अपने-अपने काम में लग गए। कोई घोड़े की दलाई-मलाई में लगे, कोई खाने-पीने की खटपट में। कोई दिशा-मैदान में गए। अन्धेरा होते ही मशालें जला ली गईं। और वह स्थान एक छोटे-से गाँव का अस्थायी रूप धारण कर गया।

: २ :

गढ़-मुक्तेश्वर

गढ़-मुक्तेश्वर ज़िला मेरठ में गंगा का प्रसिद्ध घाट और उत्तरी भारत का प्रमुख तीर्थ स्थल है। प्रति वर्ष कार्तिकी पूर्णिमा पर गंगा-स्नानार्थियों का वहाँ लक्खी मेला लगता है। गढ़-मुक्तेश्वर का यह क़स्बा यद्यपि अब बिल्कुल खस्ता हाल और उजाड़ हो गया है, परन्तु वह मेला अब भी

वहाँ बड़ी धूमधाम से हर साल होता है। लाखों नरनारी कार्तिक पूर्णिमा पर गंगास्नान करते हैं। उस समय यहाँ आस-पास के देहातों का एक प्रभावशाली साँस्कृतिक प्रदर्शन होता है।

कहते हैं, इस तीर्थ का प्राचीन नाम शिववल्लभपुर था। इस क्षेत्र में एक प्राचीन शिवलिंग भी है, उसका नाम मुक्तेश्वर है। प्राचीनकाल में अनेक ऋषि-मुनियों ने इस स्थान पर तपश्चर्या की थी, अनेक राजाओं ने यज्ञ-सत्र किए थे। प्रसिद्ध है कि महानृपति नृग यहाँ ही शापवश गिरगिट की योनि में अंधकूप में रहे थे। आज भी वह कूप नृग का कुआँ यहाँ मौजूद है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी इस स्थान का बहुत महत्त्व है। प्रबल पराक्रमी हूणों को भारत की सीमा के उस पार खदेड़ कर विक्रमादित्य यशोधर्मन् ने यहीं छावनी डाली थी। बारहवीं शताब्दी में महमूद गज़नवी ने दिल्ली और मेरठ के साथ ही इस तीर्थ को ध्वस्त कर दिया था। नृग कूप, जिसे आजकल नृग का कुआँ कहते हैं, के निकट ही मुक्तेश्वर शंकर का देवालय है। जिसके आस-पास गुसाइंयों के उन दिनों बावन मठ थे। जो बहुत प्रसिद्ध थे। ये गुसाईं हाथी नशीन थे। और जब इनकी सवारी निकलती थी, इनके आगे धौंसा बजता था। बहुत से राजाओं, जमींदारों, नवाबों और बादशाहों ने उन्हें बहुत से इलाके, गाँव-ज़मीन माफ़ी में दे रखे थे। इन गुसाइंयों में बहुत से नागा सम्प्रदाय वाले थे। इनके अखाड़ों में हजारों मुस्टण्ड, अवधूत जटाधारी पड़े धूनी तपा करते और माल-मलीदे खाया करते थे। महमूद गज़नवी ने इन सब गुसाइयों को तलवार के घाट उतार दिया, एक को भी बच कर भाग निकलने का अवकाश न दिया, तथा उनके स्थान में गंजबख्श का मजार और एक मक़बरा बना दिया। मठों में संचित सदियों की सम्पदा लूट ली और मठों को जला कर खाक कर दिया। क़स्बा भी तब बहुत सम्पन्न था। उसे लूट-पाट कर नष्ट कर दिया। तब से इस क़स्बे में वीरानी छा गई। और अब तो वह बहुत ही खस्ताहाल है। जिस समय की कथा हम इस उपन्यास में लिख रहे हैं तब भी इसकी दशा शोचनीय ही थी।

: ३ :

राजनीति की चौसर

दूसरा मराठा युद्ध समाप्त हो चुका था। जिसने सिंधिया की सारी ही शक्ति समाप्त कर दी थी। दिल्ली, आगरा और अलीगढ़ के आस-पास के इलाक़ों की इस समय अत्यन्त अव्यवस्थित और अराजक स्थिति थी। दिल्ली का समस्त शासन-प्रबन्ध इस समय अंग्रेज़ों के हाथ में था। कहने के लिए कम्पनी के अफ़सर और अंग्रेज़ बादशाह को भारत का अधिराज मानते थे। परन्तु वास्तव में अब बादशाह की यह उपाधि औपचारिक ही थी। बादशाह और उसके परिवार के खर्चे के लिए बादशाह को अंग्रेज़ों ने बारह लाख रुपया सालाना की पैन्शन देना स्वीकार किया था। इसके अतिरिक्त बादशाह का अदल लाल क़िले की दीवारों के भीतर क़ायम रह गया था। बादशाह शाहआलम यद्यपि बूढ़ा, अंधा और बेबस था। योग्य आदमियों का उसके पास सर्वथा अभाव था। वह अभी तक सिंधिया के हाथों एक प्रकार से बन्दी था। सिंधिया एक बार लासवाड़ी के मैदान में विफल ज़ोर-आज़माई करके ग्वालियर की अपनी राजधानी में जा बैठा था। ग्वालियर को छोड़ कर सिंधिया के सब इलाके कम्पनी के अधिकार में आ गए थे। बादशाह को सिंधिया की अपेक्षा अंग्रेज़ों की दासता में ज़रा राहत मिली थी। परन्तु वह अंग्रेज़ों को पसन्द नहीं करता था, जिन्होंने अपनी समस्त कृपा को एक पैन्शन के अन्दर बन्द कर दिया था तथा राजत्व के लक्षण उससे पृथक् कर दिए थे। और सल्तनत की सारी वार्षिक आय उससे छीन कर ये विदेशी अपने काम में ला रहे थे। सिवाय ख़ास अपने कुटुम्ब के और हर तरफ़ से उसके अधिकार परिमित कर दिए गए थे। वास्तव में सिवा हिन्दुस्तान के बादशाह की उपाधि के और सब स्वत्व, सत्ता और अधिकार उससे छीन लिए गए थे। केवल बारह लाख सालाना की शानदार पैन्शन के बदले।

कर्नल आक्टरलोनी का प्रताप इन दिनों दिल्ली में तप रहा था। वह कम्पनी बहादुर का रेज़ीडेन्ट और अंग्रेज़ी सेना का प्रधान सेनापति था।

उसके अधीन एक पल्टन और चार कम्पनियाँ देशी पैदल और एक पल्टन मेवातियों की दिल्ली रक्षा के लिए तैनात थी।

परन्तु दिल्ली के आस-पास और दिल्ली खास, जहाँ कम्पनी की अमलदारी थी, भारतीय प्रजा में असन्तोष की लहर फैल रही थी। सिंधिया और भोंसले के साथ युद्ध के समय जो कम्पनी के अफ़सरों ने भारतीय राजाओं और प्रजा के साथ जो बेईमानी और वादा-ख़िलाफ़ी की थी, तथा जगह्-जगह् जो अत्याचार प्रजा पर किए थे, और अब जो इलाक़े कम्पनी की अधीनता में आ चुके थे, वहाँ जो भीषरग अत्याचार हो रहे थे। उससे ही अंग्रेज़ों के विरुद्ध एक रोषाग्नि सर्व साधाररग के मन में सुलग रही थी। जनता में उनके अनेक शत्रु पैदा हो रहे थे। अंग्रेज़ों को अब यह आशा न थी कि भावी युद्ध में भारतीय प्रजा और उसके नेता उनकी उसी भाँति सहायता करेंगे जैसी पिछले युद्धों में की थी। इसके विपरीत उन्हें डर था कि कहीं यदि नया युद्ध हुआ तो ये समस्त शक्तियाँ हमारे विरुद्ध उठ खड़ी होंगी।

फिर भी इस समय अंग्रेज़ होल्कर से एक करारी टक्कर लेने को बेचैन हो रहे थे। सिंधिया के पतन के बाद अब मराठा मण्डल में वही एक पराक्रमी और बलवान राजा रह गया था, जिसे कुचलना अत्यन्त आवश्यक था। गवर्नर जनरल वेल्ज़ली जनरल लेक पर बराबर उसके लिए ज़ोर डाल रहा था, और उधर जसवन्त राय होल्कर भी हिन्दू और मुसलमान नरेशो को अंग्रेज़ों के विरुद्ध अपने साथ मिलाने की जी जान से कोशिश कर रहा था। अंग्रेज ऊपर से उसके साथ दोस्ती की बातें करते और भीतर ही भीतर जालसाजियों, रिश्वतों, और झूठे वादों के तूमार बांध रहे थे। और सरहद पर फौजें इकट्ठी कर रहे थे। पर अपनी सेना की अपेक्षा अपने गुप्त उपायों पर उन्हें अधिक विश्वास था।

उन दिनों राजनीति का आज के समान विकास न हुआ था, और सेनापति केवल युद्ध ही न करते थे, राजनीति में भी काफ़ी दख़ल देते थे। आज तो सैनिक का राजनीति में दख़ल देना भयंकर अपराध माना

जाता है, पर उन दिनों ऐसा न था। अतः बहुधा उस काल के सेना-नायक गवर्नर जनरल से सलाह मशवरा करते रहते थे, और राजाओं से सिंधिया और युद्ध की सम्पूर्ण योजनाओं पर विचार विमर्श भी करते रहते थे।

इस समय भी अंग्रेज़ों की बहुत-सी सेना दक्षिण में फंसी पड़ी थी। बम्बई उन दिनों अंग्रेज़ों का सबसे बड़ा सैनिक अड्डा था। आजकल बम्बई के जिस भाग को फोर्ट का इलाक़ा कहा जाता है, वहाँ तब एक बड़ी चहार दीवारी बनी हुई थी, जो मुकम्मिल नहीं थी और उसके बीच में होकर ज्वार के समय समुद्र का पानी गलियों और सड़कों पर भर आता था। इतनी दूर से सेना को लाना इस समय कठिन था, क्यों कि अंग्रेज़ जानते थे कि मार्ग में उन्हें रसद और चारा क़तई मिलना संभव नहीं है। इसके अतिरिक्त उन्हें यह भी भय था कि यदि अंग्रेज़ी फौजें चांदौर से आगे बढ़ीं तो पेशवा और निज़ाम के इलाकों में पचासों होल्कर खड़े हो जाएंगे तथा नर्वदा और ताप्ती के बीच की पहाड़ियों से निकल सकना उनके लिए दुष्कर हो जाएगा।

जसवन्त राय होल्कर के विरुद्ध इस समय सब से अधिक दौलतराव सिंधिया और उसकी सबसीडीयरी सेना की सहायता पर अंग्रेज़ निर्भर थे। अंग्रेज़ों ही की कूटनीति से ही इन दोनों प्रबल और समर्थ मराठा सरदारों में मन मुटाव और अविश्वास पैदा हो गया था। अब भी अंग्रेज़ इस भाव को बढ़ाने ही की जुगत में रहते थे। पर इस समय अंग्रेज़ों के पद-पद पर विश्वासघात और वादा-खिलाफी से सिंधिया झुँझलाया बैठा था। अंग्रेज़ों ने उसके साथ खुली सीनाज़ोरी की थी। अंग्रेज़ों ने भरत-पुर के राजा को भी गाँठना चाहा था—पर वह पहले ही से अंग्रेज़ों से जला-भुना बैठा था। इसके अतिरिक्त उसके इलाकों के चारों ओर अंग्रेज़ों के अत्याचारों से त्राहिमाम् त्राहिमाम् मचा हुआ था। यों तो तमाम द्वाबे में ही—जहाँ अंग्रेज़ कम्पनी की अमलदारी थी, एक ही दशा थी। वहाँ की प्रजा और जमींदारों से खूब निर्दयता से कर वसूला जाता

था। भूमि का कर बेहद बढ़ा दिया गया था। नए अंग्रेज़ी बन्दोबस्त के बाद किसान दो चार साल ही में तबाह हो गए थे। अंग्रेज़ी इलाके में अंग्रेज़ खुले आम गोवध करते थे। हिन्दुओं के पवित्र तीर्थ मथुरा में खुले आम गोवध होता था। तभी तो वहाँ की प्रजा भरतपुर के जाट राजा को अपना नेता और रक्षक समझती थी। इन्हीं कारणों से भरतपुर दर्बार की सहानुभूति होल्कर के साथ थी।

इस समय मथुरा से अंग्रेज़ी सेना को खदेड़ कर होल्कर सहारनपुर में छावनी डाले पड़ा था। वह सहारनपुर के सरदार दोलचासिंह, नवाब बब्बूखाँ और बेगम समरू से सहायता की आशा में खटपट कर रहा था। उधर होल्कर के इलाक़ों पर अंग्रेज़ों के आक्रमण हो रहे थे। जिनकी सूचनाओं ने उसे बेचैन कर रखा था। वह अब भी यह आशा रखता था कि किसी तरह दिल्ली पर कब्ज़ा हो जाय और बादशाह उसके पक्ष में हो जाए।

: ४ :

चौधरी प्राणनाथ

काफ़ले के सरदार का नाम चौधरी प्राणनाथ था। पंजाब में झेलम के किनारे पण्डरावल में उनकी रियासत थी। दूसरे मराठा युद्ध से प्रथम तक एक प्रकार से समूचा पंजाब ही सिंधिया के अधीन था। महाराजा रणजीतसिंह भी सिंधिया के मातहत था। और वर्ष में चार लाख रुपये सिंधिया को मालगुज़ारी देता था। अंग्रेज़ों ने इस युद्ध में रणजीतसिंह को यह कह कर अपनी ओर फोड़ लिया था कि यदि तुम सिंधिया के विरुद्ध हमारी सहायता करोगे तो तुम्हारी मालगुजारी माफ़ कर दी जायगी। इस के अतिरिक्त कुछ और नए इलाके भी तुम्हें दे दिए जाएँगे। अभी सिक्खों की रियासत का नया ही उदय हुआ था। महाराज रणजीतसिंह ने और उनके प्रभाव में रहने वाले दूसरे सिख सरदारों ने दूसरे मराठा

युद्ध में इसी से अंग्रेज़ों का साथ दिया था। युद्ध के बाद इन सब को बड़े-बड़े इलाक़े दिए गए—और रणजीतसिंह का राज्य तो इस युद्ध के बाद काफ़ी विस्तार पा गया।

दुर्भाग्य से प्राणनाथ ने इस युद्ध में अंग्रेज़ों के विरुद्ध सिंधिया के पक्ष में हथियार उठाया था। क्योंकि उस का इलाक़ा सिंधिया ही की अमल-दारी में था। युद्ध के बाद पंजाब के उन इलाक़ों में, जो सिंधिया के प्रभाव में थे, अराजकता—मार-काट—और लूट-पाट का बाज़ार खूब गर्म हुआ। सिंधिया के समर्थकों पर दुहरी मार पड़ी। अंग्रेज़ ढूँढ़-ढूँढ़ कर सिंधिया के साथियों का कत्ले-आम कर रहे थे, और जिन सिख सरदारों ने सिंधिया के विरुद्ध अंग्रेज़ों का पक्ष लिया था, उन्हें अंग्रेज़ों ने ढील दे दी थी कि वे जहाँ चाहें—जहाँ अवसर मिले—जितना चाहें सिंधिया के अमल के गाँवों को अधीन कर लें, सिर्फ—कम्पनी बहादुर का अमल मानें और अंग्रेज़ों को खिराज दें। इस ढील से छोटे-छोटे सिख सरदारों ने खूब लम्बे-लम्बे हाथ मारे थे। चौधरी प्राणनाथ को सिंधिया ने पटियाला के निकट पण्डरावल का इलाका दिया हुआ था। वे बड़े दबदबे के आदमी थे। पटियाले के आस-पास की सीमाओं पर इस समय धाँधलेबाजी चल रही थी। सतलुज के इस पार के पैंतालीस गाँव चौधरी प्राणनाथ की जागीर में थे। अब उन का सिंधिया का तो सहारा जाता ही रहा था, लाहौर दर्बार से भी उन्हें कुछ आशा न थी। अंग्रेज़ों से सन्धि करके रणजीतसिंह अन्धाधुन्ध अपने पैर पसार रहा था। स्वतन्त्र सिख सरदारों की टोलियाँ, और अंग्रेजी सिपाही सतलुज के इस पार के इलाकों में बेधड़क घूमते, गाँवों में घुस जाते, लूट मार और बलात्कार के बाद गाँवों में आग लगा देते, फ़सलों-खेतों को जला डालते थे। इन सब मार-काट और उपद्रवों से तंग आ कर और अंग्रेज़ों से त्रस्त हो कर चौधरी प्राणनाथ ने इस इलाके को छोड़ कर द्वाबे में आ बसने की ठान ली। और इलाका त्याग सपरि-वार इधर चले आए।

: ५ :

पहला प्रभात

चौधरी प्राणनाथ के साथ उनके सात पुत्र और नौ पौत्र पौत्री थे। ज्येष्ठ पुत्र रामपाल की आयु बाईस बरस की थी। सब से छोटा पुत्र तीन साल का था। पौत्र पौत्रियों में कई दूध पीते शिशु थे। परिवार के अन्य व्यक्तियों में चौधराइन, पुत्र वधुएं और रिश्ते के इक्कीस पुरुष और उनके परिवार तथा बाल-बच्चे थे। इनके अतिरिक्त गुरुराम पुरोहित थे, जिन की आयु चालीस के लगभग थी। वे कथा-पुराणों के बड़े पण्डित और कर्मनिष्ठ ब्राह्मण थे। उन के साथ भी उन की ब्राह्मणी, वृद्धामाता तथा दो बालक पुत्र थे। शेष व्यक्तियों में सेवक, ख़िदमतगार, सिपाही, गुमाश्ते, बरकंदाज और उन के परिवार थे। इन में दो व्यक्ति उल्लेखनीय थे। एक नाई सेवाराम—दूसरा मेहतर देवीसहाय। सेवाराम तीस बरस का कसरती पट्ठा था, और देवी सहाय अधेड़ उम्र का पुरुष था। ये दोनों जन स्वेच्छा से हठपूर्वक घर-बार छोड़ कर चौधरी के साथ बाल-बच्चों सहित आए थे। कुछ और लोग भी जिन का चौधरी से कोई लगाव सम्बन्ध न था—केवल चौधरी के प्रेम से उनके साथ आए थे। ये न चौधरी के नौकर थे—न परिजन। पर चौधरी के आसामी थे। वे लोग अपना घर-बार, ज़मीन सब कुछ छोड़ कर चौधरी की रकाब के साथ आए थे।

चौधरी का व्यवहार सब से बंधुवत् था। और सब लोग उन्हें पिता समान ही मानते थे। चौधरी जैसे तलवार के धनी थे, वैसे ही बात के भी धनी थे। वे जैसे तेजस्वी थे—वैसे ही दाता, उदार और गम्भीर थे। वे धर्म-कर्म के पक्के, शुद्ध किन्तु निष्ठवान् हिन्दू थे। उनके ज्येष्ठ पुत्र रामपाल सिंह अपने पिता के योग्य पुत्र थे। रामपाल पक्के शहसवार, तीर और भाले के शौकीन। दूसरे पुत्र सुखपाल और तीसरे सुरेन्द्रपाल अभी किशोरावस्था में थे, परन्तु हथियार बाँधते थे। वह ज़माना ही ऐसा था कि सभी को सिपाही होना ही पड़ता था। किशोरपाल और विजय-

पाल बालक ही थे—उन्हें पढ़ने का शौक अधिक था। शेष दो पुत्र नरेन्द्रपाल और यशपाल अभी शिशु ही थे।

प्रातःकाल उठते ही चौधरी ने हाथ में लाठी लेकर एक बार सब डेरों में चक्कर लगाया। प्रत्येक से उन्होंने उसकी आवश्यकताएँ पूछीं और यथा सम्भव उनकी पूर्ति की। फिर जाजम पर आकर बैठे। सेवाराम हुक्का भर कर ले आया और अदब से एक ओर खड़ा हो गया। गुरुराम पुरोहित अपना तमाखू का बटुआ लेकर आ पहुँचे। मसनद से ज़रा हट कर उन्होंने गुरुराम को पास ही आसन दिया। फिर सेवाराम की ओर देख कर कहा—"रामपाल कहाँ गया है ?"

"घूमने गए हैं। दो घण्टे से भी अधिक हो गया। बस, अब आते ही होंगे।"

"अकेले ही गए हैं, या कोई साथ भी है ?"

"अकेले ही हैं।"

"यह तो ठीक नहीं किया, अनजान जगह है। खैर, तू जरा देख दिवान हिकमतराय पूजा से उठे कि नहीं, उठ गए हों तो उन्हें बुला ला।"

सेवाराम चला गया और थोड़ी ही देर में हिकमतराय को साथ ले आया। साँवला रंग, दुबले-पतले और लम्बे। मुँशियाना फैशन, सफेद तराशी हुई ख़सख़ासी डाढ़ी, नाक पर चश्मा, पैर में चुस्त पाजामा। आते ही उन्होंने झुक कर चौधरी को सलाम किया। और बग़ल में हट कर बैठ गए।

चौधरी ने सहज मुस्कान होठों पर ला कर कहा—"किसी को बस्ती में भेजा है या नहीं। रसद तो सब चुक गई होगी। उसका इन्तज़ाम तो सब से पहले होना चाहिए।"

"जी, बस्ती में आदमी गए हैं। और आज भर के लिए तो हमारे पास रसद है, सिर्फ दूध का बन्दोबस्त करना है।"

"हाँ, हाँ, बच्चों के लिए दूध तो आना ही चाहिए।"

"मैंने आस-पास के गाँवों में दो सवार दूध के लिए भेज दिए हैं। बस्ती से भी दूध जितना मिले ले आने को कह दिया है।"

"इससे तो काम चलेगा नहीं, कुछ गाय-भैंस खरीद ही लो।"

"जी, आज डेरा ठीक बैठ जाए तो खाने-पीने से निपट कर मुखिया जी को आस-पास के गाँवों में भेज दूँगा। लेकिन जानवर इस ज़मीन में बहुत मंहगे हैं।"

"हो सकता है, यह पंजाब की भूमि थोड़े ही है। क्या किसी से पूछा था ?"

"जी हाँ, अभी एक बैलों की जोड़ी जा रही थी। पूछा तो कहा—पच्चीस रुपये की है। फिर, हमारे पंजाब जैसे बैल थोड़े ही हैं।"

"तो दीवानजी, मुखियाजी से कह देना। रुपये का मुँह न देखें। अच्छी नसल की दस-बारह दुधार गाएँ और दस-बारह भैंसें खरीद ही लें।"

दीवान हिकमतराय ने गम्भीरता से कहा—"बहुत अच्छा।" इतना कह वे चले गए। उसी समय चौधरी का बेटा रामपालसिंह आ गया। घोड़ा साईस के हवाले करके वह सीधा जाजम पर पिता के सामने बैठ गया। पिता के उसने पैर छुए और गुरुराम को हाथ जोड़ कर प्रणाम किया।

फिर कहा—"दद्दा, यहाँ तो मराठे छा रहे हैं।"

चौधरी के माथे पर बल पड़ गए। उन्होंने पूछा—"कोई बड़ा सरदार है या लुटेरे ही हैं।"

"भाऊ हैं, भाऊ। मुक्तेसर से बेगमाबाद तक मराठे छाए हुए हैं।"

"भाऊ हैं ? भाऊ क्या अभी यहीं मुक़ीम हैं ?"

"यहीं हैं, उनके साथ सुना है, बीस हज़ार मराठे हैं। सुना होल्कर सहारनपुर में बैठे हैं।"

चौधरी कुछ देर मौन बैठे रहे। उनका मुख गम्भीर हो गया। उन्होंने हुक्के में दो-तीन कश लगाए। इतने ही में जो लोग बस्ती में राशन-रसद

के लिए गए थे, उनको संग लेकर दीवान हिकमतराय फिर आ पहुँचे। उन्होंने चौधरी के पास बैठ कर आ[illegible] कहा—"बस्ती में तो चिड़िया का पूत भी नहीं है।"

क्या बात है ?"

"मराठों के डर से बस्ती के सब लोग भाग गए हैं। सारा कस्बा सूना पड़ा है। एक भी आदमी बस्ती में नहीं है।"

चौधरी ने साभिप्राय नज़र से गुरुराम की ओर देखा, फिर उन्होंने हुक्के में कश लगाया। कुछ ठहर कर उन्होंने पूछा—"दूध मिला ?"

"जी, दूध भी नहीं मिला।"

"तो दीवानजी, तुम दूध के लिए कुछ आदमी गंगा के उस पार भी गाँवों में भेज दो। नावें तो घाट पर होंगी ही। इसके अतिरिक्त रसद का भी प्रबन्ध करना ही होगा।"

"मैं अभी बन्दोबस्त करता हूँ।" दीवान हिकमतराय ऐनक को नाक पर ठीक करते हुए चले गए। चौधरी ने गुरुराम की ओर देख कर कहा—"एक बार भाऊ से मिलना होगा।" वे फिर गम्भीर भाव से हुक्का पीने लगे। गुरुराम ने कहा—

"भाऊ तो आपको जानता है, वह क्या आपकी मदद करेगा ?"

"कैसे कहा जा सकता है। पर मिलना तो ज़रूरी है, हमीं पर छापा पड़ गया तो हमारे पास रक्षा का क्या बन्दोबस्त है।"

"पर भाऊ तो आपको अपनी ओर करना ही चाहेगा।"

"पण्डितजी, हमें किसी का तो आसरा लेना ही पड़ेगा। अभी नहीं कहा जा सकता कि हिन्द के राजा अंग्रेज़ हैं या मराठे या बादशाह। मैं तो दिल्ली के बादशाह की शरण आया था। पर यह तो—गले पड़ी ढोलकी बजाए ही सिद्ध—वाला मामला है। अभी तो उसका रुख देखना है, आगे की बात पीछे सोची जायगी। जब भाऊ दलबल सहित यहीं पड़ा है तो हमारा आना उसकी नज़र से छिपेगा थोड़े ही। वह सुन कर न जाने क्या समझे। इससे आगे चल कर मेरा उससे मिलना ही ठीक है।" जो आदमी

रसद लेने बस्ती में गए थे, उनमें से एक को संग लेकर दीवान हिकमतरांय फिर आ गए। उन्होंने कहा—"यह कहता है एक बनिया बस्ती में छिपा बैठा है। उसके पास रसद है। पर मराठे लूट न लें, इस भय से उसने छि[illegible]ा रखी है।"

"[illegible] तुमने उससे बात की थी।" चौधरी ने इस आदमी से पूछा।

"जी [illegible]ां, उससे मिलना [illegible] मुश्किल है, वह घर में छिपा बैठा है, और घर के द्वार पर [illegible] ही ताला लगा रखा है। जिससे लोग समझें कि घर में कोई है ही नहीं।"

"पर वह घर में है और उसके पास रसद है, यह तुम से किस ने कहा ?"

"उसी के एक आदमी ने, जो मुझे बस्ती से बाहर मिल गया था। उसी ने बताया है कि वह घर के भीतर छिपा बैठा है।"

"उसके नाम का भी कुछ पता लगा ?"

"बसेसर साहू नाम है उसका।"

"बसेसर ? ओहो, ठीक है, वह मुक्तेसर ही में रहता है। मैं उसे जानता हूँ। मैंने उसे लाहौर में देखा था। उसे ज़रूर मेरी याद होगी। बड़े आड़े वक्त में मैंने उसकी मदद की थी।" कुछ देर चौधरी चुपचाप हुक्का पीते रहे, फिर उन्होंने कहा—"रामपाल, तू जा भाया, जरा देख कि उसे मेरी याद है भी या नहीं। और जल्द ही लौट कर आ, तुझे मेरे साथ ही भाऊ के पास चलना होगा।"

उन्होंने सेवाराम की ओर देख कर कहा—"सेवा, तू मेरे स्नान-पूजा की झटपट व्यवस्था कर।" इतना कह कर चौधरी व्यस्तभाव से उठ खड़े हुए। रामपाल भी तेजी से चला गया।

: ६ :

बसेसर साहू

जिस आदमी ने बसेसर साहू की सूचना दी थी, उसे साथ लेकर रामपाल सिंह बस्ती की ओर चले। अभी भी दोपहर दिन नहीं चढ़ा था, पर हवा

में गर्मी अभी से भर गई थी। रामपाल का घोड़ा तो बड़ी रास का था। पर दूसरा आदमी टांघन पर सवार था। दोनों जानवरों की टापों की आवाज़ हवा में गूंज उठती थी। और बीच-बीच में उनकी तलवारें भी म्यान से खनखना उठतीं थीं। बसेसर की हवेली का पता लगाने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं पड़ी। रामपाल के साथ वाला आदमी पहले ही वह घर देख गया था। हवेली पक्की और दुमंज़िल थी। वे शीघ्र ही उसकी आली-शान हवेली के सामने पहुँच गए। परन्तु वहाँ न तो कोई मनुष्य ही था, न दरवाजा ही खुला था। और साफ दीख रहा था कि महीनों से किसी ने उसे छुआ ही नहीं है। मकान में कोई आदमी रहता होगा, इसका गुमान भी नहीं होता था। दरवाजा बहुत विशाल था, और उस पर मज़बूत फाटक चढ़ा था। कहीं कोई सूराख या रोशनदान तक दीवार में न था। फाटक पर मोटा लोहा जड़ा था। बहुत चीखने-चिल्लाने और दरवाज़ा पीटने से फाटक के ऊपर वाली एक खिड़की खुली। और उसमें से एक सिर निकला। और उसने कर्कश आवाज़ में कहा—"जाओ, दूर भागो, नहीं तो अभी लठैत आ कर लाठियों से तुम्हारा सिर फोड़ देंगे।" परन्तु रामपाल ने निकट आकर कहा—"मैं पंडरावल के चौधरी प्राणनाथ का आदमी हूँ और साहू से मिलने को मुझे चौधरी ने भेजा है। मेरे पास गुप्त संदेश है, पर वह मैं केवल साहू से ही कह सकता हूँ।"

रामपाल की बात सुनकर वह सिर ग़ायब हो गया। और खिड़की बन्द हो गई। घड़ी भर बाद फिर सिर निकला। उसने पूछा—

"तुम अकेले ही हो।"

"नहीं, मेरे साथ एक और आदमी भी है।"

"तो इस आदमी को यहीं रखो, और तुम पिछवाड़े की गली में आओ। रामपालसिंह अपना घोड़ा साथी को सौंप, तंग और अंधेरी गली में घुसा। गली सूनी और तंग थी। पिछवाड़े की खिड़की पर वही आदमी खड़ा था। उसके हाथ में नंगी तलवार थी। उसने तलवार घुमाकर कहा—"दग़ा की तो सिर भुट्टे-सा उड़ा दूंगा। चुपचाप भीतर चले आओ।"

रामपाल भीतर घुस गया। उस व्यक्ति ने खिड़की बन्द कर ताला जड़ दिया। एक सूने और अंधेरे दालान में होकर वे एक गलियारे में पहुँचे। और उसको लाँघ कर वैसे ही दूसरे दालान में। वहाँ देखा—बसेसर साहू—गद्दी पर बैठा है। नंगी तलवार उसके आगे गद्दी पर रखी है। वह क्षण भर गद्दी पर चुपचाप बैठा संदेह भरी नज़र से रामपाल की ओर देखता रहा। फिर कहा—"बैठ जाओ और अपना मतलब कहो। तुमने कहा था कि तुम चौधरी प्राणनाथ के आदमी हो।"

"मैं चौधरी का बड़ा बेटा हूँ।"

साहू ने ध्यान से रामपाल को देखा। फिर पूछा—"मैं तो तुम्हें जानता नहीं हूँ, परन्तु चौधरी कहाँ हैं?"

"यहीं मुक्तेसर में हैं।"

"मुक्तेसर में?" उसके नेत्रों में आश्चर्य फैल गया।

रामपाल ने कहा—"उन्होंने मुझे तुम्हारे पास भेजा है।"

"किस लिए।"

"हमें रसद चाहिए। हमारे साथ तीन सौ आदमी और कुछ जानवर हैं। मुक्तेसर में हम अभी कुछ दिन क़याम करेंगे। तब तक के लिए हमें रसद-पानी चाहिए।"

"लेकिन तुम्हें मालूम है कि यहाँ—मराठे छा रहे हैं। रसद तो एक ओर रही—घास का तिनका तो उन्होंने छोड़ा नहीं है।"

"पर साहू, दद्दा ने कहा है कि साहू अपने ही आदमी हैं, वे रसद का प्रबन्ध कर देंगे।"

"चौधरी के मेरे ऊपर बहुत अहसान हैं, और तुम कहते हो कि तुम उनके लड़के हो। देखूँगा, यदि कुछ बन्दोबस्त हो सका तो, लेकिन भाव बहुत मंहगे हैं। तथा रुपया अशर्फियों में पेशगी देना होगा। दूसरी बात यह है कि रसद राह में लुट जाय तो मैं इसका जिम्मेदार नहीं हूँ।"

"साहू, हमारा तुम्हारा घर दो थोड़े ही हैं। जैसा कहोगे वही

बन्दोबस्त हो जायगा। रसद लुटने की तुम चिन्ता न करो। मैं इसका बन्दोबस्त कर लूँगा।"

"तो तुम अशर्फियाँ लाए हो ?"

"शाम तक आजाएँगी और रसद रात में पहुँच जायगी।"

"अच्छी बात है। रुपया लेकर तुम्हीं आओगे ?"

"नहीं, हमारे कारिन्दे दीवान हिकमतराय आएँगे। भरोसे के आदमी हैं।"

"चौधरी क्या तीर्थ यात्रा को निकले हैं ?"

"कुछ ऐसा ही इरादा है।"

"बड़ा ख़राब वक्त है भाई, तुमने सुना होगा कि अंग्रेज़ कोयल का किला दख़ल किए पड़े हैं। अब होल्कर के पाँव उखड़े चाहें या चाहे जो हो, पर भई, इन लुटेरे मराठों से तो ये टोपी वाले अच्छे हैं।"

"काहे बात में अच्छे हैं साहू।"

"नक़द रुपया देकर माल लेते हैं। बात जो कहते हैं उसे निभाते हैं।"

"उनसे भी कुछ सौदा सुलक करते हो साहू ?"

"भइया, हमारा तो यह धंधा ही है। पर इन लुटेरे मराठों के भय से सब मामला बिगड़ा पड़ा है। देखा होगा, बस्ती में चिड़िया का पूत भी नहीं है। सब भाग गए।"

"बस्ती तो उजाड़ पड़ी है।"

"सुना है दिल्ली में अंग्रेज़ों का दखल हो गया है। वहाँ सब बाज़ार खुले रहते हैं। लोग बाग बेफिक्र अपना धन्धा चलाते हैं।"

"मैंने तो देखा नहीं साहू। हम लोग तो सीधे पंजाब से आ रहे हैं।"

"चौधरी से मेरी जुहार कहना। उनसे कहना—उनकी कृपा मैं भूला नहीं हूँ। रसद का प्रबन्ध हो जायगा। पर यह बात फूटनी नहीं चाहिए। नहीं तो मराठे मेरा घर बार लूट कर उस में आग लगा देंगे।"

"नहीं, सब बात हमारे-तुम्हारे बीच ही रहेगी साहू।"

"तो मैं तुम्हारे गुमाश्ते की प्रतीक्षा करूँगा। अशर्फियाँ वही लायगा न।"

"वही ले आएँगे। तथा जो-जो जिन्स जितनी चाहेंगे—बता देंगे।"

"क्या फिक्र है, चौधरी के हुक्म से मैं बाहर नहीं हूँ। कह देना।"

"तो साहू, अब मैं चला।"

"राह में हुशियार जाना रे भाई।"

रामपाल उठ खड़ा हुआ और चालाक बनिए से विदा होकर उसी पिछवाड़े की खिड़की से बाहर निकला। घोड़े पर सवार हो तेजी के साथ डेरे की ओर चला।

: ७ :

भाऊ की ओर

चौधरी स्नान-पूजा से निबट कर पुत्र की प्रतीक्षा में बैठे थे। राम-पाल ने उनके पास पहुँच कर कहा—

"बन्दोबस्त हो गया है दाऊ, पर साहू पूरा घाघ है। बहुत समझाने-बुझाने से वह रसद देने को राजी हुआ है। मगर भाव बहुत मंहगे बताता है तथा रुपया अशर्फियों में पेशगी माँगता है। एक शर्त उसकी यह भी है कि राह में रसद लुट जाय तो वह ज़िम्मेदार नहीं है।"

"क्या भाव बहुत मँहगे हैं?"

"जी, गेहूँ रुपए का ढाई मन और चना साढ़े तीन मन के हिसाब से देगा।"

"गुड़ और शक्कर।"

"गुड़ सवा मन और शक्कर छत्तीस सेर देता है।"

"धान, बाजरा और माश भी चाहिए।"

"धान रुपए का सवा दो मन, बाजरा साढ़े तीन मन, और माश रुपए का पौने दो मन देता है।"

"तो भाई, जितनी जिन्स हो खरीद लो। रुपया अशर्फियों में पेशगी दे दो। हाँ, कड़ुआ तेल भी तो चाहिए।"

"कड़ुआ तेल रुपए का पच्चीस सेर देता है।"

"चौधरी ने हँस कर कहा—"लूट है लूट। लेकिन अपनी गर्ज है। ले लो भाई।"

"लेकिन लूट का भी डर है।"

"उसका भी बन्दोबस्त करूँगा। तू भाया अशर्फियाँ लेकर अभी दीवान हिकमतराय को साहू के पास भेज दे। सब जिन्स रात को आयँगी। कुछ छकड़े और गधे तो अपने पास हैं। कुछ साहू बन्दोबस्त कर देगा।"

दीवान हिकमतराय को सब आवश्यक बातें समझा कर चौधरी और रामपाल सिंह ने भोजन किया। फिर वस्त्र और शस्त्र धारण किए, और पुत्र सहित घोड़े पर सवार हो भाऊ को मुजरा करने चल दिए। सेवाराम नाई भी तलवार बाँध टांघन पर सवार हो चौधरी के पीछे-पीछे चला।

: ८ :

मुक्तेसर पर दखल

भाऊ की मुलाकात का परिणाम अच्छा हुआ। चौधरी की यशोगाथा और उसके प्रभाव की बात भाऊ सुन चुका था। इस समय पंजाब की अवस्था पर ही भाऊ की सारी आशाएँ अवलम्बित थीं। वह चाहता था कि किसी तरह अंग्रेज़ों का सिखों से युद्ध छिड़ जाए। उस में अंग्रेज जीतें या हारें—उनकी शक्ति बिखर जायगी और मराठों को सांस लेने की फुर्सत मिल जायगी। उसने बड़े चाव से चौधरी के मुँह से पंजाब की भीतरी दुरवस्था का हाल सुना, सुन कर आश्वस्त हुआ। पर रणजीतसिंह के उत्थान से प्रभावित-सा मालूम हुआ। चौधरी ने अपनी वाक्-चातुरी, शालीनता, गम्भीरता और सौजन्य से भाऊ को प्रसन्न कर लिया। सब बात कह कर चौधरी ने कहा—"अब मैं आध सेर आटे के

लिए पुत्र सहित आप की सेवा में आया हूँ।" भाऊ ने तुरन्त चौधरी को मुक्तेसर दख़ल करने की अनुमति दे दी। और कहा—"चौधरी, आसपास के जितने गाँव तुम चाहो दख़ल कर लो।" उसने यह भी कहा—"तुम्हारा यह बेटा आज से मेरा भी बेटा हुआ—इसे मैं पाँच-सौ सवारों का नायक बनाता हूँ। इन्हीं सवारों को ले कर पहले तुम आसपास के गाँवों में अपनी दुहाई फेर दो और बन्दोबस्त करो। मुक्तेसर में अभी मैं मुक़ीम हूँ। अंग्रेज़ों ने मेरठ में और अम्बाले में छावनियाँ बनाई हैं। इधर कोयल तक उनकी फौजें बढ़ आई हैं। नहीं जानता—द्वाबे पर अब अंग्रेज़ों का प्रभाव कायम रहेगा या नहीं। हमें तो अब केवल होल्कर का ही सहारा है। हर हालत में हमें तैयार रहना है। न जाने कब अंग्रेज़ों से छिड़ जाय। इसी से यहाँ मैं एक किला बनवाना ज़रूरी समझता हूँ। यह काम मैं चौधरी, तुम्हारे ही सुपुर्द करता हूँ। किला छह महीने के भीतर ही तैयार हो जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त एक बात और। पंजाब की ओर से बेख़बर न रहना। वहाँ का राई-रत्ती हाल मुझे देते रहो। सब कुछ तुम्हें मालूम होता रहे—ऐसा प्रबन्ध कर लो।"

चौधरी ने भाऊ का जय जयकार किया। और कहा—"श्रीमन्त, मैंने पैंतालीस गाँव पीछे छोड़े हैं। बस, इतने गाँव श्रीमन्त अपनी कलम से सेवक को बख़्श दें, और बादशाह से उनकी सनद दिला दें।" भाऊ ने चौधरी को इतमीनान दिलाते हुए कहा—"तुम गाँव दख़ल करो चौधरी। और मुल्क में अमन क़ायम करो। लोग गाँवों में बसें—खेती-क्यारी करें, सब कारोबार व्यवहार जारी हो—ऐसा करो। हम मराठों से वे डर गए हैं। और इन टोपी वालों को अपना हितु समझते हैं। सो डर की बात नहीं है। बादशाह का बल हमें क़ायम रखना है, और इन फ़िरंगियों को मार भगाना है। यह काम मुल्क में अमन होने ही से ठीक होगा। हमें पूरी रसद भी अब चौधरी तुम्हीं को मुहैया करनी होगी। यहाँ के लोग हम से कुछ भी तो सहयोग नहीं करते। अब तुम्हारे आने से मैं आश्वस्त हुआ।"

सफल और कृत-कृत्य हो, सब बातें भाऊ की स्वीकार कर और जुहार करके चौधरी डेरे पर आए। उन्होंने तुरन्त मुक्तेसर के सूने क़स्बे को दखल कर लिया। उसके आदमी यथायोग्य मकानों में बस गए। इस के बाद उन्होंने चालीस गाँवों में अपने अदल की दुहाई फेरी। फिर गाँव-गाँव जा कर वहाँ के निवासियों को अपने मिष्ठ व्यवहार और सौजन्य से भय रहित किया। धीरे-धीरे भयभीत ग्रामवासी, अपने-अपने घरों में लौट आए। खेती-क्यारी होने लगी। मराठों का आतंक कम हुआ। मुक्तेसर का क़स्बा भी आबाद हो गया। आसपास के किसानों को दूनी मज़दूरी का लालच दे कर चौधरी ने किला बनाना आरम्भ कर दिया। भाऊ चौधरी से सब तरह सन्तुष्ट हो गया।

: ६ :

चौधरी के जोड़-तोड़

प्राणनाथ चौधरी ने अपने चातुर्य, सौजन्य, मुस्तैदी और प्रामाणिकता से मुक्तेसर और आसपास के जिन चालीस गाँवों पर दखल किया, उन सब की हालत देखते ही देखते बदल गई। उजाड़ मैदानों की जगह हरे-भरे खेत लहलहाने लगे। लोग खुशहाल और निर्भय हो कर अपने-अपने कामों में लग गए। मुक्तेसर की रियासत खूब सम्पन्न हो गई। चौधरी का रुआब दबदबा अच्छी तरह बैठ गया। भागे हुए लोग अपने घरों को लौट आए। भाऊ को भी चौधरी से बड़ी सहायता मिली। चौधरी के प्रयत्न से बसेसर साह ने भाऊ और होल्कर की रसद से भारी सहायता की। और जब चौधरी ने छह मास से भी कम समय में मुक्तेसर का किला खड़ा कर दिया तो भाऊ प्रसन्न हो गया। उसने होल्कर से चौधरी की भूरी-भूरी प्रशंसा की।

इस समय राजनीति के बड़े-बड़े दाव भारत में लग रहे थे। दौलत-राव सिंधिया और भोंसले के युद्ध में भरतपुर के जाट राजा रणजीतसिंह ने देशवासियों के साथ विश्वासघात करके अंग्रेज़ों का साथ दिया था,

फिर भी अंग्रेज़ भरतपुर को मलियामेट करने पर तुले बैठे थे। अब होल्कर के भरतपुर पहुँचने और मथुरा दख़ल करने से बौखला कर अंग्रेज़ों ने भरतपुर पर चढ़ाई कर दी थी। पर युद्ध बीच में ही रुक गया और सन्धि हो गई—पर होल्कर का प्रश्न ज्यों का त्यों रह गया। वह जब मथुरा दखल कर रहा था—तभी उसने एक बार भरतपुर—सिंधिया और भोंसले से मिल कर एक संयुक्त मोर्चा अंग्रेज़ों के विरुद्ध बनाने का प्रयत्न किया था। परन्तु जनरल लेक के ताबड़तोड़ अलीगढ़ तक पहुँच जाने और कोयल के किले को दखल कर लेने के कारण उसे दिल्ली की ओर भागना पड़ा था। पर दिल्ली पर भी उस समय अंग्रेज़ों ने कब्जा कर लिया और बादशाह को अपने प्रभाव में गांस लिया, इस से खीझ कर होल्कर सहारनपुर में बैठ कर अपनी बिखरी शक्ति का संचय कर रहा था। पूर्व से अग्रेज़ एकाएक न टूट पड़ें—इस भय से उसने भाऊ को मुक्तेसर में मुकीम कर रखा था। वह चाहता था कि पंजाब में उदीयमान सिख सरदार रणजीतसिंह उससे मिल जाए, और सहारनपुर के नवाब बब्बूखाँ और समरू बेगम अपनी पूरी सहायता अंग्रेज़ों के विपरीत उसे दें। इनके अतिरिक्त रामपुर के पदच्युत नवाब गुलाम मुहम्मद ख़ाँ से भी उसे बहुत आशा थी।

इस समय गवर्नर जनरल वेल्ज़ली के हाथ कम्पनी बहादुर का बागडोर थी। वह चाहता था कि भारत में एक अखण्ड साम्राज्य की स्थापना हो जाय। वह भारत में किसी राजा और नवाब को स्वतन्त्र नहीं देखना चाहता था। परन्तु वह कोई बड़ा यद्ध इस समय छेड़ना नहीं चाहता था। कम्पनी की आर्थिक अवस्था बहुत खराब हो चली थी। इसके अतिरिक्त यह मौसम भी युद्ध के अनुकूल न था। वह युद्ध को टालता और तैयारी करता चला जा रहा था। उसे लगातार देशी नरेशों से युद्ध करने पड़े थे। और बेशुमार बड़ी-बड़ी रिश्वतें देनी पड़ी थीं। इससे कम्पनी कर्ज़ से दब रही थी। फिर भी वेल्ज़ली कर्ज़े की परवाह न करके कर्ज़ पर कर्ज़ा लिए जाता था। वह रुपए के बल पर ही मुश्किल

कामों को आसान करता जाता था। उसने आँख बन्द करके रुपया खर्च किया था। तिस पर भी होल्कर और भरतपुर में अभी उसे पराजय ही का सामना करना पड़ा था। इन दिनों कम्पनी के सिपाहियों की तनख्वाहें कई-कई महीनों की बाकी पड़ी थीं, और वे असन्तुष्ट होते जा रहे थे। द्वाबे की सारी ही प्रजा, जहाँ-जहाँ अंग्रेज़ों का दखल हो गया था—वहाँ अंधेरगर्दी और अव्यवस्था का बाज़ार गर्म था, कर्मचारियों के व्यवहार प्रजा के साथ अच्छे न थे। सर्व साधारण में असन्तोष बढ़ता जा रहा था। सर्वत्र आर्थिक शोषण हो रहा था। रियाया की सुख-दुःख की सुनने वाला कोई न था। सरकारी कर्मचारी जो लूट-मार करते थे, उसकी दाद-फर्याद सुनने वाला कोई न था। अंग्रेज़ी शासन में उस व्यवस्था का सर्वथा अभाव था जिससे देश में कारोबार चलते हैं और व्यवसाय की वृद्धि होती है। इससे प्रजा दिन पर दिन ग़रीब होती जा रही थी। कोई हाकिम किसी की सुनता ही न था। इसका यह परिणाम यह हुआ कि इस समय अंग्रेज़ी इलाकों में लूट-मार—डाकेज़नी के अपराध बढ़ते जा रहे थे, और राज्य की ओर से उसकी कोई रोक-थाम ही नहीं होती थी।

इन सब कारणों से कम्पनी के डाइरेक्टरों का आसन हिल गया था। उन्होंने वेल्जली को वापस बुला लिया था, और लार्ड कार्नवालिस को गवर्नर जनरल बनाकर भारत भेजा था। वे चाहते थे कि युद्ध बन्द करके भारत में शासन दृढ़ किया जाय, पर अकस्मात् ही उनकी मृत्यु हो गई। इन सब कारणों से होल्कर को भी साँस लेने का समय मिल गया था। जनरल लेक होल्कर को अपने फन्दे में फाँस कर संधि करना चाह रहा था, पर होल्कर बफरे हुए शेर की भाँति अंग्रेज़ों से लोहा लेने पर तुला बैठा था। वह बार-बार सन्धि की शर्तों को ठुकराता जाता था। अन्त में अंग्रेज़ों ने विश्वासघातियों का सहारा लिया और होल्कर के अन्त करने का निश्चय किया।

इस नाजुक अवसर पर चौधरी ने मराठों की बड़ी भारी सेवा की।

केवल इतना ही नहीं, कि उसने मुक्तेसर और अपने गाँवों में सुव्यवस्था स्थापित की और मराठों की रसद पानी मिलने का भी प्रबन्ध कर दिया। यह चौधरी ही का जोड़-तोड़ था कि मुक्तेसर से सहारनपुर तक के इलाके में बिना बाधा के मराठों की शक्ति मजबूत बनी रही, जिससे होल्कर और भाऊ की सेनाएँ परस्पर सम्बद्ध रहीं। इस काम में सब से बढ़ कर सहायता मिली सरधने की समरू बेगम से; जो मराठों के प्रभाव में रहीं, जिसका श्रेय श्रय चौधरी को था।

: १० :

समरू बेगम

समरू बेगम का असल नाम जेबुन्निसा बेगम था। उसने समरू नाम के एक फ्रेंच सैनिक से विवाह कर लिया था। और वह ईसाई हो गई थी। दुर्भाग्य मे समरू मर गया और बेगम विधवा रह गई। पर वह बड़ी चतुर और वीर रमणी थी। मेरठ के पास सरधने में उसकी जागीर थी। आरम्भ ही से मराठों का उसे बहुत प्रश्रय रहा। और अंत में जब दिल्ली के बादशाह शाहआलम सिंधिया के प्रभाव में आए तब बेगम समरू सिंधिया की एक सामन्त बन गई। और उसने अपनी जागीर बहुत बढ़ा ली थी। सिंधिया की सेना में बेगम की चार पल्टनें थीं। तथा द्वाबे के सभी जागीरदार और सरदारों पर उसका प्रभाव था। कहना चाहिए कि बेगम ही की मार्फत सिंधिया का सम्पर्क उत्तर की ओर के तमाम सामन्तों और जमींदारों से था। इसके अतिरिक्त उसकी जागीर ऐसे मौके पर थी कि द्वाबे और पंजाब को बिना उसके जोड़ा ही नहीं जा सकता था। सिंधिया के पतन के बाद बेगम ने अपनी पल्टनें स्वतन्त्र कर ली थीं। यह काम निश्चय ही अंग्रेजों के भारी प्रयत्नों से हुआ था। परन्तु इस समय होल्कर सहारनपुर में बैठा बेगम को अपने सम्पर्क में लाने के जोड़-तोड़ लगा रहा था। उधर रणजीतसिंह की बढ़ती हुई सत्ता से अंग्रेज़ बेखर न थे। इससे पंजाब से सम्पर्क बनाए रखने के

लिए अंग्रेज़ बेगम और उसके द्वारा उत्तर के सब ज़मींदारों और सरदारों को फोड़ने के लिए विस्तृत जाल फैला रहे थे—और बड़े-बड़े फंदे रच रहे थे। इसी से इस समय सहारनपुर में होल्कर का बैठे रहना अंग्रेज़ सहन नहीं कर सकते थे। उन्हें भय था कि यदि मराठों के साथ सिख शक्ति मिल गई तो अंग्रेज़ों को भारी विपत्तियाँ सहन करनी पड़ेंगी। और हकीकत तो यह थी कि यदि वीर सिख उन दिनों मराठों का साथ देते तो उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ ही में अंग्रेज़ी साम्राज्य की अधकचरी इमारत ढह गई होती।

लाहौर में इस समय रणजीतसिंह का सूर्य उदय हो रहा था। वह यद्यपि हैदरअली और शिवाजी के समान अशिक्षित, वीर और युद्ध कला में अत्यन्त निपुण था, पर वह न तो शिवाजी के समान दूरदर्शी और राजनीतिज्ञ था, न हैदरअली के समान प्रचण्ड साहसी। देश प्रेम भी उसका वैसा न था। फिर उसका उदय अंग्रेज़ों के सहयोग से ही हुआ था। उसे और उसके संगी-साथी सभी सिख सरदारों को यह कह कर अंग्रेज़ों ने फोड़ना जारी रखा था कि अंग्रेज़ सरकार आपकी सरपरस्त है और आपको मराठों को कोई खिराज देने की आवश्यकता नहीं है। इसके साथ ही रिश्वतों और झूठे-सच्चे वादों से सिखों को भरमाया भी गया था। तथा डराया भी जाता था कि यदि वे बलवान अंग्रेज़ सरकार से विरोध करेंगे तो ख़तरा मोल लेंगे। इसके अतिरिक्त अंग्रेज़ों की दोस्ती से उन्हें क्या-क्या लाभ हो सकते हैं। इसके बढ़े-चढ़े सब्ज़-बाग़ दिखाए जाते थे। फिर मुग़ल बादशाह का पतन उनके सम्मुख था।

इस समय भारत के अन्य सब नरेश सबसीडीयरी सन्धि के जाल में फंस चुके थे, केवल सिखों को जानबूझ कर आज़ाद छोड़ा गया था। इसी में अंग्रेज़ों का हित था। मराठों के दूसरे युद्ध में रणजीतसिंह और सिख सरदारों ने मराठों के विरुद्ध अंग्रेज़ों का साथ देकर ही बेहद लाभ उठाया था।

अंग्रेज़ों ने केवल यही नहीं, कि रिश्वतों, धमकियों और प्रलोभनों

का जाल सिखों पर फैलाया हो, उन्होंने एक अंग्रेज डाकू को, जिसका नाम जार्ज टामस था, शह दे रखी थी। वह अकेला पठानों के सवारों का एक दल लेकर सिख रियासतों में लूटमार करता और उन्हें दिक़ करता रहता था।

अभी तक भी होल्कर का आतंक अंग्रेज़ों पर था। उसने निरन्तर अंग्रेज़ों को हार दी थी। अंग्रेज़ों की अच्छी सेना और अफसर जसवन्तराय की तलवार का पानी पी चुके थे। अंग्रेज़ अफसरों ने जिन उपायों से सिंधिया और भोंसले को परास्त किया था उनका होल्कर के विरुद्ध प्रयोग अभी नहीं हुआ था। छल-कपट और जालसाज़ी को यदि एक ओर रखा जाय तो युद्धकौशल और वीरता में अभी भी अंग्रेज़ भारतवासियों के सामने टिकने के योग्य न थे।

अंग्रेज़ जसवन्तराय के नाम से चौंक उठते थे, और चिढ़ कर उसे डाकू, हत्यारा और लुटेरा कहते थे। उन्हें अब यह भय दीखने लगा था कि यदि होल्कर को कुचला न गया तो तमाम भारतीय नरेश ही उनका साथ छोड़ देंगे। इसलिए अंग्रेज़ होल्कर के संगी-साथियों को फोड़ने में जी-जान से लगे हुए थे। दुर्भाग्य था कि उन्हें उसमें सफलता मिलती जा रही थी।

इन्हीं सब बातों पर विचार कर भाऊ ने सोच-समझ कर चौधरी को समरू बेगम के पास भेजा। और हिदायत कर दी कि बेगम से जैसा कुछ समझौता हो—वह सहारनपुर जाकर होल्कर को बता दें। भाऊ ने अपने इस प्रयास की सूचना होल्कर के पास भी भेज दी थी।

चौधरी ने सरधने जाकर बेगम से मुलाक़ात की। बेगम की आयु इस समय साठ से ऊपर थी। परन्तु वह सख्त पर्दे में रहती थी। पर्दे ही में से उसने चौधरी से बातचीत की। चौधरी ने कहा—"मैं श्रीमन्त होल्कर की आज्ञा से आया हूँ। श्रीमन्त ने कहलाया है कि आप हमारे सामन्त हैं। सुखदुःख में एक हैं। अब इन फिरंगियों को मुल्क से खदेड़ बाहर करने में आप हमारी मदद कीजिए।"

"श्रीमन्त कैसी मदद चाहते हैं ?"

"आपकी चार पल्टन प्रथम ही से सिंधिधा की सेना में थीं। वहीं आप अब श्रीमन्त होल्कर की सेना में दे दीजिए।"

"श्रीमन्त मेरे साथ कैसा सलूक करेंगे ?"

"जैसा सिंधिया दर्बार से आपका होता आया है।"

"लेकिन अंग्रेज तो कुछ और ही कहते हैं।"

"वे क्या कहते हैं ?"

"खैर, उस बात को जाने दीजिए। आप कहिए कि यदि श्रीमन्त का पासा उल्टा पड़ा और अंग्रेज़ जीत गए तो मेरी कैसे रक्षा होगी ?"

"आप अभी से ऐसा क्यों विचारती हैं।"

"क्यों न विचारूँ। आप जानते हैं, तमाम सूबा अंग्रेज़ों के ताबे हो गया है। और दिल्ली, आगरा और अलीगढ़ भी उनके हाथ में हैं। बादशाह भी अब पैन्शन पाता है। अंग्रेज़ों का इक़बाल बुलन्द है।

"लेकिन हुज़ूर, आप यह तो सोचें कि जहाँ-जहाँ अंग्रेज़ों की हुकूमत है वहाँ रियाया का कैसा बुरा हाल है। लोग भूखों मरते हैं और चोर-डाकू-लुटेरों ने इलाकों के नाक में दम कर रखा है। किसी की जान-माल और इज्जत की सलामती नहीं है।"

"तो श्रीमन्त ही ने कोनसा अमन क़ायम किया है। मराठे जहाँ-जहाँ गए—लूट और आग साथ लाए। फिर उनके साथी—पिण्डारी ! अंग्रेज़ों ने ही तो पिण्डारियों के हाथ से लोगों की रक्षा का बन्दोबस्त किया है।"

"क्या बन्दोबस्त किया है ?"

"सुनती हूँ एक लाख फौज उनके खातों के लिए अंग्रेज जुटा रहे हैं।"

"क्या हुज़ूर समझती हैं, कि अंग्रजों ने पिण्डारियों के लिए एक लाख फौज जुटाई है—केवल मुल्क में अमन कायम करने के लिए ?"

"मैं तो ऐसा ही समझती हूँ।"

"तब तो आप यह भी मानेंगी कि अंग्रेज़ हमारे मुल्क और यहाँ के आदमियों को भी बहुत चाहते हैं।"

"इन बातों से तो यही मालूम होता है।"

"तो सरकार फिर यह लूट—बदअमनी, जुल्म और अन्धेरगर्दी किस लिए है ? यह रिश्वत खोरी का बाजार गर्म क्यों है ? फिर—आज उन का और कल आप का दिन है। हुजूर तो इसी मुल्क की मिट्टी में पैदा हुई हैं। ये अंग्रेज तो परदेसी हैं, जब इन्होंने बादशाह तक से वादा-खिलाफी की है—तब इस बात का क्या ठिकाना कि वे हुजूर और हुजूर जैसी दूसरी हिन्दुस्तानी छोटी-छोटी रियासतों को मलियामेट न कर डालेंगे।"

"लेकिन श्रीमन्त से हम क्या उम्मीद कर सकते हैं। क्या आप नहीं जानते कि मराठों को चौथ देते-देते सारे मुल्क का दिवाला निकल गया है।"

"फिर भी सरकार, मराठे अपने ही देश की मिट्टी के बने हैं। ये फिरंगी क्या कम हैं। ये तो सारे देश का खून चूस-चूस कर सात समंदर पार भेज रहे हैं। सारा देश तबाह हो रहा है हुजूर।"

"तो आप क्या समझते हैं कि श्रीमन्त में उन्हें मार-भगाने की शक्ति है ?"

"शक्ति तो सरकार, एक में नहीं, सभी के मेल में होती है। आप अच्छी तरह जानती हैं कि अंग्रेज़ों ने पेशवा, सिंधिया और भोंसले को ख़त्म कर दिया। मराठा-मण्डल भंग हो गया। अब तो मराठा मण्डल की चार ताकतों में सिर्फ होल्कर सरकार ही तो बचे हैं।"

"क्या उनकी ताकत सिंधिया सरकार से बढ़ कर है ?"

"हुजूर, आप अगर श्रीमन्त को भरोसा दें, महाराज रणजीतसिंह अपनी तलवार ले कर उन के साथ उठ खड़े हों, तो अभी बिगड़ा क्या है। आप तो जानती ही हैं कि भरतपुर का दर्बार श्रीमन्त के साथ है, सिंधिया और भोंसले भी अभी जिन्दा हैं, सिर्फ परकैंच कर डाला गया है उन्हें। आप के एक इशारे से सहारनपुर के नवाब बब्बू खाँ, रामपुर के

नवाब गुलाम मुहम्मद खाँ श्रीमन्त को सहारा दें—तो अभी भी श्रीमन्त की रकाब के साथ डेढ़ लाख तलवारें हैं।"

"हज़रत बादशाह सलामत का श्रीमन्त की ओर कैसा रुख़ है?"

"हुज़ूर, श्रीमन्त की दौड़-धूप का तो सारा दारोमदार ही बादशाह की हस्ती क़ायम करने पर है। सिंधिया सरकार भी बादशाह सलामत की छत्रछाया में खड़े थे—आप ने तो हज़रत सलामत बादशाह का वह सुख़न सुना होगा—

माधो जी सिंधिया फ़र्ज़न्द जिगर बन्देमन
हस्त मसरूफ़ तलाफ़ीए सितम गारिएमा।

"वह तो नमकहराम सैयद रज़ाख़ाँ की सारी करतूत थी। जिस का मुँह अंग्रेज़ों ने चाँदी के सिक्कों से भर दिया था।"

"वह तो सिंधिया सरकार के रेज़ीडेण्ट का एजेन्ट था जो शाही दर्बार में रहता था।"

"जी हाँ सरकार। उसी ने तो आस्मान फाड़ डाला। हज़रत सलामत और सिंधिया सरकार के मन फाड़ दिए। सोचिए तो हुज़ूर, सैयद रज़ा ने झूठी ही आशाओं के सहारे बादशाह सलामत और सिंधिया सरकार में फूट डाल दी। शेरे-दक्कन सुलतान टीपू के साथ विश्वासघात करने के बदले राजकुल को ज़रा-सा टुकड़ा किसी शर्त्त पर मिल भी गया, पर सिंधिया के साथ बदसलूकी करने के सिले में हज़रत सलामत बादशाह को क्या मिला ? सिर्फ़ विश्वासघात। ये हज़रत सलामत वही शहनशाहे हिंद शाहे आलम हैं जिन के सामने खड़े हो कर और हाथ पसार कर अंग्रेज़ों ने बंगाल की दीवानी के अख़्तियारात हासिल किए थे। आज दुनिया पर रोशन है कि अंग्रेज़ों ने तख़्ते मुग़लिया को चूर-चूर कर दिया। अब बादशाह सलामत अंग्रेज़ों के महज़ पैन्शनयाफ़्ता क़ैदी हैं। जो अपने ही बाप-दादों के क़िले में क़ैद हैं।"

चौधरी ने दोनों हाथ पसार कर और आँखों में आँसू भर कर गद्-

गद् वाणी से ये शब्द कहे। तो सुन कर बेगम पर्दे में कुछ देर खामोश बैठी रहीं।

बहुत देर सन्नाटा रहा—फिर बेगम ने मन्द स्वर में कहा—'चौधरी, मैं अपनी चार पल्टनें होल्कर सरकार को दूँगी—बशर्ते कि भरतपुर दरबार अपनी बात से न फिर जाय और लाहौर दरबार भी श्रीमन्त को साथ दे।"

चौधरी ने कहा—'यह काफी नहीं है, सरकार नवाब बब्बू खाँ और नवाब गुलाम मुहम्मद खाँ—हुजूर की बात को नहीं टालेंगे। आप उन पर भी दबाव डालिए।"

"खैर, मैं एक खत नवाब बब्बू खाँ के नाम आपको दूँगी। लेकिन वह शख्स कम जर्फ हैं। उसका भरोसा नहीं। हाँ, नवाब गुलाम मुहम्मद खाँ कांटे का आदमी है। उसके पास मैं खुद पैग़ाम भेज दूँगी। लेकिन आप यदि सहारनपुर जा रहे हैं तो इस बात का ध्यान रखिए कि वहाँ के सभी गूजर सरदार श्रीमन्त का साथ दें। यह बड़ी बात होगी चौधरी।"

"मैं पूरी कोशिश करूँगा सरकार और सब बात श्रीमन्त से करूँगा।"

"एक बात और, जब तक वक्त न आए, सब बातें पोशीदा रहें। तथा श्रीमन्त इस बात का ध्यान रखें कि मेरे इलाक़े में मराठे कुछ नुकसान न करने पाएँ।"

"ऐसा ही होगा हुजूर।"

"तो खुदा हाफ़िज़, अब आप तशरीफ़ ले जा सकते हैं।"

बेगम ने इत्रदान देकर चौधरी को विदा किया। चौधरी प्रसन्न मुद्रा में एक क्षण भी व्यर्थ न खो सहारनपुर की ओर चल दिये।

: ११ :

नवाब बब्बू खाँ

सहारनपुर के नवाब बब्बू खाँ अपने दीवान ख़ाने में मसनद के सहारे लेटे मुश्की तम्बाकू का मज़ा ले रहे थे। और पानों की गिलौरियाँ

कचर रहे थे। उनकी बग़ल में अस्करी जान सहारनपुर की मशहूर रंडी अदा से बैठी थी। सामने उनके मुसाहिब छुट्टन मियाँ रौनक अफरोज़ थे।

नवाब की उम्र तीस को पहुँच रही होगी। मगर चाँद अभी से गंजी हो गई थी। मूछों के बाल छीदे, डाढ़ी गुटी हुई, रंग साफ, पेट बढ़ा हुआ। ठिगने और मोटे। ज़रा हकला कर बातें करते थे। अस्करी की आयु कोई बीस बरस की होगी। बनाव सिंगार में चुस्त, चपल, चूड़ीदार पाजामा, और जामदानी का शर्बती दुपट्टा लापरवाही से कन्धों पर पड़ा हुआ। सटी कमख्वाब की कुर्ती। रंग निहायत साफ, बत्तीसी सुढ़ार और आँखें बड़ी-बड़ी।

छुट्टन मियाँ दुबले पतले, चेचक के दाग चहरे। दुबले-पतले ढीला पाजामा और शेरवानी बदन पर मखमली टोपी सर पर। बात-बात पर जोड़-तोड़ लगाने में होशियार।

नवाब ने कहा—"अमा, छुट्टन, इस जुमे रात को मेरठ चल कर नौचन्दी का हुजूम देखा जाय। भई ज़रूर विल ज़रूर चलेंगे। सफेदपोशों का जमाव, परियों का बनाव-चुनाव, ज़न मर्द का हुजूम। देखना शर्त है।"

छुट्टन मियाँ ने तड़ाक से जवाब दिया—"वल्लाह क्या बात सूझी है। हुजूर, सातों विलायतों में नौचन्दी की धूम है, लेकिन लुत्फ तब है कि महबूबा साथ हों।"

"वी अस्करी साथ चलेंगी, लाखों में," नवाब ने कनखियों से अस्करी की ओर देखकर कहा।

लेकिन अस्करी जान ने अदा से दोनों कानों पर हाथ धर के कहा—"ना साहेब बन्दी ना जाने की। उस दिन दरगाह गए सो कान पकड़े, तोबा की।"

नवाब ने त्योरियों में बल चढ़ा कर कहा—"अमा छुट्टन, सुना तुमने, मैंने कहा—बेवफाई तो इन लोगों की घुट्टी में पड़ी है।"

"तो साहब, कोई अहले-वफा ढूंढ़िए," अस्करी ने मुंह बना कर कहा। लेकिन छुट्टन मियाँ बोले—

"ये तो माशूकों के चोचले हैं; हुज़ूर, वी अस्करी चलें और लाखों में चलें।"

"बस चल चुके हम।"

"अजी बीच खेत चलो। लो हंस दो इसी बात पर," नवाब ने गुद-गुदा कर कहा।

अस्करी खिलखिला कर हंस पड़ी।

छुट्टन मियाँ बोले—"खुदा ने यह हुस्न दिया है तो रईस तलुए सहलाते हैं।"

"तो हमारे हुस्न में शक ही क्या है, धूम है आज हमारी भी परी-ज़ादों में।" अस्करी ने क़हक़हा लगा कर कहा।

"अजी तो ठस्से से बाहर निकलना भी तो रईसों को ज़ेब देता है, टकलचों को नहीं। दो-चार खिदमतगार पीछे हैं, एक दो दोस्त मुसा-हिब साथ। मशालची है, महबूबा है, बस और क्या।"

"तो टमटम पर चलेंगे या छड़े दम घोड़े पर?"

"घोड़ों पर वी अस्करी कैसे चलेंगी?"

"लो और हुई, पूछो इस मर्दुए से," अस्करी ने नाक सिकोड़कर कहा।

"बस तो टमटम ठीक है।"

जिस समय नवाब अपने दीवानख़ाने में बैठे मज़े में गप्पें उड़ा रहे थे—उसी समय ड्योढ़ियों पर पहुँच कर चौधरी ने एक ख़िदमतग़ार से पूछा—

"नवाब साहब भीतर हैं?"

"जी नहीं, टमटम पर सवार हो हवाखोरी को तशरीफ ले गए हैं।" इतना कह कर वह तेज़ी से एक ओर को चला गया। चौधरी इधर-उधर देखने लगे। इसी समय भीतर से एक बूढ़ा आदमी निकला, उसे देख कर चौधरी ने पूछा—"बड़े मियाँ, नवाब साहब से मुलाकात कब होगी।"

"अभी नहीं, सरकार ख्वाबगाह में हैं।"

चौधरी ने आश्चर्य से बूढ़े की ओर देखा। यह क्या बात है, अभी एक आदमी कहता है कि हवाख़ोरी को गए हैं, और यह कहता है कि आरामगाह में हैं। सच बात क्या है?

पर वह बूढ़ा भी एक ओर को चल गया। दूसरे प्रश्न का उसने अवसर ही नहीं दिया।

अब और कोई आदमी आए तो पूछा जाय। चौधरी इसी उधेड़-बुन में थे कि एक अंग्रेज़ सवार अहाते में घुस आया। अंग्रेज़ को आता देख वही बूढ़ा दारोग़ा लपकता हुआ आया। उसने झुक कर सलाम किया—और पूछा—"हुज़ूर का क्या हुक्म है?"

"अम नवाब से मिलना मांगता अबी।"

"हुज़ूर, नवाब तो एक दोस्त के यहाँ दावत में तशरीफ़ ले गए हैं। कल जब हुक्म हो—वे कचहरी या दफ्तर में हुज़ूर से मिल लेंगे।"

"कल नेई, अबी। हमज्वाइन्ट मैजिस्ट्रेट है, अबी मिलना माँगता। यू ब्लडी।"

इसी समय भीतर जनानी ड्योढ़ी से एक महरी निकली। सुमँई रंग, दांतों में मिस्सी, मेंहदी रंगे बाल, मुँह में पान की गिलौरी। सुथना फड़काती हुई।

साहब ने उसे डांटकर पूछा—"ए, नवाब अन्दर किआ करता? अम तुम कू हवालाट भेजना मांगता।"

महरी दांतों में उंगली दाबती महल में भाग गई। उसने बेगम से हाँफते-हाँफते कहा—"सरकार दौड़ आई है। कुछ दाल में काला मालूम होता है। अल्लाह खैर करे, एक फ़िरंगी घोड़े पर सवार फाटक घेरे खड़ा है।"

बेगम ने सुना तो कांप गई। महरी से कहा—"तो यहाँ क्या मर रही है—जाकर नवाब को इत्तला कर, ज़रा देखें तो कौन मुआ फ़िरंगी सवेरे-सवेरे सिर पर मंडरा रहा है।"

ख़बर सुनकर नवाब साहेब बाहर आए, साथ में छुट्टन मियां। सलामें झुकाते। आदाब कहते।

साहेब ने कहा—"वेल नवाब, हम भौट डिक हुआ। टुमारा नौकर बड़जाट हाय। अमकू जुठ बोला।"

नवाब ने हाथ मलते हुए कहा—"सख्त अफसोस का मुक़ाम है हुज़ूर। वल्लाह, इन नालायक नौकरों की वजह से मालिक भी बदनाम होते हैं, आप..............."

किन्तु साहेब ने बीच ही में बात काट कर कहा—

"टुम जल्दी करो नवाब, साहेब कमिश्नर बहादूर अबी टुम से बाट करेगा।"

"तो हुज़ूर, मैं अभी चला।" नवाब ने टमटम जुड़वाई और सवार हो साहेब के साथ चल दिए।

सब नौकर-चाकर, दारोग़ा, महरी हक्के-बक्के खड़े के खड़े देखते रह गए। चौधरी भी देखते रहे। किसी से क्या कहें, कुछ समझ में नहीं आया। वे फिर आयेंगे, यह निश्चय करके वहाँ से चल दिए।

: १२ :

होलकर के सम्मुख

छोटा क़द, किन्तु अत्यन्त सुदृढ़ और मज़बूत शरीर, रंग उज्ज्वल-श्याम वर्ण, भव्य मुखाकृति, अचानक किसी बन्दूक़ के छूट जाने से एक आँख जाती रही थी, फिर भी चेहरे की प्रभावशाली मुद्रा में अन्तर न आया था। ओठों के सम्पुट उसके दृढ़ विश्वास को प्रकट करते थे। और उसके सम्मुख उसकी आज्ञा का उल्लङ्घन करना अशक्य था। यह था वीर-वर जसवन्तराय होलकर।

अपने सब सरदारों से घिरा यह नरश्रेष्ठ इस समय अत्यन्त व्यग्र और अशान्त मुद्रा में टहल रहा था। उसकी कसी हुई मुट्ठी में तलवार की मूठ थी। और उसकी एक मात्र आँख से ज्वाला निकल रही थी।
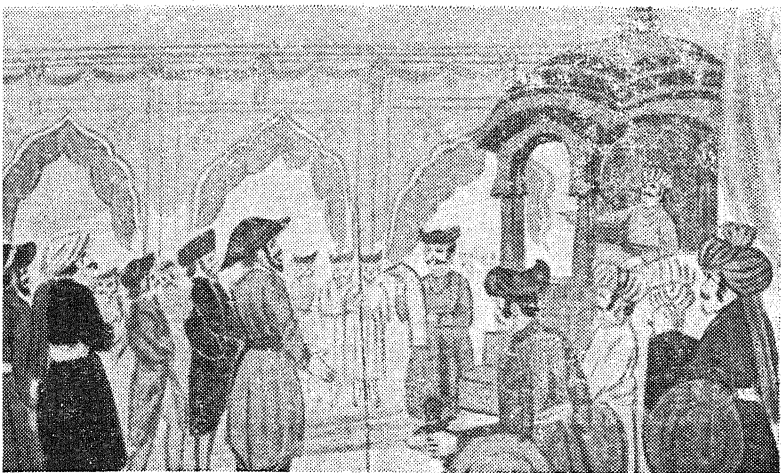
सब सरदार, सेनापति और मंत्री नीची नज़र किए चुप खड़े थे। सामने ही उसका घोड़ा कसा हुआ तैयार खड़ा था। उसके मस्तिष्क में विचारों के तूफ़ान आ रहे थे, और वह तेजी से क़दम उठाए इधर से उधर टहल रहा था।

"तो यह सच है"—उसने सामने खड़े एक मराठा सरदार की ओर देख कर लरज़ती ज़बान से कहा—"कि जिस प्रदेश पर मैं ने अपने ख़ून-पसीने को एक करके अमन—व्यवस्था और शान्ति स्थापित की थी—उसे अब—दरोग़ हलफी, विश्वासघात, बलात्कार, अपहरण—क़त्ल, हत्या—लूट, बग़ावत और आपस की लड़ाइयों ने कलंकित और टुकड़े-टुकड़े कर रखा है।"

सामने खड़े सरदार ने हाथ बाँध कर कहा—"श्रीमन्त, ऐसा ही है।"

"और तुम यह भी कहते हो कि यह सब उस पाजी—नमक हराम अमीरखाँ की करतूत है, जिसे मैंने धूल में से उठाया था। और जिस के

भरोसे मैं राजधानी छोड़ कर यहाँ रक्त में स्नान कर रहा हूँ।"

"श्रीमन्त, उस गुनाहगार ने केवल यही नहीं—कि तीस लाख रुपया अंग्रेज़ों से घूंस में लिया है, उसने ईस्ट इण्डिया कम्पनी से एक सन्धि भी कर ली है। और इसी सिले में श्रीमन्त की रियासत का एक बड़ा हिस्सा जागीर में पाया है। यह बात यद्यपि बहुत पोशीदा रखी गई है—परन्तु मेरे जासूसों ने सही खबर दी है।"

"बस, या इस आततायी डाकू की कुछ और भी कीर्ति बखानने को शेष है?"

"और भी बात है सरकार। उसने अंग्रेज़ों के इशारे से पिण्डारियों का एक भारी दल संगठित किया है। जो उसी के संकेत से श्रीमन्त के इलाक़ों तथा अंग्रेज़ी इलाक़ों में इस क़दर लूट-मार और बलात्कार तथा आग लगाने की सरगर्मियाँ कर रहे हैं, कि लोग त्राहिमाम् त्राहिमाम् कर रहे हैं।"

होल्कर टहलते-टहलते रुक गया। उसने जलती हुई अपनी एक आँख उस सरदार के मुख पर जमा कर पूछा—

"अंग्रेज़ी इलाक़ों पर क्यों।"

"इसलिए, कि अंग्रेज़ों के दुराचार और लूट-मार से अंग्रेज़ी रियाया में बेचैनी फैल रही है उससे कहीं रियाया बिगड़ न उठे। इसी से उसे निरन्तर मुसीबत में उलझाए रखने के लिए। परन्तु सरकार, बात और भी गम्भीर है।"

"वह भी झटपट कह डालो।"

"अंग्रेज़ों की सलाह से अमीरखाँ ने जो पिण्डारियों का यह बड़ा दल खड़ा किया है, उस का उद्देश्य यह भी था कि मराठा शक्ति के मुक़ाबिले एक समान दूसरी शक्ति तैयार रहे; जिसे चाहे जब, मराठा शक्ति को खत्म करने और उसके बाद देश पर दखल करने में काम में लाया जाए।"

"तो यह मैं झूठ ही सुन रहा हूँ कि अंग्रेज़ पिण्डारियों के दमन के लिए फ़ौजें इकट्ठी कर रहे हैं?"

"यह भी सच है श्रीमन्त। अंग्रेज़ों की इस समय एक लाख सेना मराठा-मण्डल को घेरे पड़ी है। जिस के पास समर्थ तोपखाना है। कहा तो यही जाता है कि यह पिण्डारियों के दमन के लिए है, पर हक़ीक़त में यह सब तैयारी मराठा शक्ति को चकनाचूर करने के लिए है।"

"तो अफ़ज़लगढ़ की लड़ाई केवल एक तमाशा था।"

"श्रीमन्त, मैंने अपनी आँखों से देखा कि—विश्वासघाती अमीरखाँ ने अफ़ज़लगढ़ के मैदान में जान-बूझ कर हमारे मराठा जवानों को दुश्मनों के भालों और गोलियों के हवाले कर दिया।"

"और अब वह अपनी काली करतूत दिखाने को भरतपुर आ रहा है? पर भरतपुर का राजा रणजीतसिंह कांटे का आदमी है।"

श्रीमन्त, भरतपुर के महाराज अपने वचन पर दृढ़ हैं। परन्तु अंग्रेज़ों के जाल वहाँ भी फैल रहे हैं।"

"खैर, अब तुम कहो," उसने एक दूसरे सरदार की ओर देख कर कहा—"लाहौर दर्बार की क्या ख़बर लाए हो।"

"रणजीतसिंह और उनके सिख सरदार सोलहों आना अंग्रेज़ों के हाथों में खेल रहे हैं। रणजीत सिंह ने साफ जवाब दिया है कि श्रीमन्त की भलाई इसमें है कि वे अंग्रेज़ों से सुलह कर लें, और मुझसे कुछ भी आशा न रखें।"

सरदार का यह जवाब सुनकर होल्कर क्षण भर चुप खड़ा रहा।

फिर उसने अपने सेनापति भास्करराव की ओर देख कर कहा—"वे तीनों अंग्रेज़ अफसर कहाँ है, जिन्हें गिरफ्तार किया गया था। न्हें हाजिर करो।"

भास्कर राव के संकेत से थोड़ी ही देर में रस्सियों से बंधे तीनों अंग्रेज़ अफसरों को हाजिर किया गया। बन्दी नीचा सिर किए चुप-चाप आ खड़े हुए। होल्कर ने आज्ञा दी, 'इनके बन्धन खोल दिए जायँ।'

तुरन्त उनके बन्धन खोल दिए गए। होल्कर ने एक के निकट जाकर पूछा, 'तुम्हारा नाम क्या है?"

"कप्तान विकर्स"

" और तुम्हारा ?" उसने दूसरे से प्रश्न किया।

"कप्तान टाड"

"और तुम ?" उसने तीसरे से प्रश्न किया।

"श्रीमन्त, मैं कप्तान रायन हूँ।"

"तुम तीनों हमारी सरकार की सेवा में एक-एक कम्पनी के अफसर थे ?"

"जी हाँ श्रीमन्त", तीनों ने जवाब दिया।

'और अब, जब युद्ध शुरू हुआ, तुमने जनरल लेक से पत्र-व्यवहार किया, उन्हें अपनी सेना के भेद बताए ?"

"हम श्रीमन्त के इस प्रश्न का उत्तर देने में असमर्थ हैं।"

"जब तक तुमने सेना में नौकरी की, तब तक तुम्हें पूरी तनख्वाह मिलती रही ?"

"तनख्वाह के मामले में हमें कोई शिकायत नहीं है।"

"क्या तुम्हें हमारी सरकार से और भी कुछ शिकायत है ?"

"नहीं श्रीमन्त।"

"तुम्हारी कुछ इच्छा है ?

' केवल यही, कि हमें अंग्रेज़ी सेना में भेज दिया जाय।"

"बस, या और कुछ ?"

"बस।"

"तो", उसने सेनानायक भास्कर राव की ओर देखकर कहा, "सैनिक नियमों का उल्लंघन करने, विश्वासघात और जासूसी करने, शत्रु से गुप्त सम्बन्ध स्थापित करने के अपराध में तुरन्त इन तीनों अंग्रेज़ों को गोली से उड़ा दिया जाय। और इनकी इच्छानुसार इनकी लाशों को अंग्रेज जनरल लेक के पास भेज दिया जाय।"

तत्काल बन्दूकें इन तीनों अभागों की ओर तन गईं। तीनों ने

बहुत रोना पीटना किया—पर तुरन्त ही गोलियों से छलनी होकर तीनों के शरीर धूल में लोट गए।

सारी सेना में सन्नाटा छा रहा था। लाशें तुरन्त वहाँ से हटा दी गईं। तब होल्कर ने मीर मुन्शी को तलब किया। मुन्शी के आने पर उसने हुक्म दिया—"अंग्रेज़ों के गवर्नर जनरल को हमने एक ख़त लिखा था—वह ख़त तुम मेरे इन सब मित्रों को और सेना को सुना दो।' मीर मुन्शी ने ख़त पढ़ाः—"मित्रता का सम्बन्ध पत्रों के आने-जाने अथवा एक दूसरे की ओर रिवाज़ी आदर सत्कार दिखाने पर निर्भर नहीं है। उचित यही है कि परिणाम को अच्छी तरह सोच समझ कर आप पहले मुझे यह सूचना दीजिए कि आप सब झगड़ों को तय करने, प्रजा की सुख-शान्ति में बाधा न पड़ने देने और "मित्रता क़ायम रखने के लिए किन उपायों की तजवीज करते हैं। ताकि उसके बाद मैं आप के पास एक ऐसा विश्वस्त आदमी भेज सकूँ, जिसे दोनों पक्ष वाले मंज़ूर करलें। आप के प्रेम पर हर तरह विचार करते हुए, कम्पनी अथवा उसके सम्बन्धियों की ओर से मेरे दिल में किसी तरह के शत्रुता के विचार नहीं हैं। हमारी इस मित्रता को बढ़ाने के लिए आप भी अपनी ओर से प्रेम पत्र भेजने की मुझ पर कृपा कीजिए।"

पत्र समाप्त करके मीर मुन्शी ने होल्कर को ओर देखा जो इस समय शान्त स्थिर खड़ा था। उसने कहा—"अब अंग्रेज़ गवर्नर का जवाब भी सुना दो—

मीर मुन्शी ने पढ़ा—"आप की माँगें बे-बुनियाद हैं। और आप को मालूम होना चाहिए कि अंग्रेज़ सरकार ने हिन्दुस्तान के अथवा दक्षिण की किसी भी रियासत के साथ अपने राजनैतिक सम्बन्ध में इस तरह की माँगें आज तक कभी मंज़ूर नहीं कीं। और इस तरह की माँगें सुनना भी अंग्रेज़ सरकार की ताक़त और शान के ख़िलाफ़ है।"

मीर मुन्शी जब ख़त पढ़ चुका तो एक बार होल्कर ने आँख उठा कर चारों ओर देखा। उस समय सैनिकों के मुँह क्रोध से तमतमा रहे

थे। उन्होंने प्रचण्ड स्वर से होल्कर का जय घोष किया।

होल्कर चुपचाप खड़ा ओंठ चबाता रहा। फिर उसने मीर मुन्शी को आज्ञा दी—"लाहौर दरबार को एक ख़त लिखो—

"महाराजा रणजीतसिंह, आप ने एक विपत्तिग्रस्त अतिथि और देश-वासी की ओर धर्म पालन नहीं किया, तो स्मरण रहे, मेरे कुल में राज्य क़ायम रहेगा—किन्तु आप के कुल की सत्ता का शीघ्र ही अन्त हो जायगा।"

इस समय होल्कर की वाणी काँप रही थी और भावावेश से उस का चेहरा लाल हो रहा था। उसने ऊँची आवाज़ में कहा—"कौन बहादुर यह खत लाहौर दर्बार में ले जायगा।"

इस ललकार से सन्नाटा छा गया। चौधरी अब तक चुपचाप खड़े यह सब दृश्य देख रहे थे। अब उन्होंने आगे बढ़ कर कर-वद्ध कहा—"श्रीमन्त, इस सेवक को यह सेवा बजा लाने की प्रतिष्ठा बख़्शी जाय।"

"यह कौन है?" होल्कर ने संदेह से चौधरी की ओर देख कर उङ्गली उठा कर कहा।

"श्रीमन्त का एक आज्ञाकारी अनुचर," यह कह कर चौधरी ने आगे बढ़ होल्कर को जुहार किया और भाऊ का पत्र उन के हाथ में थमा दिया।

पत्र पढ़ कर होल्कर के मुख पर प्रसन्नता लौट आई। उसने निकट-वर्ती सरदार को संकेत से कहा—इसे मेरे पास ले आओ। वह तेज़ी से अपने ख़ीमे में चला गया। और वह सरदार चौधरी को साथ ले तत्काल ही—होल्कर की पेशी में आ हाज़िर हुआ।

: १३ :

होल्कर से परामर्श

चौधरी ने सब बातें व्योरे बार होल्कर से कह दीं। भाऊ के जवाबी संदेश, बेगम समरू से मुलाक़ात और नवाब बब्बू ख़ाँ से मिलने जा कर

भी न मिलने की बात चौधरी ने कह दी। सब बातें सुन कर होल्कर ने कहा—"कह सकते हो बब्बू ख़ाँ इस वक्त कहाँ है ?"

"मैं निश्चय पूर्वक कह सकता हूँ—वह दिल्ली गया है। तीन दिन मैं उस के पीछे मारा-मारा फिरा। लेकिन मुलाक़ात नहीं हुई। इन तीन दिनों में अंग्रेज़ों ने उसे एक क्षरण के लिए भी अकेला नहीं छोड़ा। रात-शिकरम में सवार हो कर वह दिल्ली चला गया है। मैंने स्वयं उसे दिल्ली की शिकरम में बैठते देखा है। उस के साथ एक फ़िरंगी भी गया है।"

"क्या तुम ने यहाँ के गूजर सरदारों से भी बातचीत की है।"

"की है श्रीमन्त, मुझे तो यही प्रतीत होता है—वे सब वक्त पर दग़ा देंगे। इन में कोई भी तो विश्वासी जीव नहीं हैं। पैसे का लालच तो है ही, फ़िरंगियों का आतंक भी उन पर है।"

"तब तो मेरा यहाँ रहना ही बेकार है। लेकिन चौधरी, तुम क्या सचमुच लाहौर मेरा संदेशा ले जाओगे ?"

"अवश्य ही श्रीमन्त। मैं महाराज रणजीतसिंह से बात भी करूँगा।"

"वह क्या तुम्हारी बात सुनेगा ?"

"उस का रुख़ तो मालूम होगा।"

"खैर, तो तुम अभी डाक बैठा कर लाहौर रवाना हो जाओ। अपनी यात्रा गुप्त रखो। किन्तु लाहौर में अधिक समय नष्ट न करो, और उल्टा-फेर दिल्ली जाओ। समय हो तो बब्बू ख़ाँ के हालचाल—अंग्रेज़ों की हलचल और बादशाह के दर्बारी हालचाल और बादशाह का रुख़ देख-भाल कर जितना शीघ्र सम्भव हो, मुझ से भरतपुर में आ मिलो। मैं आज ही तीन पहर रात बीते यहाँ से कूच करूँगा।"

"श्रीमन्त की आज्ञा का अक्षरक्षः पालन होगा।"

"तुम इस वक्त मुझ से कुछ चाहते हो चौधरी ? लेकिन मैं रुपया इस वक्त नहीं दे सकता।"

"सरकार, रुपये की या और किसी वस्तु की इस सेवक को बिल्कुल आवश्यकता नहीं है। श्रीमन्त का काम पूरा हो। दिल्ली का तख़्त श्रीमन्त के प्रभाव में आ जाय, यही मेरी आरज़ू है।"

"मैं तुम्हें एक ख़त दूँगा, दिल्ली पहुँच कर वह तुम बादशाह को देना। यदि बादशाह से मुलाक़ात न हो सके तो वज़ीर असद ख़ाँ को देना। इन दोनों तक तुम्हारी पहुँच न हो तो ख़त नष्ट कर देना। तीसरे के हाथों ख़त न पड़ने पाए। याद रखोगे?"

"अवश्य श्रीमन्त।"

"ख़त अभी दो घण्टे में तुम्हें मिल जायगा—क्या तुम्हारे पास इस क़दर रुपया है कि तुम यह सफ़र आराम से कर सको?"

"है श्रीमन्त।"

"फिर भी यह रख लो।" होल्कर ने गले से पन्नों का बहुमूल्य कण्ठा उतार कर, चौधरी के हाथों में थमा दिया।

चौधरी ने हाथ बाँध कर कहा—"श्रीमन्त, मैंने भाऊ साहब से आधा सेर आटा माँगा था, उन्होंने चालीस गाँवों में मेरी दुहाई फिरवा दी। यह आप का ही दिया हुआ है सरकार। अब इस क़ीमती कण्ठे को श्रीमन्त ही दास का नज़राना समझ कर रख लें-तो कृपा होगी, टेढ़ा समय है श्रीमन्त।"

होल्कर के नेत्र में एक आँसू झलक आया। पर तुरन्त ही उस ने कठोर वाणी से कहा, "कण्ठा रख लो, हुक्म-अदूली मत करो। और जल्द हम से भरतपुर में मिलो।"

"जैसी आज्ञा श्रीमानों की।"

चौधरी होल्कर को जुहार मुजरा कर उठ आए। और उन्होंने तुरन्त ही लाहौर की राह पकड़ी।

: १४ :

रणजीतसिंह से भेंट

पंजाब में सिख साम्राज्य का संस्थापक महाराज रणजीतसिंह सुकर-चकिया मिसल के नेता महासिंह का पुत्र था—वह बचपन ही में चेचक से अपनी एक आँख खो चुका था। बारह वर्ष की आयु में अपने पिता की मृत्यु के बाद वह अपने मिसल का नेता बन गया और सोलह वर्ष की आयु में जब उस का विवाह कन्हैया मिसल में हुआ, तो इन दो मिसलों के मिलान से युवा रणजीतसिंह ने एक नई शक्ति संगठित कर ली। इन दिनों अहमदशाह अब्दाली का पोता ज़मानशाह अफ़ग़ानिस्तान का शासक था। उसने पंजाब के कुछ भाग और लाहौर पर अधिकार कर लिया था। रणजीतसिंह ने उसे प्रसन्न करके लाहौर पर अधिकार कर लिया। और उन्नीस वर्ष की आयु में वह लाहौर का राजा बन बैठा। इसके बाद भंगी मिसल से उसने अमृतसर भी दख़ल कर लिया। तथा आस पास के इलाक़ों को जीत कर सतलुज नदी तक सारा मध्य पंजाब अपने अधीन कर लिया। इसके बाद सतलुज नदी पार करके सिख रियासतों—नाभा, पटियाला, जींद आदि पर उसने हाथ बढ़ाया तथा लुधियाना पर क़ब्ज़ा कर लिया। इस पर दुर्बल सिख रियासतों ने अंग्रेज़ों से हस्तक्षेप की माँग की। पर चतुर अंग्रेज़ों ने इस समय फूट-नीति का सहारा ले—सर चार्ल्स मेटकाफ़ को अमृतसर भेज रणजीतसिंह से सन्धि कर ली। जिस से सतलुज नदी रणजीतसिंह के राज्य की सीमा नियत हुई, और सतलुज के इस पार की सारी सिख रियासतें अंग्रेज़ी संरक्षण में आ गईं। इस सन्धि के हो जाने के कारण रणजीतसिंह अब पूर्व की ओर अपने पैर नहीं बढ़ा सकता था। इसलिए इस समय उत्तर-पश्चिमी सीमा पर उसकी नज़र थी, और वह लड़ाई पर लड़ाई करके अटक, मुलतान, काश्मीर, हज़ारा, बन्नू, डेराजात तथा पेशावर आदि जीतता हुआ अपना एक नया शक्तिशाली सिंख साम्राज्य खड़ा कर रहा था। उस की सेना

इस समय अस्सी हज़ार थी, जो पराक्रमी और शक्तिशाली सिखों की संगठित और इटली तथा फ्रान्सीसी अफ़सरों द्वारा यूरोपियन रीति पर युद्ध-कला में शिक्षित थी। रणजीतसिंह को घोड़ों का बड़ा शौक था—वह स्वयं भी उत्तम शहसवार था। उसका घुड़सवार रिसाला प्रथम श्रेणी का था। तथा तोपख़ाना भी परम उत्कृष्ट था—जिस में पाँच-सौ उम्दा तोपें थीं। इस समय उसकी रकाब के साथ हरीसिंह नलवा जैसे वीर सेनानी थे, जिस के नाम के आतंक ही से पठान स्त्रियों का गर्भपात हो जाता था। वह वीर सेनापति ज़मरुद के दुर्ग का अधिपति तथा पश्चिमोत्तर सीमा पर सिख साम्राज्य की आँख था।

रणजीतसिंह साहसी, वीर, योद्धा और प्रबन्धक था। अपने धर्म का

वह नेता और सब धर्मों के प्रति उदार था। उसकी संगठन शक्ति बड़ी अद्भुत थी, इसी के बल पर वह एक के बाद एक राज्य जय किए जा रहा था।

इसी प्रबल प्रतापी सिख सरदार को अपने साथ मिलाने की दुराशा में जसवन्तराय होल्कर सहारनपुर में बैठा था। इसमें संदेह नहीं कि यदि इस समय रणजीतसिंह और होल्कर मिल जाते, तो यह उत्तर और दक्षिण ध्रुवों का एक महान् मिलन होता और भारत का नक्शा ही दूसरा हो जाता, परन्तु रणजीतसिंह में शिवाजी जैसी वीरता तो थी—पर दूरदर्शिता न थी। फिर, वह अंग्रेज़ों से संधि कर चुका था। और द्वाबे तथा दिल्ली में उनके बढ़ते हुए प्रभाव उसकी आँख के सामने थे, साथ ही वह मराठा-मण्डल का भंग भी देख चुका था, इसी से उसने होल्कर की ओर आँख नहीं उठाई। और होल्कर निराश हो तथा एक प्रकार से उसे श्राप देकर लौटा, जो आगे अक्षरशः सत्य प्रमाणित हुआ।

लाहौर जाकर चौधरी ने रणजीतसिंह से मुलाक़ात की, और दर्बार में उपस्थित होकर होल्कर का पत्र दिया। पत्र पढ़ कर रणजीतसिंह क्रुद्ध हो गया। पर चौधरी ने विनयभाव और दृढ़ता के साथ निवेदन किया—"महाराज, आप इस समय भारत के सूर्य हैं, आपके जैसा प्रताप दूसरे नरपति का नहीं है। यह सेवक पंजाब का निवासी आप ही का प्रजाजन है, तथा महाराज और उनके साम्राज्य की हितकामना से यहाँ उपस्थित हुआ है। रही पत्र की बात। सो श्रीमन्त होल्कर इस समय संकटग्रस्त हैं पर आप ही की भाँति तेजस्वी और वीर हैं। आपको अपना समझ कर ही वे आपकी शरण आए थे। उनकी कटूक्ति भी आत्मीयता की द्योतक है महाराज। फिर दूत अवध्य होता है। यह दास इसलिए प्रार्थना करता है कि एकान्त में उसका निवेदन सुन लिया जाय। पीछे जैसी मर्जी सरकार की हो।"

"रणजीतसिंह का क्रोध ठण्डा हो गया। चौधरी के निवास आदि की उसने व्यवस्था कर दी—फिर उसने उससे एकान्त में मुलाकात की,

ग्रौर कहा, "होल्कर सरकार को मैं कम महत्व नहीं देता, इसी से मैंने तुम से मुलाक़ात की है। अब कहो ; क्या कहते हो।"

"मैं महाराज की भलाई की ही बात करूँगा।"

"तो मैं भी उस पर पूरा विचार करूँगा, लेकिन तुम्हें होल्कर ने कोई अधिकार-पत्र देकर मेरे साथ बातचीत करने नहीं भेजा है। तुम सिर्फ वह वाहियात पत्र लेकर आए हो।"

"महाराज, इतना तो आप समझ ही जाएँगे कि श्रीमन्त का वह गुप्त पत्र लाने वाला-उनका विश्वासपात्र है, और सुरक्षा के विचार से ज़बानी ही बातचीत का अधिकार लेकर आया है।"

"खैर, तो अब तुम्हारी बात में क्या सार है। तुम यदि यह कहना चाहते हो कि मैं अंग्रेज़ों की संधि भंग करके होल्कर का साथ दूँ, तो यह एकदम मूर्खतापूर्ण बात होगी।"

"महाराज ऐसा क्यों सोचते हैं। क्या महाराज ने नहीं सुना कि होल्कर ने अकेले ही अंग्रेज़ों के दाँत खट्टे कर दिए हैं। यदि आपकी शक्ति उनसे मिल जाय तो भारत में एक नए हिन्दू साम्राज्य का उदय हो सकता है।"

"कैसे हो सकता है ? समूचे द्वाबे में, दक्खिन में और बंगाल तक अंग्रेज़ों का अमल बैठ चुका। अब दिल्ली का बादशाह उनकी पैन्शन पाने वाला क़ैदी है, जो अपने ही घर लाल क़िले में क़ैद है। मराठा-मण्डल टूट चुका है। अंग्रेज़ों ने अपने सब प्रबल शत्रुओं को ज़ेर कर लिया है। सब बड़ी-बड़ी रियासतों को सबसीडियरी बंधन में बाँध लिया है। हैदराबाद का निज़ाम, अवध के नवाब-बादशाह, पेशवा, गायकवाड़ राजपूत राजाओं ने भी उनसे यह संधि की है। टीपू ने सिर उठाया और जान से हाथ धोया। पेशवा ने वसीन संधि पर हस्ताक्षर कर दिया। अन्त में लासवाड़ी में सिंधिया के भाग्य का भी फैसला हो गया, और उसने अहमदनगर, भड़ोच, द्वाबे का इलाक़ा, आगरा और दिल्ली अंग्रेज़ों को दे दी। अब तुम किस आशा से मेरे पास आए हो ?"

"महाराज, यह तो राजनीति की चौसर है। अभी श्रीमन्त होल्कर सरकार के हाथ में भी तलवार है और आपके हाथ में भी तलवार है। इन फिरंगियों के लिए तो यही बहुत है। फिरंगियों ने आपका रुख पच्छिम की ओर फेर दिया है—कि आप इन पहाड़ों में उलझे रहें और समूचे भारत में ये विदेशी अपनी मनमानी करते रहें।"

"मैं तो इधर भी अपना काम कर रहा हूँ।"

"परन्तु महाराज, आपकी तलवार को भारत का उद्धार करना है। इन फिरंगियों ने मथुरा में गोवध किया है। अंग्रेज़ सिपाही जहाँ चाहे गाय का वध कर डालते हैं। इसे महाराज बर्दाश्त कर सकते हैं? फिर, इन फिरंगियों की नज़र देश का धन चूसने की ओर है, देश की जनता की बहाली ये चाहते नहीं। किस तरह बनारस के राजा चेतसिंह से और अवध की बेगमों से खुली लूट करके इन फिरंगियों ने लाखों रुपये लूटे हैं, यह भी तो देखिए।"

"पर लूट-पाट में मराठों ने क्या कसर रखी है? सिंधिया के दीवान सखाराम घटके ने पूना में जो निर्दय लूट-मार की थी—उसे तो अभी बहुत दिन नहीं हुए। बेचारे त्र्यम्बकराव पर्चुरे को सात लाख रुपया वसूल करने के लिए क़ैद किया गया—मारा-पीटा भी गया। फिर उसे पूना से निकाल दिया गया। यह हाल पेशवा के एक वज़ीर का किया गया। अप्पाजी बलवन्त पर सिंधिया ने दस लाख रुपये वसूल करने के लिए इतना जुल्म किया कि उसे आत्मघात करना पड़ा। तभी तो सिंधिया महाग्राह से पिण्ड छुड़ाने के लिए पेशवाओं को अंग्रेज़ों का सहारा लेना पड़ा।"

"महाराज, ये युद्ध की विशेष परिस्थितियाँ हैं। फिर वे देशवासी भी तो हैं। देश की भलाई-बुराई भी तो सोचते हैं।"

"तो भई, यदि बिल्लियाँ न लड़ें तो बन्दर को पंच बनने का अवसर कैसे मिले? इसलिए मैं द्विविधा में रहना ठीक नहीं समझता। जब तक अंग्रेज़ मेरे राज्य में हस्तक्षेप नहीं करते—मैं अपना क़ौल फेर नहीं

सकता। मैं ने होल्कर सरकार को पहले भी सलाह दी थी, और अब भी कहता हूँ, वे अंग्रेज़ों से सुलह कर लें। इसी में उनकी भलाई है। और तुम चौधरी, मुझ से अपने लिए कुछ चाहो तो कहो। क्या तुम मेरे राज्य में बसना चाहते हो ?"

चौधरी खिन्न मन उठ खड़े हुए। उन्होंने हाथ बाँध कर कहा, "महाराज की इस कृपा-दृष्टि को याद रखूँगा—और जब ऐसी आवश्यकता होगी आप की शरण में आऊँगा। अभी तो महाराज, मुझे दिल्ली जाना अत्यन्त आवश्यक है।"

रणजीतसिंह ने चौधरी को तलवार और सिरोपाव देकर विदा किया। और चौधरी खिन्न मन बिना एक क्षण नष्ट किए दिल्ली की ओर चल दिया।

: १५ :

लार्ड लेक

लार्ड जनरल लेक अपने बंगले के बरांडे में एक सफ़री आराम कुर्सी पर लेटे सिगार पी रहे थे। बरांडे से अंग्रेज़ी छावनी का वह भाग दीख रहा था जहाँ देशी पल्टनें पड़ी हुई थीं। बीच-बीच में सिपाहियों की आवाज़ या घोड़ों की हिनहिनाहट से वहाँ की शान्ति भंग हो जाती थी। उनके हाथ में गवर्नर-जनरल का लम्बा ख़त था, जो अभी-अभी उन्हें मिला था। ख़त को वह कई बार पढ़ चुके थे। हर बार पढ़ कर आँखें बन्द करके कुछ गम्भीर चिन्तन में निमग्न हो जाते थे। और फिर उसे खोल कर पढ़ने लगते थे। हक़ीक़त यह थी कि पत्र अत्यन्त महत्वपूर्ण था। और वे उससे सम्बन्धित आगे-पीछे की सब बातों पर विचार कर रहे थे। अंग्रेज़ों का यह प्रसिद्ध सेनानी—जिस के नाम की भारतीय और यूरोपियन सभी शत्रु-मित्र सेनाओं में धाक थी, इस समय शान्त एकान्त वातावरण में चुपचाप सिगार का धुआँ उड़ाता हुआ—भूत-भविष्य के तानों-बानों में उलझा हुआ था। उसके शुभ्र चाँदी के समान मस्तिष्क पर रेखाएँ उभरती जाती थीं। उसकी मुखाकृति भव्य थी, और उससे

दृढ़ता टपकती थी। नेत्रों में साहस की दीप्ति प्रज्वलित थी। उसका मस्तक खूब चौड़ा था। नाक उभरी हुई थी। और सब मिला कर उस की आकृति भव्य और आकर्षक थी। वह इस समय मेजर जनरल फ्रेज़र की प्रतीक्षा कर रहा था। ज्यों ही मेजर ने क़दम रखा—लेक ने उठ कर और दो क़दम आगे बढ़ कर उससे हाथ मिलाया और आग्रह पूर्वक स्वागत किया, और कहा, "मेजर-जनरल, दुर्भाग्य है कि हमें निरन्तर असफलता का सामना करना पड़ रहा है। ज्यों ही मुझे सूचना मिली कि होल्कर सहारनपुर से चल कर शामली में लश्कर डाले पड़ा है, मैंने उस पर कूच बोल दिया। पर वहाँ मेरे पहुँचने से प्रथम ही वह डाकू भरतपुर की ओर रवाना हो चुका था। वह जल्द से जल्द भरतपुर पहुँचना चाहता है। मैं चाहता था कि मैं बीच मार्ग में ही उसे धर दबोचूँ. फ़रुख़ाबाद में आमना-सामना हुआ भी—पर हमला करने का मेरा साहस न हुआ। अब सुना है—वह निर्विघ्न भरतपुर राज्य के अन्दर डीग के किले में जा पहुँचा है। और पहले की अपेक्षा अधिक सुरक्षित है। उधर गवर्नर जनरल ने मेरी मलामत की है। यह ख़त पढ़ लो।"

लेक ने वह हाथ का ख़त मेजर-जनरल फ्रेज़र के हाथों में दे दिया। ख़त में लिखा था—"दुर्भाग्य की बात है कि होल्कर आप से बच कर निकल गया। इस बात को आप उतने ही ज़ोर से अनुभव करते होंगे जितना कि मैं। होल्कर को गिरफ़्तार कर लेना अथवा उसका नाश कर डालना सर्वथा वाँच्छनीय है। जब तक वह नष्ट न कर दिया जायगा या क़ैद न हो जायगा, तब तक हमें शान्ति नहीं मिल सकती। इसलिए मैं आप पर इस बात के लिए भरोसा करता हूँ कि जहाँ तक भी वह जाय, उसका पीछा करने से किसी हालत में न हटें।"

पत्र को मोड़ कर वापस देते हुए फ्रेज़र ने कहा, "लेकिन जनरल, मैं यक़ीनन तौर पर कह सकता हूँ कि अभी होल्कर डीग के पास नहीं पहुँचा है। बेशक उसकी पैदल सेना और तोपख़ाना डीग पहुँच चुके हैं। यदि हम फुर्ती करें तो डीग पहुँचने से पहले—क़िले से बाहर ही उसे घेर

सकते हैं, और उसे उसकी पैदल सेना—तोपख़ाना और क़िले की सुरक्षा से वंचित कर सकते हैं।"

"तो मेजर-जनरल, आप आज ही दो रेजीमेंट देशी सवारों की, तोपख़ाना तथा यथेष्ठ पैदल सेना लेकर कूच कर दीजिए। मैं तीन रेजीमेंट गोरे सवारों की तथा तीन देशी सवारों की और भारी तोपें ले कर आप के पीछे आ रहा हूँ। याद रखिए, कि गर्वनर-जनरल की मेरे पास गुप्त ताकीद पहुँच चुकी है। अब भरतपुर के राजा की तमाम ताक़त और वसीलों को पूरी तरह कब्ज़े में करना भी अनिवार्य हो गया है। इसलिए मैं आप को अधिकार देता हूँ और हुक्म देता हूँ कि भरतपुर राज्य के समस्त, क़िलों, इलाक़ों और प्रान्तों को जिस तरह आप ठीक समझें, उन्हें अंग्रेजी राज्य में मिला लेने के लिए सब सम्भव उपाय काम में लें।"

"आपके हुक्म का प्रत्येक अक्षर पालन होगा। लेकिन जरनल, यह हो क्या रहा है ?"

"कहाँ ?"

"यहाँ, हिन्दुस्तान में।"

"हम लड़ रहे हैं।"

"लेकिन कौन किस से लड़ रहा है ? क्या यह ब्रिटेन और हिन्दुस्तान के बीच लड़ाई हो रही है ?"

"नहीं मेजर-जनरल, यह तो नहीं कहा जा सकता। ब्रिटेन का बादशाह हिन्दुस्तान के किसी राजा-नवाब या बादशाह से नहीं लड़ रहा।"

"तो क्या यह इंगलैंड और हिन्दुस्तान के बीच लड़ाई नहीं है ?"

"सच्चे अर्थों में तो ऐसा ही है, क्योंकि इंगलैंड के राजा ने मुग़ल बादशाह या भारत के किसी दूसरे राजा या नवाब के विरुद्ध युद्ध-घोषणा नहीं की है।"

"और यह भी क्या सच नहीं है कि प्लासी की लड़ाई से लेकर अब

तक इन लगातार की लड़ाइयों का ब्रिटिश राज्य से कोई सरोकार नहीं है।"

"सिर्फ इतनी ही बात सच नहीं है कि इन लड़ाइयों से ब्रिटेन के राज्य का कोई सरोकार नहीं है—हक़ीकत तो यह है कि हम ने न हिन्दुस्तान को फ़तह किया है न फ़तह कर ही रहे हैं।"

"लेकिन हिन्दुस्तान का बादशाह तो अब हमारा पैन्शनयाफ्ता क़ैदी है। और अब तो हम ही हिन्दुस्तान के बड़े हिस्से पर क़ाबिज़ हैं, और उस पर शासन भी कर रहे हैं। हमारा क़ानून, हमारा अदल, हमारी अदालतें, हमारे कलक्टर, हमारी पुलिस, ये सब क्या हिन्दुस्तान में अमल में नहीं आ रहे? क्या हम ने नए सिरे से ज़मीन के बन्दोबस्त नहीं किए? और अब उसका लगान मालगुज़ारी बादशाह की तरह हम नहीं ले रहे?"

"ज़रूर ले रहे हैं मेजर, और दर हक़ीकत अब मुल्क में कम्पनी-बहादुर की ही अमलदारी है, कम्पनी-बहादुर की ही सरकार है और हम कम्पनी-बहादुर के ही नौकर हैं?"

"परन्तु ईस्ट इण्डिया कम्पनी ब्रिटिश राज्य का प्रतिनिधित्व नहीं करती?"

"अवश्य ही नहीं करती। उसने अपने निजी धन-जन से ही हिन्दुस्तान को जीता है।"

"परन्तु वह चार्टर्ड कम्पनी है, जिसे भारत और चीन में व्यापार करने का इजारा मिला हुआ था। इसलिए यह स्वाभाविक है कि ब्रिटिश पार्लमेन्ट का उससे अनुराग है। इसके अतिरिक्त एक बात यह भी है कि कम्पनी के द्वारा युद्धों का आरम्भ किसी भारतीय राज्य के साथ नहीं हुआ, फ्रैन्चों के विरोधस्वरूप हुआ।"

"यह कैसे?"

"अंग्रेज़ों की पहली सैनिक कार्यवाही फ्रैन्च आक्रमण से अपनी रक्षा करने के लिए उस समय हुई जब हैदराबाद के निज़ामुलमुल्क आसफजाह की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारियों में जंग छिड़ा। और फ्रैन्च डुप्ले

ने उसमें दिलचस्पी दिखाई। यह घटना सन् १७५८ में हुई, तब से अब तक पचास वर्षों से निरन्तर भारत में जो भी युद्ध हो रहे हैं, उनमें थोड़ा बहुत फ्रान्स के विरुद्ध आत्मरक्षा का ही भाग है। इसी से यद्यपि ये युद्ध ब्रिटिश राज्य के नाम पर या ख़र्चे से नहीं किए जा रहे, पर इनमें राष्ट्रीय तत्वों का समावेश अवश्य है। इसी से कम्पनी की सेना को ब्रिटेन की राजकीय सेना की सहायता मिलती रही है।"

"तब तो हिन्दुस्तान के अतिरिक्त ब्रिटेन ने जो उपनिवेश स्थापित किए हैं, उनमें और भारत पर अधिकार करने में बहुत अन्तर है।"

"बेशक! उपनिवेश बसाने के लिए निस्सन्देह विस्तृत भूमि पर अधिकार किया गया था, परन्तु भारत की तुलना में वह खाली भूमि ही थी, वहाँ ब्रिटेन को जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा—वहाँ के निवासियों के कारण नहीं, अन्य योरोपियन राष्ट्रों की प्रतिद्वन्दिता के कारण।"

"तो हिन्दुस्तान की हालत इस से बिल्कुल जुदा है, आप यह कहना चाहते हैं?"

"हक़ीकत भी यही है, मेजर फ्रेजर। यहाँ की आबादी घनी है, सभ्यता प्राचीन है, वह यूरोप के प्राचीनतम इतिहास से भी अधिक प्राचीन और गौरवयुक्त है। भारतीय जनता को जीतना, जिसकी भाषा और धर्म हम आक्रमणकरियों से भिन्न है, क्या अनोखी-सी बात नहीं है?"

"अनोखी तो है ही। मैं जानता हूँ कि स्पेन की समूची शक्ति अल्प-संख्यक निवासियों के डच प्रदेशों को नहीं जीत सकी थी।"

"इसके अतिरिक्त यह भी तो सोचिए कि जिस समय हिन्दुस्तान पर क्लाइव ने फतह हासिल की थी, उस समय हम ने अपनी जाति के तीस लाख आदमियों को अमेरिका में अपने वश में रखने के अयोग्य प्रमाणित कर दिया था।"

"बेशक, अमेरिका की लड़ाई में ब्रिटेन ने जिस भारी अयोग्यता का परिचय दिया था, वैसी उसकी अयोग्यता कभी प्रकट नहीं हुई थी। इससे

तो यही प्रकट होने लगा था कि हमारी तेजस्विता का युग ही बीत चुका।"

"परन्तु ठीक इसी समय हम भारत में दुर्दमनीय विजेता बन कर विजय वैजयन्ती फहरा रहे थे। प्लासी में, असाई में और दूसरे अनेक युद्धक्षेत्रों में अंग्रेज़ी सेनाएँ अपने से बहुत बड़ी सेनाओं के विरुद्ध विजयी होती रहीं। क्या यह आश्चर्यजनक नहीं है ?"

"अवश्य ही आश्चर्यजनक है जनरल महोदय, खास कर इसलिए कि जिस समय भारत की विजय का आरम्भ हुआ था, उस समय कुल ब्रिटेन के निवासियों की संख्या सवा करोड़ भी न थी। फिर ब्रिटेन यूरोप ही में उस समय भी आज की भाँति युद्धों में फंसा हुआ था। ख़ास कर क्लाइव ने जब प्लासी का युद्ध जय किया उस समय यूरोप में हम सप्त-वर्षीय युद्ध में फंसे हुए थे।"

"और अब ? जब लार्ड वेल्ज़ली देशी रियासतों को उखाड़ कर अंग्रेज़ी साम्राज्य का विस्तार कर रहे हैं। क्या हम यूरोप में जगज्जयी नेपोलियन से कठिन लोहा नहीं ले रहे ?"

"यह एक शानदार स्थिति है जनरल महोदय।"

"आश्चर्यजनक भी मेजर फ्रेजर, ख़ास कर इसलिए, कि ब्रिटेन कभी भी स्थलयुद्ध में अगुआ नहीं रहा। न हमारा ब्रिटेन का राज्य ही कभी सैनिक राज्य रहा।"

"मैं भली-भाँति जानता हूँ कि यूरोप की लड़ाइयों में हमने अपने समुद्री बेड़े ही पर अपनी शक्ति का सन्तुलन किया। और जब कभी स्थल-युद्ध का अवसर आया तो किसी मित्र सैनिक राज्य को भारी रक़म देकर उससे सैनिक मदद लेते रहे हैं—कभी प्रशिया से और कभी आस्ट्रिया से।"

"फिर भी हम ने भारत के ऐसे बड़े भाग पर अपना अधिकार कर लिया है, जहाँ का क्षेत्रफल दस लाख वर्गमील और जनसंख्या बीस करोड़ है। तिस पर तुर्रा यह है कि जहाँ ब्रिटेन आज यूरोप के युद्धों के

कारण इस क़दर कर्ज़दार हो गया है कि वह कभी अपना कर्ज़ा चुका ही नहीं सकता—वहाँ भारतीय युद्धों ने न तो ब्रिटेन का राष्ट्रीय ऋण बढ़ाया है, न हानि का कोई चिन्ह पीछे छोड़ा है।"

"यह तो एक ऐसी चमत्कारिक बात है महोदय, कि विश्व के इतिहास में अद्वितीय है, परन्तु क्या आप इस के कारणों पर भी प्रकाश डालेंगे।"

"इसमें एक भेद है मेजर फ्रेज़र, पोशीदा भेद।"

"क्या बहुत ही पोशीदा ?"

"हाँ, उसे दुनिया के बहुत कम आदमी जान पायँगे।"

"क्या मैं उसे जान सकता हूँ ?"

"क्यों नहीं, वह भेद यह है कि भारत को हमने नहीं हराया है। भारत ने स्वयं ही अपने को हराया है।"

"वाह, यह कैसी बात।"

"ध्यान से सुनिए यह बात मेजर फ्रेज़र, बड़ी गम्भीर बात है। भारत के पराजित होने का कारण यह है कि 'भारत' केवल एक भौगोलिक नाम है—वह राजनीतिक ज्ञान पूर्ण कोई राष्ट्र नहीं है। देखिए—नेपोलियन ने किस आसानी से इटली और जर्मनी को अपना शिकार बना डाला। क्योंकि अभी तक भी इन देशों में राष्ट्रीय भावना नहीं है। इसी से बोनापार्ट एक जर्मन राज्य को दूसरे जर्मन राज्य के विरुद्ध खड़ा कर सका। इसी से प्रशिया और आस्ट्रिया से लड़ने के लिए बवेरिया और बर्टेमबर्ग उसके साथी हो गए।"

"यह बात तो वास्तव में महत्त्वपूर्ण है।"

"जिस तरह नेपोलियन ने देखा कि मध्य यूरोप में विजय प्राप्त करने का यह साधन तैयार है। उसी तरह, फ्रैन्च डुप्ले ने अपनी पैनी बुद्धि से अंग्रेज़ों से पहले ही यह देख लिया था कि भारत में भी साम्राज्य स्थापित करने के लिए यह मार्ग किसी भी यूरोपियन राष्ट्र के लिए खुला पड़ा है। उसे समझ लेने में देर न लगी कि भारत की अवस्था ही ऐसी है। वहाँ

एक भारतीय राज्य दूसरे से लड़ता रहता है । इसलिए उसने यह नीति अपनाई कि उनके झगड़े के बीच में पड़ कर तुल्य-भारता क़ायम करे। जब अठारहवीं शताब्दि के मध्य भाग में पहले-पहल फ्रैन्चों ने निज़ामुल-मुल्क के मामलों में हस्तक्षेप किया, उस समय भारत में नितान्त राजनैतिक मृतक अवस्था थी । जो अब पचास बरस बीत जाने पर भी क़ायम है। इसी से यह चमत्कार सम्भव हुआ कि—हम भारत को उन सेनाओं द्वारा जीत रहे हैं जिन में एक अंग्रेज़ सैनिक है और पाँच देशी सैनिक ।"

"बेशक ऐसा ही है ।"

"फिर आप यह देखते हैं कि विदेशियों के प्रति भारत में कोई ख़ास घृणा के भाव नहीं रहे । और हक़ीक़त तो यह है कि अंग्रेज़ों ने भारत में पहली ही बार विदेशी राज्य की स्थापना नहीं की है । वह तो पहले से ही यहाँ मौजूद थे। केवल यही बात नहीं—कि ग्यारहवीं शताब्दि से मुसलमानों के आक्रमण हुए हैं, इस से बहुत पहले से ही यहां अनेक जातियों का मिश्रण हो चुका है । आर्यों में जातीय एकता ज़रूर थी। परन्तु भारत को ऐक्य तो आर्य लोग भी नहीं दे सके । क्योंकि आर्येतर जातियाँ उनसे अन्ततः पृथक् रहीं । और इस समय तो हिन्दुओं की स्थिति ऐसी है कि समूचा हिन्दू-धर्म मिथ्या-विश्वासों को एकता का रूप दे रहा है। इसलिए भारत में वह वातावरण नहीं है, न था, जिस पर पश्चिम का राजनीति-शास्त्र अवलम्बित है। मुग़लों के उत्थान से बहुत पहले ही भारत में अनेक मुस्लिम राज्य स्थापित हो चुके थे, जिन्होंने भारतीय राज्यों के राष्ट्रीयता के बन्धन तोड़ दिए थे। और कोई राज्य देश-भक्ति के नाम पर अपील कर सकने योग्य न था । इसलिए अंग्रेज़ों के हाथ में भारतीय जन शासन का अधिकार आना भारतीय जनता का एक विदेशी दासता से निकल कर दूसरी विदेशी दासता में फंसना मात्र है ।"

"तो इसका मूल कारण यह है कि भारत में राष्ट्रीय ऐक्य उदय ही नहीं हुआ ?"

"नहीं तो क्या ? आप देख ही रहे हैं कि सारे भारत में ऐसी बहुत-

सी सैनिक पेशेवर टुकड़ियाँ हैं, जो केवल तनख़्वाह के लालच से किसी भी राज्य के विरुद्ध किसी भी राज्य के पक्ष में लड़ सकती हैं। भले ही उन्हें तनख़्वाह देने वाला देशी हो या विदेशी। जिससे वे तनख़्वाह लेते हैं—उसके लिए वीरता पूर्वक प्राणान्त-युद्ध करना वे अपना धर्म समझते हैं। वे इसे नमकहलाली के नाम से पुकारते हैं। नमकहलाली की यह भावना उनके मन में इस प्रकार दृढ़बद्ध हो चुकी है कि यहाँ भारत में नमकहराम होना सब से बड़ी गाली समझी जाती है।"

इतना कह कर लार्ड लेक खिलखिला कर हँस पड़े। मेजर फ्रेजर भी देर तक हंसते रहे। फिर उन्होंने कहा—"निस्संदेह यह एक निराला अहमक़पन है।"

"इसी से तो हम भारतीयों को, भारतीयों के द्वारा ही जीतते चले जाते हैं। तिस पर तुर्रा यह, कि न तो इस काम में अंग्रेज़ों का ख़ून बहता है, न ब्रिटेन को कुछ ख़र्च करना पड़ता है, न कोई हानि सहनी पड़ती है। जैसे नेपोलियन को यूरोप में कोई आर्थिक कठिनाई नहीं उपस्थित होती, क्योंकि वह जिन्हें हराता है उन्हीं के मत्थे उन्हें हराने का ख़र्चा डालता है। इसी प्रकार हम भारत में कर रहे हैं। अपनी विजयों का सारा ख़र्चा भारत ही से वसूल कर रहे हैं। इसमें हमें सख्ती करनी पड़ती है, परन्तु लाचारी है। रुपए के बिना काम नहीं चल सकता।"

"खैर, तो अंग्रेज़ों के द्वारा भारत की भूमि पर अधिकार कर लेना वास्तव में मुग़लों के बाद की एक राज्य-क्रान्ति है।"

'वही बात है। और यह राज्य-क्रान्ति मुग़ल साम्राज्य के पतन के कारण औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद ही से आरम्भ हुई थी। इतने बड़े देश पर से साम्राज्य का अधिकार उठ गया तो छोटी-छोटी शक्तियों ने अपने सिर उठाए। जिसमें बहुत-सी वैतनिक सैनिकों के दलों के रूप में थीं। जिनका नायकत्व या तो पतनशील साम्राज्य का कोई प्रादेशिक शासक होता था, या कोई दूसरा ही साहसिक व्यक्ति, उनका नायक बन बैठता था। इन सब की शक्ति वेतनभोगी सैनिकों के बल पर थी। और वे सब

आपस में लड़ते रहते थे। नए राज्य की स्थापना के लिए यह स्थिति बहुत अनुकूल थी।"

"और उसी अवसर पर जिन विदेशी व्यापारियों ने लाभ उठाया, उनमें हमारी ईस्ट इण्डिया कम्पनी अधिक भाग्यशाली प्रमाणित हुई, और उसने भारत में अंग्रेज़ी साम्राज्य की नींव डाली।"

"बेशक ! क्योंकि उसके पास ऐसे साधन उपस्थित थे। उसके पास धन था, दो तीन क़िले उसके हाथ में थे। समुद्र पर उसका अधिकार था। फिर भी भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी के हाथों ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना एक असाधारण घटना है। पर इससे भी अधिक आश्चर्य-जनक घटना यह है कि कार्सिका के एक गरीब परिवार का छोटा-स लड़का यह बोनापार्ट एकतन्त्र स्वतन्त्र हो सम्राट का मुकुट धारण कर, यूरोप पर बिना मित्रों और बिना जेब में एक पाई रखे अधिकार किए जा रहा है। भारत में भी हैदर अली, सिंधिया और होल्कर का उत्थान वैसा ही आकस्मिक और आश्चर्यजनक है। पर इनके पास हमारे बराबर साधन नहीं थे।"

"तो हम कह सकते हैं कि भारत पर हमारी विजय, एक राज्य पर दूसरे राज्य की विजय नहीं है; न इस घटना से भारतीय राज्य का ब्रिटिश राज्य से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। यह एक आकस्मिक भारतीय क्रान्ति है, जिससे हम ने लाभ उठाया है।"

"हाँ; मेजर फ्रेज़र, यही बात है। और मैं तो यहाँ तक कहना चाहता हूँ कि मुग़ल साम्राज्य के नाश के कारण भारत में उसके शासन का अन्त हो गया था। और मुग़ल साम्राज्य ज़मीन पर पड़ा हुआ था, कि कोई आए और उसे उठा ले। इस समय न भारत में कोई साहसी जन साम्राज्य की स्थापना कर रहा था, न किसी में राजनैतिक दम था। इसी से हमें यह सुयोग मिल गया, और हम वेतन-लोलुप, और नमक-हलाल़ी के पेशवर देशी सिपाहियों की बदौलत अन्य साहसिकों से प्रति-द्वन्द्विता करके भारत में ब्रिटिश राज्य की स्थापना कर रहे हैं। हमें तो

मुग़ल साम्राज्य ज़मीन में पड़ा हुआ मिला है।"

"धन्यवाद लार्ड महोदय, हम लोगों में खूब बातें हुईं। अब मैं आपकी आज्ञा पालन के लिए इसी रात कूच करता हूँ।"

"कृपा कर 'सपर' यहीं ले लीजिए मेजर फ्रेजर! सौभाग्य आपका साथ दे। हम संसार में एक भारी सभ्य क्रान्ति कर रहे हैं, यदि भारत में ब्रिटिश साम्राज्य स्थापित कर रहे हैं। यह हमारे लिए भी और उनके लिए भी महत्वपूर्ण है। हमारे लिए तो इसलिए कि हम पूर्व में अब गहरी दिल-चस्पी लेंगे, और उसका फल समूचे यूरोप की राजनीति और अर्थ नीति पर होगा। और भारतीय राष्ट्र ब्रिटिश छत्रछाया में आकर नवीन जीवन धारण करेगा। आश्चर्य नहीं अपने लम्बे दीर्घकालीन इतिहास में अब वह राष्ट्रीय रूप धारण कर ले।"

जनरल लेक एक झटके के साथ कुर्सी से उठ खड़े हुए और उन्होंने अपने ख़ानसामा को 'सपर' चुनने का आर्डर दिया।

: १६ :

अठारहवीं शताब्दि के अन्तिम चरण

अठारहवीं शताब्दि के अन्तिम चरण में सभ्यता ने एक करवट बदली। और उसके प्रभाव से जो हवा पश्चिम में बही, उसने भारत को भी छू लिया। 'स्वतन्त्रता', 'समता' और 'मनुष्य मात्र के बन्धुत्व' की एक धीमी हल्की आवाज़ सभ्य संसार में उठी। और दुनियाँ ने देखा—कि अमेरिका ने बिना राजा का राज्य क़ायम कर लिया और फ्रांस ने अपने राजा का सिर काट कर प्रजातन्त्र की स्थापना कर ली। इसने आधे यूरोप के कान खड़े कर दिए। और लोग नए दृष्टिकोण से मनुष्य के अधिकार, स्वतन्त्रता और समता के भावों को देखने लगे। राजनैतिक क्षेत्र में इस क्रान्ति ने मानव उन्नति के एक युग को पूरा करके दूसरे युग की सीमा में धकेल दिया।

परन्तु जब फ्रांस में स्वतन्त्रता-समता और जनतन्त्र की हवा बह रही थी—तब उसका पड़ौसी ब्रिटेन उसे चारों ओर से रोकने की जी-जान से कोशिश कर रहा था। और चाहता था कि फ्रांस की हवा इंग्लेण्ड में न घुसने पाए, जहाँ इस समय पूँजीवाद जन्म ले रहा था।

इस चरण में संसार की जो बड़ी-बड़ी क्रान्तिकारिणी घटनाएँ हुई—उनमें दो मुख्य थीं। एक अमेरिका ने इंगलैंड की दासता से मुक्त होकर प्रजातन्त्र की स्थापना की। दूसरी, फ्रांस ने बादशाह को मार कर प्रजातन्त्र स्थापित किया। इस समय पिट इंगलैंड का प्रधानमंत्री था। वह पूरी तरह साम्राज्यवादी और फ्रांस का शत्रु था। उसी के संकेत से लार्ड वेल्ज़ली को ईस्ट-इण्डिया कम्पनी के डायरेक्टरों ने गवर्नर-जनरल बना कर भारत में भेजा। चलती बार वह यह प्रतिज्ञा करके आया था—"मैं बादशाहतों के ढेर लगा दूँगा। और विजय पर विजय तथा मालगुज़ारी पर मालगुज़ारी लाद दूँगा। मैं इतनी शान, इतना धन और सत्ता एकत्र कर दूँगा कि एक बार मेरे महत्वाकाँक्षी और धन-लोलुप मालिक भी अश-अश कह उठेंगे।"

भारत पहुँचने से प्रथम ही उसने अपनी नई चाल सोच ली थी। उसमें एक ख़ास तजवीज़ यह की गई थी कि भारतीय राजाओं के पास जहाँ जितनी स्वतन्त्र सेनाएँ मौजूद थीं, उन सेनाओं को एक-एक कर किसी तरह बर्ख़ास्त करा दीं, और उन राजाओं और उनकी रियासतों की रक्षा का भार कम्पनी की सरकार के ऊपर लेकर और पुरानी रियासती सेनाओं की जगह कम्पनी की सेनाएँ अंग्रेज़ अफ़सरों के अधीन, रियासतों के ख़र्चे पर, सब रियासतों में क़ायम कर दीं। इस नई प्रणाली का नाम—सबसीडीयरी रखा गया। सबसीडीयरी एलाएन्स का अर्थ था—आर्थिक सहायता, और एलाएन्स का अर्थ था मित्रता। अभिप्राय यह—कि प्रत्येक देशी नरेश कम्पनी को निश्चित आर्थिक सहायता दे कर कम्पनी की सैनिक मित्रता प्राप्त करले। वास्तव में यह देशी नरेशों को उन्हीं के ख़र्चे से उन्हीं की रियासतों में क़ैद कर रखने की सुन्दर योजना

थी। यह प्रणाली एक धोखे की टट्टी थी। उस का उद्देश्य इंगलैंड की जनता की आँखों में धूल झोंकना था। इस तरह ये रियासतें विजय नहीं की जाती थीं। वहाँ के राजाओं को छत्र-चंवर आदि राजचिन्हों सहित गद्दी पर रहने दिया जाता था, परन्तु असली ताक़त उनके हाथों से लेकर एक पोलीटिकल एजेन्ट के हाथों में चली जाती थी। इस राजनैतिक चाल से वेल्ज़ली ने जिस प्रकार भारत के मुसलमानों—राजपूतों और मराठों को वश में किया, निज़ाम और पेशवा को फंसा कर उन्हें कम्पनी का क़ैदी बनाया, कर्नाटक के नवाब, तंजौर के राजा, अवध के नवाब-वज़ीर और सूरत और फ़रुख़ाबाद के नवाबों के इलाक़े छीने तथा टीपू, सिंधिया, होल्कर और भोंसले को बर्बाद किया, उन सब काले कारनामों को आप इतिहास के पृष्ठों में पढ़ सकते हैं। लार्ड वेल्ज़ली ई० स० १७९८ से १८०५ तक ७ वर्ष गवर्नर-जनरल रहा। जब वह गवर्नर जनरल बनकर आया था तब भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी का भी एक राज्य था—पर जब वह लौटा तो, भारत में केवल ईस्ट इण्डिया कम्पनी ही का एक साम्राज्य था। और अब ईस्ट इण्डिया कम्पनी एक व्यापारी संस्था न थी—एक राजनैतिक शक्ति थी।

जिस समय वेल्ज़ली गवर्नर-जनरल बन कर आया था तब भारतीय राजनीति के तीन मध्य बिन्दु थे, पूना, दिल्ली और कलकत्ता। पूना मराठाशाही का केन्द्र था, दिल्ली में मुग़ल सम्राट् थे और कलकत्ते में कम्पनी के गवर्नर-जनरल। परन्तु सात वर्ष बाद जब वह लौटा—तो कलकत्ता ही भारत का मुख्य केन्द्र बन चुका था।

पानीपत के खण्ड प्रलय में मराठों की अजेयता का जादू टूट चुका था। तिस पर स्वार्थ-कलह और विश्वासघात ने वहाँ पैर जमा लिए थे। अंग्रेज़ों के लिए यही स्थिति अनुकूल थी। परन्तु दक्षिण में इस समय दो उद्भट पुरुष जीवित थे—एक हैदर अली—दूसरा नाना फ़ड़नवीस। किन्तु देश के दुर्भाग्य से दोनों ही परस्पर शत्रु थे। अंग्रेज़ों ने पहले मराठों और निज़ाम को संधि में बाँध कर हैदर अली को खत्म कर दिया, फिर निज़ाम

को ख़स्सी करके मराठों को अकेला कर दिया। इसके बाद एक के बाद दो तीन युद्ध करके पूना का छत्र भंग कर दिया।

पानीपत की पराजय के बाद मराठा शासन ने एक संघ राज्य का रूप धारण कर लिया था। ग्वालियर में सिंधिया, बड़ौदा में गायकवाड़, और इन्दौर में होल्कर जो वास्तव में पूना दर्बार के सेवक और सेनानायक थे—स्वतन्त्र शासक बन बैठे थे। फिर भी वे पूना की प्रभुता स्वीकार करते रहे। पर देर तक यह व्यवस्था चली नहीं। सब से पहले गायकवाड़ को, अंग्रेजों ने पूना दर्बार से तोड़ लिया। अब पूना दर्बार का एक मात्र सहारा सिंधिया माधोजी था।

अठारहवीं शताब्दी के भारतीय राजनैतिक जीवन में माधोजी सिंधिया एक ऐसी प्रबल शक्ति थी, जिसकी प्रतिक्रिया, दिल्ली से कलकत्ता और पूना तक एक समान प्रभाव रखती थी। वह एक प्रबल कूटनीतिज्ञ योद्धा और अपने समय का एक प्रतिनिधि व्यक्ति था।

माधोजी का पिता रानोजी सिंधिया पेशवा बालाजी राव का एक सेवक था, जिसका काम पेशवा के जूते सम्हालना था। पेशवा ने प्रसन्न होकर उसे सेना में एक ऊँचे पद पर प्रतिष्ठित कर दिया था और जब पेशवा ने मालवा जीत कर उसे दो भागों में विभक्त कर दिया तो उसने रानोजी को ग्वालियर का सूबेदार बना दिया। यही सिंधिया वंश का प्रथम पुरुष था।

माधोजी रानोजी का जारज पुत्र था। रानोजी की मृत्यु पर अपने साहस और कूटनीति से उसे ही सूबेदारी मिली, बाद में उसने पानीपत की लड़ाई में ग्वालियर की सेना के असाधारण सेनापतित्व का परिचय दिया। उस काल पानीपत का वह संग्राम एक खण्ड प्रलय था, जिसमें दो लाख मराठे खेत रहे। माधोजी सिंधिया उन भाग्यशाली मराठा सरदारों में से थे जो जीवित बच कर लौटे, पर लंगड़े हो गए। परन्तु इसके बाद कूटनीति और युद्धनीति में वे अद्वितीय योद्धा का स्थान ग्रहण करते रहे।

मराठा संघ एवं पूना का सिंहासन जिन चार स्तंभों पर आधारित था—वे सिंधिया, होल्कर, गायकवाड़ और भोंसले थे। पेशवा मराठा शक्ति का केन्द्र था। अंग्रेज़ों की कूटनीति की सारी चालें इन चारों स्तम्भों को हिलाने में ख़र्च हो रही थी। गायकवाड़ अंग्रेज़ों के जाल में फंस चुका था। भोंसले किंकर्तव्यविमूढ़ बने थे। होल्कर पर फंदा फेंका जा रहा था। केवल सिंधिया माधोराव ने अपने समर्थ हाथ उन दिनों दक्षिण से उत्तर तक फैला रखे थे। अब्दाली के लौट जाने के बाद मुग़ल साम्राज्य औंधे मुँह गिर गया था। दिल्ली पर अब्दाली के नायब नजीबुल्ला का अदल था। और मुग़ल सम्राट् शाहआलम प्राणों के भार को लिए कभी अवध के नवाब की शरण जाता और कभी इलाहाबाद में अंग्रेज़ों के चरणों में गिरता फिर रहा था।

ऐसे ही वे दिन थे जब मराठे सरदारों ने पानीपत की पराजय का परिशोध लेने के इरादे से एक महती सेना ले, उत्तर विजय के मन्सूबों के साथ चम्बल को पार किया। यद्यपि इस महती चमू के सेनापति विसाजी कृष्ण विमोवाला थे, पर नेता माधोजी सिंधिया थे।

जब यह प्रबलवाहिनी राजपूतों और जाटों के विरोध का दमन करती हुई दिल्ली पहुँची तो नजीबुद्दौला ने तत्क्षण घुटने टेक दिए। उससे सुलह कर मराठा सेनापति तो पूना लौट गया। पर रुहिल्ला सरदारों को पानीपत में अब्दाली का साथ देने का दण्ड देने के लिए होल्कर और महादजी सिंधिया को छोड़ गया। और इन दोनों लोह पुरुषों ने किस तरह निर्दयता से उन पठानों और रुहेलों से बदला लिया वह इतिहास के पृष्ठों में सुरक्षित है। दोनों सरदार प्रान्तों पर विजय पाते हुए, इटावा तक पहुँच गए। और सिंधिया का दबदबा दिल्ली और आसपास के समूचे इलाके में फैल गया।

अब सिंधिया ने बादशाह शाहआलम को अंग्रेज़ों के पंजे से निकाल कर दिल्ली के तख्त पर बैठाया और आप उसका संरक्षक बन बैठा। डा०

ावयना नामक एक फ्रैन्च सेनापति के नेतृत्व में अपनी सेना को उसने यूरोपीयपद्धति पर शिक्षित किया। उसने बादशाह की गर्दन दबोच कर पेशवा के लिए बकीले मुतलक की सनद प्राप्त कर ली, जिसका अभिप्राय यह था कि बादशाह ने पेशवा को दक्षिण का सर्वोच्च अधिकारी स्वीकृत कर लिया। यद्यपि मुग़ल बादशाह की सत्ता नाममात्र की रह गई थी, परन्तु अभी सिक्का देश में उसी के नाम का चलता था। इस समय माधोजी भारतीय राजनीति में सर्वोच्चि शिखर पर पहुँच गया था। जब वह शाही सनद पेशवा को भेंट करने गया तब डेरे से दूर ही हाथी से उतर गया। और पेशवा के सामने जाकर नाटकीय ढंग से बग़ल से एक कीमती जूते का जोड़ा निकाल कर पेशवा के पाँव में पहनाते हुए बोला—मेरा पिता श्रीमन्त के दर्बार में स्वर्गवासी श्रीमन्त पेशवा को जूता पहनाने की नौकरी करता था, यही काम मेरा भी होगा। पेशवा इससे प्रसन्न हो गया। और माधोजी ने पूना के शासन पर अपनी सत्ता कायम करने के लिये वहीं डेरा जमा लिया। परन्तु उसकी आयु ने साथ नहीं दिया, शीघ्र ही रहस्य पूर्ण रीति से वह मरण शरण हुआ।

उसके बाद उसके उत्तराधिकारी दौलतराव सिंधिया ने बाजीराव पेशवा से साँठ-गाठ कर पेशवा के योग्य मन्त्री नाना फड़नवीस को कैद करा दिया। और पेशवा राज्य की सारी शक्ति हाथ में ले पूना में अंधेरगर्दी मचा दी। जिससे इस महाग्रह से पिण्ड छुड़ाने को बाजीराव भी व्यग्र हो गया। उधर अवसर पाकर अंग्रेज़ों ने पेशवा को मायाजाल में फाँस लिया। मराठा-मण्डल में फूट डाल दी। होल्कर को सिंधिया प्रदेश में लूट-मार करने को प्रोत्साहित किया। होल्कर के आक्रमण से पेशवा बाजीराव और सिंधिया दोनों थर्रा उठे। पेशवा अंग्रेज़ों के शरणापन्न हुआ, जिसकी वेल्ज़ली राह देख रहा था। उसने पेशवा को अंग्रेज़ी जहाज़ में बैठा कर वसीन के बन्दरगाह में ला उतारा, जहाँ उसने वह स्वतन्त्रता अंग्रेज़ों के हवाले कर दी, जो दो सौ वर्ष पूर्व शिवाजी ने अर्जित की थी। अंग्रेज़ों ने उसे फिर से पूना की गद्दी पर बैठाया। पर अब उसके चारों

ओर मुसीबतों का जाल बिछा हुआ था। अंग्रेज़ पेशवा को ही शतरंज का मोहरा बना कर मराठाशाही को मात देना चाह रहे थे। और अन्त में लासवाड़ी के मैदान में उनकी इच्छा पूरी हुई। मराठा सरदारों के हौसले भंग हो गए। सिंधिया परकैच हो गया –और देश के बड़े भाग में आनरेबुल ईस्ट इण्डिया कम्पनी का अमल बैठ गया।

पानीपत के खण्ड प्रलय ने, जिसमें दो लाख मराठे खेत रहे––मराठा संघ की उत्तर ओर की दीवार ढहा दी थी। उस समय पानीपत के रण-क्षेत्र को जाते समय मराठों के प्रधान सेनापति सदाशिवभाऊ ने घोषणा की थी कि वह पानीपत से लौट कर अपने पुत्र विश्वनाथ राव भाऊ को दिल्ली के सिंहासन पर बैठाएगा। पर सदाशिव राव की यह आशा पानी-पत की रुधिर सरिता में डूब गई। सदाशिव पानीपत से लौटे ही नहीं। वहीं उन्होंने अनन्त विश्राम किया।

दिल्ली का निस्तेज बादशाह अब सिंधिया की तलवारों की छाया में फिर लाल क़िले में घुसा और पैंतीस बरस तक कठपुतली की भाँति नाचता रहा। कभी मराठों के इशारे पर, कमी वज़ीरों के, और कभी अंग्रेजों के। कैसा भयानक और दारुण नाचना पड़ा इस अभागे बादशाह को!!

जब तक अवध का नवाब वज़ीर शुजाउद्दौला जीवित रहा, तब तक दिल्ली और आगरे में मुग़ल राज्य का क़ुछ प्रभाव रहा, पर उसके मर जाने पर नए सरदार रंगमंच पर आए। पठानों और राजपूतों ने मिल कर लाल सोठ की लड़ाई में माधोजी सिंधिया को परास्त कर उसके जीवन-काल ही में बादशाह पर से उसका प्रभाव समाप्त कर दिया था। इसके बाद गुलाम क़ादिर पठान दिल्ली में सत्तारूढ़ हुआ। कभी यह शाह आलम का दास रह चुका था, और बादशाह से अपमानित हो कर किले से निकाल दिया गया था। सत्तारूढ़ होते ही उसने बादशाह और उसके परिवार को महलों से निकाल कर नौबतख़ाने में रहने को विवश किया।

और स्वयं महलों में ठाठ से रहने, और तख़्त पर बैठ कर दरबार करने लगा। इस समय ख़जाना खाली था। उसने बादशाह पर गुप्त खजाना और दफीना बता देने के लिए अत्याचार आरम्भ किए। और एक दिन भरे दरबार में उसने बादशाह से गुप्त ख़ज़ाने की चाभियाँ माँगीं। और जब बादशाह ने अपनी असमर्थता प्रकट की तो उसने वहीं बादशाह को भूमि में गिरा कर छुरी से उसकी आँखें निकाल लीं। इसके बाद शाही बेगमात और शाहज़ादियों को बेइज्ज़त किया गया। उन्हें नंगा किया गया। क़िले के तहख़ानों और फर्शों को खोद कर तालाब कर दिया गया। उस समय उसने शाही ख़ानदान पर जो अत्याचार किए—उनसे सारी दिल्ली में आतंक छा गया। अन्ततः दौलत राव सिंधिया ने आ कर इस आततायी से बूढ़े और अंधे बादशाह का उद्धार किया। फिर से उसे तख़्त पर बैठाया। पर सारी सत्ता अपने हाथों में रखी तथा बादशाह को साठ हज़ार रुपया माहवार पैन्शन नियत कर दी गई। अभागे बादशाह को जीवन में कभी अंग्रेज़ों का आश्रित रहना पड़ता था, कभी मराठों का। पर सिंधिया और अंग्रेज़ों के दृष्टिकोणों में बहुत अंतर था। सिंधिया मुग़ल गौरव की आड़ में अपनी सत्ता को स्थिर करना चाहता था, पर अंग्रेज़, मुग़ल सत्ता के खण्डहरों पर अपना साम्राज्य खड़ा करना चाहते थे। परन्तु लार्ड वेल्ज़ली की दिग्विजयी नीति ने इस द्वैध शासन को सदा के लिए समाप्त कर दिया। और लार्ड लेक ने दिल्ली दख़ल करके दिल्ली शहर, लाल क़िला और शाह आलम तीनों को अपने अधीन कर लिया।

अब अंग्रेज़ यह नहीं मानते थे कि हिन्दुस्तान का असली बादशाह शाहआलम है। यद्यपि उसे गद्दी से उतारने का समय अभी नहीं आया था, पर वे उसे कठपुतली से अधिक महत्व नहीं देना चाहते थे। वे धीरे-धीरे सब दरबारी अदब कायदे भंग करते जा रहे—और पैन्शन घटाते चले जाते थे। इस तरह बादशाह के सभी शाही अधिकारों की कतरव्योंत जारी थी।

: १७ :

नया दौर

अब उन्नीसवीं शताब्दि के आरम्भिक दिन थे। संसार में जीवन का नया दौर चल रहा था। भारत और यूरोप में सर्वत्र उन दिनों खून-खराबी का बाज़ार गर्म था। मुद्दे की बात यह थी कि इन दिनों ब्रिटेन विश्व का राजनैतिक नेता बन रहा था। नई दुनिया प्रकट हो रही थी—और ब्रिटेन अन्य उद्ग्रीव जातियों को पीछे धकेल कर उस पर अपना राजनैतिक प्रभुत्व स्थापित करने की प्राण पण से चेष्टा कर रहा था।

रानी एलिजाबेथ के राज्य काल से यह नया दौर आरम्भ हुआ। स्पेन के अजेय जहाज़ी बेड़ों को ड्रेक और हाकिन्स समुद्र गर्भ में लीन कर चुके थे, वालट्रोम्प और रुटिपर के निर्णायक युद्ध हो चुके थे। अंग्रेज़ी जल सैन्य अजेय घोषित हो चुकी थी। लाँग पार्लमैण्ट और दूसरे चार्ल्स की इंगलैंड से लड़ाइयाँ हो चुकी थीं। क्रामवेल स्पेन को कुचल चुका था। और ब्रिटेन ने अथाह स्वर्ण-भण्डार एकत्र कर चौदहवें लुई को ठोकर मार कर उसे नीचा दिखाया था। और अब भू-सम्पत्ति के मुक़ाबिले इंगलैंड में बड़ी-बड़ी औद्योगिक संस्थाएँ स्थापित हो चुकी थीं। जिस ने राज्य-शासन का समूचा ढाँचा ही बदल दिया था। और रानी एन के शासन काल में इंगलैंड सब राष्ट्रों का सिरमौर बन चुका था। ये सब महाकार्य अठारहवीं शताब्दि के समाप्त होते-होते हो चुके थे। और अब अंग्रेज रानी एलिजाबेथ के काल के साधारण इंगलैंड के निवासी न रह गए थे, अब वे ब्रिटिश साम्राज्य की रचना करने में संलग्न थे। इस नए दौर में उन्होंने दो महाकर्म किए थे—कनाडा और आस्ट्रेलिया के सीमा रहित विस्तार पर आधिपत्य स्थापित किया था, और उनकी केवल एक व्यापारिक कम्पनी ने बीस करोड़ भारतीयों पर विजय प्राप्त कर ली थी। संसार इन दोनों ही कामों को आश्चर्य चकित हो देख रहा था। उस समय अंग्रेज़ों ने यह नहीं सोचा था कि क्लाइव और हेस्टिंग्स ने यह

सृष्टिक्रम के विरुद्ध घोर कर्म किया है। जो एक शताब्दि की प्रत्यक्ष सफलता के बाद अन्त में निष्फल हो जायगा। उस समय वे समझते थे कि हम भारत में पूर्व और पश्चिम के मेल का सूत्रपात कर रहे हैं।

परन्तु आश्चर्यजनक बात यह थी कि उस काल में एक ओर जहाँ ब्रिटिश राष्ट्र का एक हाथ भूमण्डल के भविष्य की ओर फैल रहा था, और जो यूरोप तथा नई दुनिया के बीच मध्यस्थ का पद ग्रहण कर रहा था—अपना दूसरा हाथ अत्यन्त प्राचीन काल की ओर फैलाता हुआ एशिया का विजेता और महान् मुग़ल साम्राज्य का उत्तराधिकारी बन रहा था। एक तरफ़ वह एक ही काल में एशिया में स्वेच्छाचारी, और आट्टोलाचा में—प्रजासत्ता परायण ; पूर्व में संसार की सब से बड़ी शक्ति इस्लाम और हिन्दुओं की मंदिरों की सम्पत्ति का संरक्षण और पश्चिम में स्वतन्त्र विचारों और आध्यात्मिक मत का सब से बड़ा समर्थक, मध्य एशिया में रूस के बढ़ते हुए क़दम को रोकने के लिए शक्तिशाली साम्राज्य का संगठन कर्ता, और क्वीन्सलैंड तथा मनीटोवा में स्वतन्त्र उपनिवेशों का प्रस्थापक बन रहा था। संक्षेप से कहा जा सकता है, कि सृष्टि के आरम्भ से कभी किसी राष्ट्र ने इतना भारी दायित्व अपने ऊपर नहीं लिया था, न कभी किसी एक देश की जनता के निर्णय के उपर भूमण्डल के सभी भागों के इतने भारी प्रश्नों का—जिन के लिए सभी प्रकार के ज्ञान और शक्ति की आवश्यकता होती है— दायित्व का भार पड़ा था, जितना इस काल में ब्रिटेन के क्षुद्र टापू के मुट्ठी भर निवासियों पर था।

: १८ :

सफ़ेद शहनशाह

दिल्ली के रेज़ीडेण्ट कर्नल विक्टरलोनी के बंगले पर उस दिन बड़ी बहार थी। उसी दिन उन्हें दिल्ली की सेनाओं का प्रधान नियुक्त किया गया था। अब वह गोरों की एक पल्टन और चार कम्पनियाँ देशी पल्टन और एक पल्टन मेवातियों का अध्यक्ष था, जो ख़ास तौर पर दिल्ली की

रक्षा के लिए छोड़ी जाने वाली थी। यह अंग्रेज़ कर्नल बड़ा मौजी जीव था। वह दिल्ली में ठेठ मुसलमान रईस की भाँति रहता और मुसलमानी पोशाक पहनता और मुसलमान रण्डियों से आशनाई रखता था। दिल्ली की मशहूर रण्डियाँ उसकी नौकर थीं। इसके अतिरिक्त उर्दू बाज़ार की उस्तानियाँ, मुग़लानियाँ और महरियाँ भी उसके यहाँ आती-जाती रहती थीं। वह सभी को दिल खोल कर इनाम-इकराम देता—और बहुत फ़सीह उर्दू में बातचीत करता था। पर असल हक़ीक़त यह थी कि वह उनके ज़रिये शहर और लाल क़िले के राई-रत्ती हाल-चाल जानता रहता था। वास्तव में दिल्ली में उसकी स्थिति बहुत ही नाज़ुक थी। सारी दिल्ली और बादशाह तथा बादशाह से सम्बन्ध रखने वाले रईसों और आम आदमियों पर भी उसे नज़र रखनी थी। वास्तव में उसके ऊपर इस समय ईस्ट-इण्डिया कम्पनी का सब से भारी ज़िम्मेदारी का काम आ पड़ा था।

आज का जलसा खास तौर पर फील्ड मार्शल जनरल लार्ड लेक के गुप्त हुक्म से किया जा रहा था। इस जलसे में उसे सहारनपुर के पद-च्युत नवाब बब्बू ख़ाँ को खुश करने का हुक्म मिला था। जो सिंधिया का एक जागीरदार था, पर दिल्ली से सिंधिया का प्रभाव हटते ही नवाब को भी पदच्युत करके उस की पैन्शन कर दी गई थी। उसी पदच्युत नवाब बब्बू ख़ाँ को अपने अधीन करने के लिए होल्कर सहारनपुर में जोड़-तोड़ लगा रहा था। क्योंकि इसके साथ रुहेलखण्ड की समूची रुहेलों की शक्ति उसके साथ आ लगती थी। परन्तु वह आवारा, मूर्ख और दब्बू नवाब न अपनी कुछ ज़िम्मेदारी समझता था, और न उसे राजनीति का ही कुछ ज्ञान था। शराब पीना, पतंगें उड़ाना या तीतर-बटेर लड़ाना या नालायक़ मुसाहिबों के साथ खुशगप्पियाँ उड़ाना उसका धन्धा था। जो पैन्शन वह पाता था, वह उसी में खुश था, क्योंकि उसे उसके लिए कुछ भी न करना पड़ता। उन दिनों अमीर लोग पैन्शनों और जागीरों की आमदनी पर ही सब प्रकार की लन्तरानियाँ किया करते थे। अंग्रेज़ भी इस बेवक़ूफ नवाब के प्रभाव को जानते थे। वे नहीं चाहते थे—कि वह

होल्कर जैसे दुश्मन के हाथ लगे--इसी से वे उसे सहारनपुर से दिल्ली उड़ा लाए थे, और इसी की गंध सूँघते हुए चौधरी दिल्ली की गलियों में ख़ाक छानते फिर रहे थे। सही अर्थों में इसी को कहते हैं—गधे को बाप बनाना। उन दिनों अंग्रेज खासतौर पर इस काम में खूब होशियार थे।

कर्नल आक्टरलोनी का रंग एकदम सफेद, क़द लम्बा, आँखें नीली, बाल सुर्ख और मूछें बहुत छोटी कटी हुई थीं। वह इस समय आवे खाँ का अंगरखा पहने, चिकन की नीमास्तीन डाटे, चूड़ीदार चुस्त पायरवाँ, और सुर्ख रेशमी कमरबन्द कमर में कसे और सिर पर लखनवी दुपल्लू लैसदार टोपी पहने अच्छा ख़ासा नवाब जंच रहा था। स्वास्थ्य उसका बहुत अच्छा था, और यह देशी लिबास उस पर फबता था। वह इत्मीनान से मसनद पर शरीर का बोझ डाले—हुक्के की सटक हाथ में लिए पदच्युत नवाब बब्बू खाँ से धीरे-धीरे बातचीत कर रहा था। शराब के जाम आते जाते थे और वह स्वयं पीने की अपेक्षा अपने इस लायक दोस्त को पिलाना ज़्यादा जरूरी समझ रहा था।

नवाब बब्बू खाँ भी इस वक्त अपने को सवारों में समझ रहे थे। अपनी हैसियत वे भूल गए थे और सचमुच नवाब की भाँति बैठे मुश्की

तम्बाखू का मज़ा ले रहे थे। कीमती विलायती शराब उनके हलक़ से ज्यों-ज्यों उतरती जाती थी वह चहकते जाते थे।

रंडियों का मुजरा सामने चल रहा था। और थोड़े फासले पर तीन चार अंग्रेज़ अफसर और दो तीन देशी रईस भी इस जल्से की शोभा बढ़ा रहे थे। जिनकी ख़ातिरदारी का काम कर्नल का ख़ास अर्दली कल्लू खाँ निहायत ख़ूबी से कर रहा था। उसकी एक आँख अपने मालिक पर थी, और वह उसकी हर हरकत को गहराई से देख रहा था तथा प्रत्येक बात का मतलब समझता था। और दूसरी आँख मेहमानों पर थी—जिनमें से अनेकों की वहाँ हाज़िरी किसी ख़ास मतलब से ही थी। यही हाल रंडियों का भी था। वे ख़ूब ठाठ से सजी-धजी बारी-बारी से मुजरा कर रही थीं। रंडियों की ख़ाला खानम अपना भारी भरकम शरीर लिए बैठी सरौता चला रही थी, और अपनी नौचियों को कर्नल या उसके अर्दली के इशारे पर मुजरे के लिए खड़ा कर रही थी।

कर्नल का ध्यान तमाम महफिल पर था। पर वह ख़ूब धीरे-धीरे इत्मीनान से नवाब से बात कर रहा था। वह कह रहा था—

"नवाब, हम आप जैसे ख़ानदानी रईस से मिल कर बहुत ख़ुश हैं। हमें सख्त अफ़सोस है, कि इन मराठों ने आप जैसे ख़ानदानी रईसों को तबाह कर दिया। और बादशाह सलामत को भी अपना ग़ुलाम बना लिया।"

"हुज़ूर, हम सात पुश्त के रईस हैं। मेरे दादाजान, अल्लाह उन्हें जन्नत बख्शे, मुहम्मदशाह अब्दाली के सिपहसालार थे और जब अब्दाली लौटे और मराठों का ख़ात्मा हो गया, तो उन्होंने मेरे दादाजान को यह सहारनपुर की जागीर इनायत की थी, और उन्हें तमाम रुहेले सरदारों का सदर मुकर्रिर किया था। मुद्दत तक वे शाहीदर्बार में सब रुहेले सरदारों के वकील-मुतलक रहे। लेकिन इस मर्दूद महादजी सिंधिया ने न दिल्ली दर्बार का अदब रखा, न हम रईसों का। ख़ुदा ग़ारत करे उसे। उसने बादशाह को तो ऐसा बाँध कर रखा हुज़ूर, कि तौबा ही भली।

फिर हम रईसों की औकात क्या ?"

'तो उन डाकुओं से तो अब आपका पिण्ड छूट गया। बादशाह सलामत भी आज़ाद हो गए। अब तो आपको खुश होना चाहिए।"

"अल्लाह जानता है, हुज़ूर, कि मैं आप फिरंगियों की सोहबत में कितना खुश रहता हूँ, हमेशा फिरंगियों की शराब पीता हूँ। पोशाक भी वही पसंद करता हूँ। सिरफ गुफ्तगू का लुत्फ नहीं ले सकता, हुज़ूर, ज़बान आप लोगों की माशा अल्लाह ज़री सख्त है। कम्बख्त जुबान पर चढ़ती ही नहीं।"

'"कर्नल ने हँस कर कहा—लेकिन नवाब, हमें तो आप ही की ज़बान और आप ही का लिबास पसन्द है, आपके यहाँ की औरतें भी उम्दा होती हैं।"

"आक्खा, तो यह राज़ तो अब खुला, बन्देनेवाज़। आपको शौक है तो बखुदा ज़रा सहारनपुर लौटने दीजिए, वह ताज़ा कमसिन चूज़े खिदमत में पेश करूँ कि हुज़ूर भी अश-अश करने लगें।"

"ख़ैर, तो इस मसले पर फिर ग़ौर किया जायगा। फिलहाल तो मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि मैं कम्पनी बहादुर की सरकार से सिफारिश करूँ कि आपको आपकी रियासत वापस मिल जाय, और आपके भाईबन्द रुहेले सरदारों पर भी आपका वही रुतबा क़ायम रहे जो आपके मरहूम दादाजान का था।"

"निहायत ही पाकीज़ा और मुबारक खयालात हैं हुज़ूर, ज़रूर ऐसा ही कीजिए।"

"तो इसके लिए नवाब साहब, आप को भी एक दस्तावेज़ पर दस्तखत करना होगा। आप भी कम्पनी बहादुर की सरकार के नमकख़ार रहेंगे, और इन डाकू मराठों से कोई ताल्लुक नहीं रखेंगे।"

"लाहौल विलाक़ुवत, हमें भला उन डाकुओं से क्या सरोकार होगा। हम तो हमेशा के लिए कम्पनी बहादुर के खैरख़ाह—नमकख़ार और ख़ादिम रहेंगे।"

"तो यह दस्तावेज़ है, दस्तख़त कीजिए।" कर्नल ने दस्तावेज़ नवाब के आगे रख दिया। जिसे पढ़ने-समझने की भी नवाब ने आवश्यकता नहीं समझी। उस पर अपने हस्ताक्षर कर दिए।

कर्नल ने काग़ज़ अपने अर्दली कल्लू की ओर बढ़ाते हुए कहा—"तो नवाब, अब आप अपने डेरे पर आराम फ़र्माइए। मैं कल आप की सिफ़ारिश—कम्पनी बहादुर के गवर्नर जनरल साहब बहादुर की खिदमत में भेज दूँगा।"

इतना कह कर कर्नल उठ खड़ा हुआ। उसके संकेत से दो अंग्रेज़ अफ़सर नवाब के पीछे आ खड़े हुए। नवाब ने उठते हुए कहा—"लेकिन हुज़ूर, उस गंदी जगह में मुझे कब तक क़ैद रखा जायगा। जब आप इस क़दर मेहरबान हैं तो मुझे क़ैद क्यों रखा गया है। ख़ास कर अब तो मैं कम्पनी बहादुर का दोस्त और ख़ादिम हो गया।"

"तो बस, अब इस क़ैद का भी ख़ात्मा समझिए। इतमीनान रखिए, बहुत जल्द आप को अपने घर जाने की इजाज़त मिल जायगी।"

"लेकिन आख़िर कब तक?"

"बस कलकत्ते से जवाब आने तक की देर है।"

"तब तक क्या मुझे उस दोज़खी हुसैनी की गंदी कोठरी में क़ैद रहना पड़ेगा? हुज़ूर, मैं एक ख़ानदानी नवाब हूँ, यह भी तो देखिए।"

'मेरा ख़याल है विलायती शराब आप को वहाँ भी मिल जाती है?"

"ख़ैर, शराब की तो मुझे शिकायत नहीं।"

"फिर शिकायत किस बात की है?"

"वह पाजी, मक्कार आदमी है, रईसों से किस तरह सलूक करना चाहिए यह वह नहीं जानता। वह बेअदबी करता है—कि जी चाहता है उसका ख़ून पी जाऊँ।"

कर्नल ने हंसकर कहा—"तो नवाब, उसे यह बात थोड़े ही मालूम है कि आप ख़ानदानी रईस और नवाब हैं। यह बात तो क़सदन पोशीदा रखी गई है। मसलहतन। समझ गए?"

"लेकिन इसका मतलब क्या है ?"

"यह, कि जब तक कलकत्ते से हुक्म, आप की जागीर की बहाली का न आ जाए तब तक सब बातें पोशीदा रहना ही मसलहतन ठीक है। भेद खुलने से खेल बिगड़ सकता है।"

"खैर, ऐसा है तो कुछ हर्ज़ नहीं है। हुज़ूर से मैं बहुत खुश हूँ। बस, सहारनपुर जाने की देर है। वह तोहफ़ा नज़र करूँ, बस समझिए कच्ची अम्बियाँ! खुदा की क़सम हुज़ूर।" कर्नल हँसा। हँस कर बोला—"अम्बियाँ तो खट्टी होती हैं नवाब। खैर, तो खुदा हाफ़िज़।" कर्नल ने हाथ बढ़ाया। नवाब ने पीछे खड़े अंग्रेज़ अफ़सरों की ओर कनखियों से देखा। उसकी आँखों में भय व्याप गया। वह कहना चाहता था कि ये दोनों सफ़ेद भेड़िये उसे एक कुत्ते से ज़्यादा नहीं समझते। पर उसके मुँह से बात नहीं निकली। नवाब दोनों अंग्रेज़ों के साथ बाहर चला गया।

कर्नल के चेहरे का कोमल भाव तत्काल लुप्त हो गया। उसने रूखे स्वर में कहा—महफ़िल बर्खास्त। तुरन्त साज़िन्दे—रण्डियाँ—दरबारी रुखसत हो गए। क्षण भर में सन्नाटा हो गया। इसी समय कल्लू ने आकर कान में कहा—"हुज़ूर, बड़े जनरल साब आए हैं। उन्होंने सलाम दिया है।"

कर्नल झपटता हुआ दूसरे कमरे में गया। जो अंग्रेज़ी ढंग से सजा था। वहाँ एक कुर्सी पर हाथ की छड़ी टेके लार्ड लेक बड़े ग़ौर से दीवार पर टंगे हुए भारतवर्ष के नए नक़्शे को देख रहे थे।

: १६ :
दो सच्चे अंग्रेज़

कर्नल के आने की आहट सुन कर लार्ड लेक ने घूम कर कर्नल का हाथ पकड़ कर कहा—"गुड ईवनिंग कर्नल! क्या मैं ने तुम्हारी तफ़रीह में खलल डाला ?"

"ज़रा भी नहीं माई लार्ड, मैं तो बस अब फ़ारिग़ हो कर आप की

इन्तजारी ही कर रहा था। आप का हुक्म मुझे तीसरे पहर ही मिल चुका था।"

"यह नक़्शा कब बन कर आया है कर्नल ?'

"इसी हफ़्ते, क्या अभी आप ने इसे नहीं देखा ?"

"पहले ही पहल देख रहा हूँ।"

"इसकी नक़ल तो मैं कल के ख़रीते में आप की ख़िदमत में भेज चुका हूँ।"

"कल का तुम्हारा ख़रीता तो अभी मैं ने खोला ही नहीं कर्नल। कल दिन भर मैं गवर्नर-जनरल को ख़त लिखने में मशगूल रहा। इसके अलावा मेजर फ्रेज़र को उस डाकू होल्कर के पीछे भरतपुर रवाना करना था। बस, इसी काम में मुझे बिल्कुल फ़ुर्सत नहीं मिली। लेकिन यह नक़्शा तो कर्नल टाड ने भेजा है न ?"

"जी हाँ, मुझे याद आता है कि आप कई बार इसके मुतल्लिक़ ज़िक्र भी कर चुके हैं। उस दिन आप ही के हुक्म से मैं ने कर्नल टाड को याद दिहानी की थी, इस पर उसने यह दो कापियाँ भेजी थीं। एक यह है, दूसरी मैं आप की ख़िदमत में कल भेज चुका हूँ। क्या यह बहुत ही काम की चीज़ है माई लार्ड कर्नल ?"

"ओह, बहुत ही काम की। बल्कि कहना चाहिए इसी के ऊपर हम अंग्रेज़ों की मौत और ज़िन्दगी निर्भर है।"

"ऐसी बात ?"

"बेशक, मराठों से हम दो बड़ी लड़ाइयाँ हार चुके। इनमें हमें कितनी ज़हमत उठानी पड़ी धन जन की कितनी बर्बादी और परेशानी हुई।"

'लेकिन ये लड़ाइयाँ हमने हारीं यह तो नहीं कहा जा सकता जनरल महोदय, सालवई की सन्धि कुछ हमारे हक़ में बुरी नहीं हुई, इस से हमें बीस साल साँस लेने को मिले। इसके अतिरिक्त वसीन की सन्धि में पेशवा को हमने परक़ैंच कर दिया। वह तो सब से शानदार सन्धि पत्र

था। इस प्रकार से सारे ही मराठा सरदारों की स्वतन्त्रता उस से छिन गई है।"

"परन्तु मराठा शक्ति का ख़ातमा तो हुआ नहीं। वसीन की संधि से ही तो चिढ़ कर और उसे मराठों का अपमान समझ कर उन्हों ने हम से दूसरा युद्ध छेड़ दिया।"

"परन्तु उसका परिणाम भी क्या बुरा रहा। इससे कम्पनी के अधिकृत प्रदेशों की संख्या बढ़ गई। मराठों की शक्ति घटी और भोंसले और सिंधिया ने सबसीडियरी सिस्टम अख्तियार कर लिया।"

"हाँ आ, वह सब तो हुआ। लेकिन होल्कर उस युद्ध से अछूता बच गया, और अब हमारे गले का पत्थर बना हुआ है। देखते नहीं—वह कम्पनी के राज्य की ज़रा भी शान न मान कर अपनी ओर से अंग्रेज़ो की रक्षा में आई हुई राजपूत रियासतों को नष्ट भ्रष्ट कर रहा है, और उनसे चौथ उगाह रहा है। कर्नल मानसन को उसने देखो कैसी करारी हार दी। और फिर वह पाजी भरतपुर का राजा भी उससे मिल गया है। और दिल्ली घेर ली।"

"पर शुक्र है खुदा का, कि आपकी बहादुरी और तलवार ने दिल्ली पर फ़तह हासिल कर ली।"

"लेकिन इससे क्या? जब तक होल्कर पूरी तरह नहीं कुचल दिया जाता, हमारी मुहिम पूरी नहीं होती। मराठा मण्डल का वही तो आखिरी काँटा रह गया है। उधर पेशवा बाजीराव भी उकस-मुकस कर रहा है। वसीन की संधि उसे चुभ रही है। मराठा सरदार उसे उकसा रहे हैं। और सच बात तो यह है कि मराठा अब भी समूचे भारत में मराठा साम्राज्य स्थापित करने की चेष्टा कर रहे हैं।"

"तो देखा जायगा, किस के बाजुओं में ताकत है। हिन्दुस्तान पर अंग्रेजों का साम्राज्य क़ायम होगा कि मराठों का।"

"अभी मुझे कुछ गम्भीर ख़बरें मिली हैं कर्नल, पेशवा ने पूना की रेजीडेन्सी पर आक्रमण किया है, और उसे जला दिया है। और रेजीडेन्ट

जनरल एलफिन्स्टन को क़त्ल करने की कोशिश भी की गई। यह बहुत ज़रूरी है कि पेशवा की मसनद को बिल्कुल उलट दिया जाय। और मराठों की ताक़त का ख़ात्मा हो जाय। इसके लिए हमारी एक लाख तलवारें इकट्ठी हो रही हैं कर्नल, बस हमें एक चीज़ की इन्तज़ारी थी।"

"किस चीज़ की माई लार्ड।"

"इसी नक्शे की।"

"यह नक्शा इस क़दर क़ीमती है ?"

"ओफ, कर्नल ! पिछली दोनों मराठा लड़ाइयों में हमारी नाकामियों और कमजोरियों का असल कारण ही यह था कि हमारे पास राजपूताना और मध्य हिन्दुस्तान के सही नक्शे ही नहीं थे। जो नक्शे हमारे दफ्तरों में थे, वे बिल्कुल ग़लत और अधूरे थे। और लड़ाई के वक्त हम ठीक-ठीक यह अंदाज़ा न लगा सके कि कहाँ कौन नदी-नाला, पहाड़-दर्रा और मैदान है। कहाँ हमारी और दुश्मन की फौजें छिप सकती हैं। कहाँ हमारे तोपख़ाने जमाए जा सकते हैं। कभी-कभी तो हम बिल्कुल ही धोखे में रह गए। और हमें गहरे नुकसान उठाने पड़े।"

"वाक़ई यह बड़ी ख़ामी थी।"

"इसी से मैंने कर्नल टाड को चुना कि वह अंग्रेज़ कौम की यह भारी खिदमत करे। वह बड़ा विद्वान, समझदार और कुशल कूटनीतिज्ञ है। मैंने उसे दो कामों का भार दे कर राजपूताने का रेजीडेन्ट बना कर भेजा—एक तो यह कि राजस्थान और मध्य हिन्दुस्तान का खूब बारीक़ी से सर्वे कर के सही नक्शा तैयार करे। जिसमें मध्य भारत और राजस्थान की सही भौगोलिक स्थिति का संकेत हो। दूसरे, वह एक ऐसी किताब लिखे, जिसमें राजपूतों की तारीफ़ हो और मराठों की खूब बुराई की जाय। मेरी सिफारिश से गवर्नर-जनरल ने उसे मेवाड़, मारवाड़, जयपुर, कोटा और बूँदी इन पाँच राजपूत रियासतों के लिए कम्पनी का एजेन्ट नियुक्त किया है। मैं समझता हूँ कि मैंने ग़लत आदमी नहीं चुना। उसकी किताब का एक भाग मुझे मिल चुका है। उसमें वह अपनी तेज बुद्धि और कूटनीति

को काम में ला रहा है। वह इस होशियारी और चालाकी से यह किताब लिख रहा है कि उसे पढ़ कर राजपूतों का मन मुसलमानों और मराठों से फिर जाय। इस बात की इस वक्त हमें सख्त ज़रूरत है कर्नल; और वह अच्छे अंग्रेज़ की तरह यह काम निहायत होशियारी से कर रहा है।"

"मैं समझ गया जनरल महोदय, आपका अभिप्राय यही है कि वह ऐसी किताब लिखे, कि जिसे पढ़ कर वे तीनों प्रबल जातियाँ भारत की स्वाधीनता के नाम पर परस्पर कभी न मिलने पाएँ।"

"बेशक, बेशक, हमारी यही मंशा हैं कर्नल, पर ये गधे हिन्दुस्तानी इस बात को नहीं समझते। अपनी तारीफें पढ़-पढ़ कर राजपूत राजा और जागीरदार सरदार उसे जी भर-भर कर नज़रें और रिश्वतें दे रहे हैं। मैंने उसे लिख दिया है कि उनका मन रखने को वह ये रिश्वतें और नज़राने ले सकता है। कम्पनी की सरकार को इसमें कोई उज्र नहीं है।"

"उसे तो कम्पनी की सरकार से भी दाद मिलनी चाहिए जनरल महोदय।"

"ज़रूर, मैंने गवर्नर-जनरल को सब बातें लिखी हैं। सच तो यह है कि उसकी क़लम और बुद्धि पर हम सब अंग्रेज़ों का भाग्य बंधा हुआ है। अब दो बातें हैं—एक तो यह कि हमें मध्य हिन्दुस्तान का सही नक्शा मिल जाय। जिसकी मदद से हम आने वाली मराठों की तीसरी लड़ाई को इस तरह जीत ल कि पेशवा की गद्दी का खात्मा ही हो जाय। दूसरे वह अपनी किताब लिख कर राजपूतों का मन मराठों से फेर दे। जिससे हम राजपूत राजाओं के साथ सिंधिया सरकार से ऊपर ही ऊपर पृथक् संधि कर लें। और उनका सम्बन्ध सिंधिया सरकार से विच्छिन्न करके उन्हें भी कम्पनी के साथ सब-सीडियरी संधि के जाल में लपेट लें।"

अब तक जयपुर, जोधपुर आदि रियासतें सिंधिया की सामन्त थीं, और दूसरे मराठा युद्ध के बाद सिंधिया और अंग्रेज़ों की जो संधि हुई थी, उसमें कम्पनी ने सिंधिया और राजपूतों के इस सम्बन्ध को स्वीकार किया

था। अब इस संधि का भंग होने पर सम्पूर्ण राजपूत रियासतें अंग्रेजी सरकार की सामन्त बन गई हैं। राजपूतों की परस्पर की फूट ने हमें बहुत मदद पहुँचाई है। और सब से बड़ा काम टाड की वह पुस्तक कर रही है जो वह 'टाड राजस्थान" के नाम से लिख रहा है।"

"जनरल महोदय, तब तो टाड अंग्रेज़ कौम की भारी सेवा कर रहा है। मैं चाहता हूँ कि एक ख़त लिख कर उसका अभिनन्दन करूँ।"

"ज़रूर करो, और मेरी ओर से भी उसे मुबारकबाद दो। और लिख दो कि नक्शे को फिर से संशोधित करके भेजे। किताब को भी जल्द खत्म करें। अब हमारी आखिरी फतह का दारोमदार उसी के इन दोनों कामों पर ही है। कल बादशाह का दरबार है। और अब वक्त आ गया है कि हम उस पर साफ-साफ प्रकट कर दें कि वह अब कम्पनी सरकार का पेन्शनयाप्ता है। शहनशाहे हिन्द नहीं। इसलिए अब हम सब ऊपरी आदाब अलकाब और दरबारी क़ायदे हटा देना चाहते हैं। कल के दरबार में बादशाह को न नज़र पेश की जायगी, न खरीते में अब गवर्नर जनरल अपने को उसका 'फिदबीए खास' कहेगा न लिखेगा। इसके अलावा मैं दरबार में कुर्सी पर बैठ कर बादशाह से मुलाक़ात करूँगा। यह तुम खुद बादशाह से मिल कर दरबार से पेश्तर सब तय कर लेना कर्नल।"

"लेकिन जनरल महोदय, यह क्या वक्त से पहले हमारा क़दम न होगा ? आप तो जानते ही हैं कि बादशाह कम से कम हम को पसन्द करता है। क्योंकि वह जानता है—कि अब हमारे चंगुल में फंसकर उस की सल्तनत कभी उसके हाथों में नहीं जा सकती।"

"यह ठीक हैं। पर हमने बहुत दिनों से बादशाह के अधिकारों को नहीं माना है, जब तक हमें फ़ायदा दीखा—ऊपरी तौर पर हम बादशाह का अदब-क़ायदा दिखाते रहे। अब हमें बादशाह नाम तक की जरूरत नहीं रही है, फिर हम उसे अब एक माक़ूल रक़म पैन्शन में दे रहे हैं, तो यह ज़रूरी है कि अब उस के राजत्व के लक्षण अलग कर दिए जायँ, और सल्तनत की बक़ाया सालाना आमदनी कम्पनी के अधिकार में रहे।

सिवाय अपने ख़ास कुटुम्ब के और हर तरफ़ से उसके अधिकार परिमित कर दिए जाँय।"

"तो इस का मतलब यह कि सिवाय बादशाह की उपाधि के और सब स्वत्व—सत्ता—और अधिकार बादशाह से छीन लिए जाय।"

"बेशक कम्पनी सरकार का यही मन्शा है। उस बूढ़े—अन्धे और निकम्मे निर्बल नामधारी बादशाह के लिए क्या यही काफ़ी नहीं है कि उसे मराठों के पंजे से मुक्त करके हम ने दया करके उसके पुश्तैनी लाल क़िले आज़ाद छोड़ दिया है, कि वह जब तक चाहे ज़िन्दा रहे। और जब तक ज़िन्दा रहे, बारह लाख रुपयों की शानदार पैन्शन बैठे बिठाए पाता रहे—बस ख़त्म।"

"क्या अब सिंधिया से कोई ख़तरा नहीं है ?"

"खतरा अब और क्या हो सकता है। लसवाड़ी के मैदान में उसका सब दम ख़म चूर कर डाला गया। लेकिन कर्नल, लसवाड़ी में ये लोग शैतान की तरह लड़े, कहना चाहिए—बहादुरों की तरह लड़े। अगर हमने हमले का ढंग बहुत सोच-विचार कर इस रीति पर न किया होता कि हमें ज़बर्दस्त सेना के लिए भी, जो हमारे मुक़ाबले आ सकती थी, करना चाहिए, तो मुझे पूरा यक़ीन है कि दुश्मन की जो स्थिति थी—उस से हमारी करारी हार होती।"

"ग़ज़ब हो जाता जनरल महोदय।"

"इसमें क्या शक है। मैं कह सकता हूँ—कि मैं अपनी ज़िन्दगी भर कभी इतनी बड़ी विपत्ति में नहीं फंसा था। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि फिर कभी ऐसी मुसीबत में न पड़ूँ।"

"लेकिन जनरल महोदय, यदि फ्रान्सीसी अफ़सर कैम्प का नेतृत्व करते तो कदाचित कुछ और ही परिणाम होगा।"

"यक़ीनन हमें मुंह की खानी पड़ती कर्नल, मुझे तो पराजय सामने खड़ी ही दिखाई दे रही थी। कि इतने ही में मराठी सेना के नेता हम से आ मिले। हमारे बहुत-से अफ़सर और सिपाही अवश्य खेत रहे—पर

अन्त में फ़तह हमारी ही रही। यह फ़तह मामूली नहीं थी कर्नल, भारत की निर्णायक लड़ाइयों में एक थी, क्योंकि लसवाड़ी की सेना उत्तरी भारत में मराठों की अन्तिम सेना थी। उस की तोपें जो हमारे हाथ लगी हैं, हमारी तोपों से कहीं उम्दा हैं।"

"आप को मुबारकबाद देता हूँ माई लार्ड।"

"बस, अब तो सिंधिया के ख़त्म करने में दो ही बातें हैं। एक ग्वालियर को दख़ल करना, जो सिंधिया की राजधानी है। दूसरे सिंधिया और उसके साथ वाली सेना को परास्त करना। ग्वालियर की रक्षा अम्बाजी के सुपुर्द थी, जो संदिग्ध-चरित्र का मनुष्य था। पर अभी हम उसे पटा ही रहे थे कि सिंधिया स्वयं वहाँ जा बैठा। लसवाड़ी की लड़ाई से जयपुर के राजा और उसके सब बदमाश, दग़ाबाज़ सलाहकारों की अक़्ल ठिकाने लग गई थी। वे सब हमारे ताबे हो गए। और बरहानपुर में सिंधिया ने भी कम्पनी के साथ उसी तरह सब-सीडीयरी सन्धि स्वीकार कर ली, जिस तरह कि पेशवा स्वीकार कर चुका था।"

"तब तो यह एक मार्के की फ़तह थी।"

"इस में क्या शक है। इस से कम्पनी का भारतीय साम्राज्य इतना बढ़ गया है, जितना शायद किसी भी दूसरे युद्ध से नहीं बढ़ा था।"

"यह गवर्नर जनरल महोदय की आशा से कहीं अधिक है। जिसका श्रेय माई लार्ड, अकेले आप को है। मैं आप का अभिनन्दन करता हूँ जनरल महोदय।"

"धन्यवाद कर्नल, परन्तु जब तक यह चोर होल्कर ज़िन्दा है, हम सुरक्षित नहीं हैं। होल्कर की पराक्रमशीलता, उस का युद्ध कौशल, और महत्वाकाँक्षा देखते हुए हिन्दुस्तान में पूरी तरह शान्ति क़ायम करने के यह आवश्यक है कि उस की शक्ति को एक दम तोड़ दिया जाय।"

"बेशक, बेशक! और इसके लिए अब हमें जी जान से कोशिश करनी है।"

"यही बात है कर्नल, ख़ैर, तो तुम बादशाह से सुबह ही मिल कर

कल दरबार की बाबत सब मामला साफ़-साफ़ तय कर डालो।"

"बहुत अच्छा जनरल महोदय, और कुछ हुक्म है ?"

"हाँ, उस बदनसीब नवाब बब्बू खाँ का क्या हुआ ?"

"वह तो बिल्कुल दब्बू और पोच आदमी है। उस ने बिना ही पढ़े सोचे-समझे हमारी शर्तें मान ली हैं। यह इक़रारनामा है, लीजिए।"

लार्ड लेक ने इक़रारनामा पढ़ा। कहा—"ठीक है, मैं गवर्नर-जनरल को इसे भेज दूँगा। लेकिन उस को दिल्ली में क़ैद रखना ज़रूरी है।"

"ऐसा ही होगा महोदय।"

"तो गुड नाइट कर्नल।"

"गुड नाइट सर।"

: २० :

हुसैनी कबाड़ी

दरियागंज का फ़ैज़ बाज़ार आज तो दिल्ली की नाक बना हुआ है। शानदार इमारतें, चौड़ी सड़कें, नए ढंग की जगमग रोशनी और बढ़िया दुकानों ने तो फ़ैजबाज़ार को दिल्ली का एक प्रमुख बाज़ार बना ही दिया है, वह नई और पुरानी दिल्ली की कड़ी बन गया है। इसलिए सारा दिन मोटर—बस—रिक्शा और आने जाने वाले आदमियों का ताँता लगा रहता है। पर हम जिन दिनों की बात कर रहें हैं उन दिनों को तो अब सौ बरस से भी अधिक बीत चुके हैं। उन दिनों फ़ैज़ बाज़ार एक तंग और गंदा बाज़ार था। उस में ज़्यादातर हलवाइयों, नानबाइयों और हज्जामों की दूकानें थीं। सड़क कच्ची, गलियाँ तंग और अन्धेरी थीं। इस समय जहाँ सब्ज़ी मार्केट है—वहाँ एक कच्ची सराय थी। जहाँ ऊँट, घोड़े, खच्चर, गधे, और उनके सवार मुसाफ़िर भरे रहते थे। सरे बाज़ार भटियारनें रोटियाँ पकाती और सौदे पटाती थीं। दूकानों के कोनों पर या तो सस्ती टकियाही रण्डियाँ बैठती थीं या हिजड़े। सड़कों पर न रोशनी का इन्तज़ाम था, न गंदे पानी के निकलने का। वास्तव में

वह लाल क़िले में रहने वालों का बाज़ार था। जिस में क़िले वाले सिपाहियों और दूसरे लोगों को उन की ज़रूरत की सभी चीज़ें मिल जाती थीं।

फ़ैज़ बाज़ार के सामने दरिया की ओर घना जंगल था। जमना का पानी बरसात में फ़ैज़ बाज़ार की सड़कों पर चढ़ आता था और दूकानें उस में डूब जाती थीं। इस समय जहाँ फ़ैज़ बाज़ार का थाना है—वहाँ अंग्रेज़ों की रेज़ीडेन्सी थी। अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट उसमें रहता था। रेज़ीडेन्सी अच्छी ख़ासी क़िलेनुमा इमारत थी। जिस की दीवारें बहुत पुख़्ता थीं। उसकी फ़सीलों पर हर वक्त तोपें चढ़ी रहती थीं। और हर वक्त लाल मुँह के फ़िरंगी सारजेन्ट पहरे पर मुस्तैद रहते थे। रेज़ीडेन्सी के चारों ओर अंग्रेज़ों के बंगले थे। पर अभी वह मुहल्ला काफ़ी आबाद न था। रात में तो यह पूरा जंगल दीख पड़ता था। आज जहाँ एक से एक बढ़कर बंगले और बाज़ार बन गए हैं, जो आधी रात तक गुलज़ार रहते हैं। उन दिनों वहाँ दिन छिपते ही सन्नाटा हो जाता था। घर से बाहर निकलना जान ख़तरे में डालना था, क्योंकि चोर-डाकू—गले कट—गिरहकट वहाँ घूमते ही रहते थे। दिल्ली दरवाज़े के बाहर तो जाना एक दम ख़तरे का काम था—ख़ास कर रात के वक्त में। दिल्ली दरवाज़े की फ़सीलों के बाहर न कोई पक्की सड़क थी—न रास्ता। केवल एक सड़क महरौली को जाती थी। जो घूम कर मथुरा की सड़क से मिल गई थी।

इसी फैज़ बाजार में एक छोटी-सी बिसाती की दूकान थी। दूकान में पुराने सामान, तस्वीरें, पुराने कपड़े, बर्तन, सूई-धागा, मिट्टी के बर्तन, पुराने हथियार और ऐसी ही अगलम-बगलम चीजें बिकतीं थीं। बाहर से देखने में दूकान बड़ी गंदी देख पड़ती थी। जहाँ सब सामान बेतरतीबी से पड़ा रहता था। लोग इस दूकान पर से मछली और अंडे से लेकर जूते और नमक मसाले तक खरीद सकते थे। दूकान भीतर बड़ी गहरी चली गई थी। वहाँ दिन में भी अंधेरा रहता था। दूकान में दो चार हुक्के

हर वक्त ताजा दनादन तैयार रहते थे, ग्राहक हुक्का गुड़गुड़ाते और सौदा खरीदते थे। दूकान के बाईं ओर एक पतली गली मछली वाले बाज़ार तक चली गई थी। रात को इस गली में घुप अंधेरा रहता था। दूकान के पिछवाड़े का दरवाज़ा इसी गली में था। यहीं पिछवाड़े की तरफ़ दूकान में एक अंधेरी कोठरी थी, जिसका द्वार भी उधर ही था। यहाँ बैठ कर ग्राहक चण्डू और मदक के दम लगाते या विलायती शराब पीते थे। जो इस दुकान पर खासतौर पर बेची जाती थी।

दूकान के स्वामी का नाम हुसेनी था। देखने में यह आदमी अच्छा-खासा मस्खरा लगता था। गला काटने और जहर खिलाने से लेकर कुर्रम-गिरी करने तक कोई काम ऐसा न था जो मियाँ हुसैनी न कर सकते हों। सारे कुकर्म इसी पिछली कोठरी में होते थे, जिसकी कानोंकान किसी को खबर भी नहीं लगती थी।

रात के नौ बज चुके थे। दूकान का सदर दरवाजा बन्द हो चुका था। पर पिछवाड़े वाली कोठरी में इस समय हुसेनी आराम से बैठा हुक्का पी रहा था। उसे कई मुलाक़ातियों के आने की उम्मीद थी। मुला-क़ाती उसके लिए हमेशा लाभदायक होते थे। निठ्ठले मुलाक़ातियों से वह वास्ता नहीं रखता था। इसी समय चौधरी ने आकर कहा—"मज़े से हुक्का गुड़गुड़ा रहे हो दोस्त।"

"आ वई चौधरी, भीतर आ जा, फिक्र न कर। आजकल काम मंदा हो रिया है। आज के दिना तो बौतई सर्दी है, कि तौबा ही शुक्र है। बस, मैं ज़रा जुम्रा मैजिड तोड़ी सैल करके अबी आया हूँ।"

चौधरी भीतर आकर बैठ गए। इधर-उधर देख कर उन्होंने कहा—"साहेब लोग आएँगे भी।"

"सूर ही मरे जो जूठ बोले। क़सम रजक वई चौधरी, साब लाखों में आवेंगे। साव लोग में ये बात लाख रुपये की है। बात के धनी होते हैं। बस अब वख्त हो ही रिया है। फिर फैज बजार में मेरी दुकान में जो शराब मिलती है, वो रेजीडेन्ट के बंगले पर भी नी मिलती। मैं सीधा

बम्बई से चालान मंगाता हूँ। लेकिन मेरा बकाया नज़राना ?"

"कौल के मुताबिक ज़रूर मिल जायगा। पहले वादा तो पूरा हो।"

"बेफिक्र रहो। तुम मेरे देहाती रिश्तेदार बन जाना, और मजे में एक ठौर पड़े खुर्राटे भरना।"

"ऐसा ही होगा। खातिर जमा रखो।"

"बई चौधरी, रिजक क़सम, दग़ा की तो छुरा कलेजे के पार कर दूंगा।"

"दग़ा करके अपना ही तो काम बिगाड़ूंगा। यह भी समझते हो ?"

'वो साब लोग आ रहे हैं। देखो विन की ही आवाज़ है। अब चुपचाप पड़ रहो।"

इसी समय दो अंग्रेज़ दुकान में घुसे। उनके साथ एक हिन्दुस्तानी मुसलमान था। चौधरी ने पहचान लिया, वह बब्बू खाँ नवाब है। नशे में धुत। भय से आँखें फैली हुई।"

साहब लोगों ने मोढ़े पर बैठते हुए इधर-उधर देख कर चौधरी की ओर संकेत करके पूछा—"यह कौन है ?"

"मेरा जिग्री यार कल्लू है साब, जूजा घर में नई थी, बैठे-बैठे कुछ ऐसी घबराई हुई तुम जानो एकला आदमी। दिल में केया, चल वई जरा जुआ मैजिद तोड़ी सैल कर आवें। घर से निकला तो मेरा यार अपने मकान के दरवज्जे पर खड़ावा था। मैं झपक के अगाड़ू बढ़ा और केया, क्यों बई कल्लू, सैल को चल रिया है या नई। ये बोला—हाँ। बस हम खरामा-खरामा सैल करके आरिए है। आते ही अंटाढार हो गया। अब सुबू उट्ठेगा। साब, सूर ही मरे जो जूठ बोले।"

"वैल, यह बखशीश लो। और इस आदमी को अपने घर में अभी बन्द रखो। भागेगा टो, तुम कू साब लोग गोली से उड़ा देगा। समझा, बड़ा साब का हुक्म है।"

"क्या मजाल साब, मुर्दे की टाँग तोड़ दूं, निसा खातिर रहो।"

इसी बीच बब्बू खाँ ज़रा होश में आया। मालूम होता था, उसे

बेहद शराब पिलाई गई थी। और बहुत डराया गया था। उसने भयभीत नेत्रों से साहब लोगों की ओर देख कर कहा—साहब हम को घर जाने दीजिए, खुदा गवाह है, हम दग़ा नहीं करेंगे। मैं इज्जतदार रईस हूँ।"

"टुम बड़ज़ात हाय। बड़ा साहेब बोला है, अभी टुम को कैड में रहना होगा। भागेगा टो तुम्मारा घर का सब औरट-मर्ड तोप से उड़ा डिया जायगा।"

"लेकिन हम भाग के कहाँ जायगा साहेब, हम को छोड़ दीजिए।"

"अबी नईं, जब टक वह डाकू होल्कर सहारनपुर में है। टुम कैड रहेगा।"

साहब लोगों ने अपने हाथों से नवाब को उस कोठरी में बंद कर ताला जड़ दिया और हुसेनी को सख्त ताकीद करके चले गए।

थोड़ी देर तक चौधरी उसी तरह चुपचाप औंधे मुँह पड़े रहे। फिर उठ कर उन्होंने कहा—हुसेनी मियाँ, यह अपना बक़ाया नज़राना लो, और मुझे ज़रा अकेले में मियाँ से बातें करने दो। उन्होंने एक छोटी-सी अशर्फियों की थैली हुसेनी की गोद में फैंक दी।

"लेकिन चौधरी बई, ऐसा न हो कि तुम क़ैदी को ले भागो। और ये साले बन्दर मेरी दूकान को आग लगा दें।"

"खातिर जमा रखो मियाँ, तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। बस मैं ज़रा मियाँ से बातें करूँगा।"

हुसेनी बाहर से ताला बन्द करके चला गया। चौधरी ने नवाब की ओर मुखातिब होकर कहा—"मिज़ाज अच्छे हैं, नवाब साहेब।"

"तुम कौन हो भई, दोस्त या दुश्मन। खुदा दोनों से बचाए।"

"आपको इस वक्त दोस्त की ज़रूरत है या दुश्मन की।"

"खुदा जानता है भई, ज़रूरत तो दोस्त की है।

"किस लिए ?"

"इस दोज़ख से जो निकाल ले जाय।"

"तो सुना नहीं आपका घर-बार तोप से उड़ा दिया जायगा।"

"खुदा की मार इन फिरंगियों पर, आखिर ये चाहते क्या हैं ?"
"यह तो आप ही बताइए। क्यों यहाँ आपको बन्द किया गया है।"
"वे कहते हैं कि तुम होल्कर के पिट्ठू हो, मैं कहता हूँ, ग़लत बात है।"
"आपतो श्रीमन्त होल्कर से बिल्कुल वास्ता नहीं रखते ?"
"लाहौल पढ़ो म्या, क्यों मेरी गर्दन फिरंगियों के हाथ में फंसाते हो।"
"मैं तो आपको आजाद करना चाहता हूँ।"
"वह किस तरह।"
"एक शर्त पर।"
"कौन-सी शर्त।"
"कि आप श्रीमन्त होल्कर की मदद करें।"
"होल्कर मुझे क्या देंगे ?"
"आपकी जानोमाल—इज्ज़त और खानदान की सलामती का वादा।"
"किस तरह ?"
"जिस तरह आप चाहें। श्रीमन्त जानते हैं कि इधर के रुहेले सरदार आपके रिश्तेदार हैं। वे इस समय असंगठित हैं। इसी से फिरंगियों ने एक एक करके आप सबको परकैच किया हुआ है। आप यदि सब मिल कर श्रीमन्त होल्कर सरकार की मदद करें, तो फिरंगियों का मुल्क से मुँह काला किया जा सकता है। वरना सब रईसों की यही दशा होगी जो आपकी हो रही है।
"आखिर होल्कर चाहते क्या हैं ?"
"पांच हज़ार सवार, जिनका पूरा खर्च भी आप ही को उठाना होगा।"
"लाहौल पढ़ो म्या, मैं इतने सवार कहाँ से लाऊँगा। इससे तो फ़िरंगियों की अमलदारी अच्छी है।"
"तभी तो आप यहाँ कैदी बने हैं।"

नवाब साहब, कुछ तो चेतो, आप कौम और वतन से गद्दारी कर रहे हैं।

"बस कलकत्ते से हुक्म आया कि खत्म।"

"कैसा हुक्म ?"

"कि हम रुहेले अंग्रेज़ों के ज़ेर साए रहेंगे। मराठों से नहीं मिलेंगे। सब रुहेलों के सरदार बब्बू खाँ, बस ऊधो का लेन न माधो का देन।"

"अंग्रेज़ इसके बदले क्या देंगे ?"

"वही, जो आप देने का वादा करते हैं। फ़र्क इतना ही है कि आप पांच हज़ार फौज चाहते हैं, अंग्रेज़ कुछ नहीं चाहते।"

"लेकिन मराठे आप के मुल्क के बाशिन्दे हैं।"

"हमें इससे क्या ? हमारे लिए तो अंग्रेज़ी अमल ही ठीक है। बादशाह सलामत ने भी अपना तख़्तोताज उन्हें नज़र कर दिया है।"

"नवाब साहब, कुछ तो चेतो, आप कौम और वतन से ग़द्दारी कर रहे हैं।"

"जाओ, जाओ, अपना काम देखो। वरना सिर धड़ पर नहीं रहेगा। अपना नफा नुकसान नवाब बब्बू खाँ समझते हैं ?"

चौधरी ने और बात नहीं की, वह निराश भाव से उठ कर कोठरी से बाहर हो एक अंधेरी गली में घुस गए।

: २१ :

शहनशाहे हिन्द और अंग्रेज रेजीडेन्ट

बादशाह की शारीरिक और मानसिक दशा ऐसी न थी कि वह इस दरबार की ज़हमत को बर्दाश्त कर सके। खास कर जब कर्नल आक्टर लोनी—रेज़ीडेन्ट ने सुबह ही हाज़िर हो कर बादशाह से लार्ड लेक के सब मनसूबे बताए तो बादशाह तलमला उठा। उसने कहा—"साहब, इस अन्धे और क़ैदी बूढ़े अपाहिज को अब क्यों उसके नौकरों के सामने ज़लील किया जाता है, किस लिए अब ये झूठ-मूठ के तमाशे आँख वालों को दिखाए जाते हैं। शुक्र है खुदा का—कि मेरी आँखें न रहीं, और मैं वह बेअदबियाँ अपनी आँखों से न देख सकूँगा, जो आज तक शहनशाहे हिन्द के सामने नहीं हुई, और तैमूरी खानदान जिन्हें देखने का आदी नहीं है।"

"लेकिन जहाँपनाह ऐसा क्यों सोचते हैं। लार्ड महोदय का यह इरादा मुतलक़ नहीं है कि आप की तौहीन हो, वे तो उन सब वादों को दुहराने और हुज़ूर को इस बात का यक़ीन दिलाने के लिए यह दरबार कर रहे हैं कि कम्पनी सरकार के साथ हुज़ूर का जो इक़रार हुआ है, उसकी वे सब शर्तें–जिन पर हुज़ूर को शक है–जरूर पूरी की जाएँगी–बशर्तेकि आप की तरफ़ से कोई वादा-खिलाफ़ी की बात न पैदा हो जाय। जनरल महोदय यही घोषणा तो इस दरबार में सरे-आम करना चाहते हैं।"

"वे जो चाहें करें, मगर यह समझ लें कि मैं बेकस हूँ। यदि मुझे धोखा हुआ तो मैं कहीं का न रहूँगा। इसके अलावा मुसलमान यह बर्दाश्त भी न करेंगे।"

"यह तो हुज़ूर, धमकी की बात है। आप को इस बात का भी ख्याल रखना चाहिए कि कम्पनी सरकार ने आप को बारह लाख रुपया साल की पैन्शन दी है।"

"दी है या देने का वादा किया है, यह साफ़-साफ़ नहीं कहा जा सकता। फिर वह रक़म तो मेरी ही सल्तनत की आमदनी का छोटा-सा हिस्सा है।"

"जब हुज़ूरे-आला इस क़दर शाकी हैं, तो मुझे कहना ही पड़ेगा कि जहाँपनाह इस बात को भूल गए हैं—कि अंग्रेज़ों ने आप को और आप की सल्तनत को मराठों के पंजों से छुड़ाया है।"

"लेकिन अपने पंजों में गंस लिया है। मैं नहीं जानता कि पुराने क़ैद करने वाले मराठे ज़्यादा अच्छे थे—कि ये फ़िरंगी।"

"तो हुज़ूर, अब भी यदि मराठों को पसन्द फ़र्माते हैं—तो आप को बख़ैर उनके पास पहुँचाया जा सकता है।"

"और मेरी सल्तनत ?"

"वह तो हम ने तलवार के ज़ोर पर फ़तह की है। न आप से न मराठों से हमें भीख में मिली है। आप उन से मिलकर खुशी से तलवार उठाइए—और ज़ोर आज़माई कीजिए।"

"यह आप शहनशाहे हिन्द को चुनौती दे रहे हैं ?"

"नहीं हुज़ूर, जो बात सच है वही अर्ज़ कर रहा हूँ। मराठों के इस्तक़बाल के लिए हमारी एक लाख तलवार तैयार हैं। यदि हुज़ूर को अंग्रेज़ों पर भरोसा नहीं है, तो हम खुशी से आप का भी शाही इस्तक़बाल उसी तरह करते हैं जैसा मराठों का करना चाहते हैं।"

"लेकिन मैं ने तो मराठों को दिल्ली से निकाल बाहर करने में अंग्रेज़ों को मदद दी है।"

"तो अंग्रेज़ों ने भी हुज़ूर की जानोमाल की हिफ़ाज़त का ज़िम्मा लिया है, और एक माक़ूल रक़म की पैन्शन बैठे बिठाए देना मंज़ूर किया है।"

"ख़ैर, तो मैं यह चाहता हूँ कि मेरे साथ जो वादे किए गए हैं—वे पूरे हों।"

"इसी लिए लार्ड लेक यह दरबार कर रहे हैं, कि हर खास-आम के सामने वे वादे दुहराए दिए जायँ ।"

"लेकिन दरबारी अदब ।"

"हुज़ूर, हर मुल्क के अलग-अलग अदब-क़ायदे होते हैं। हम फ़िरंगी जिस तरह अपने मुल्क में अपने बादशाह से मुलाक़ात करते हैं, इतमीनान रखिए कि उसी तरह हुज़ूर से मुलाक़ात करेंगे ।"

"खैर, तो मैं यह सब आप पर छोड़ता हूँ, बस मुझे धोखा न हो ।"

"हुज़ूर इतमीनान करें। अंग्रेज़ अपने वादों की पाबन्दी करेंगे।

"लेकिन इतना कीजिए कि दरबार की कार्यवाही जल्द से जल्द खत्म हो जाय। क्योंकि मेरी सेहत ज़्यादा तकलीफ़ बर्दाश्त करने लायक़ नहीं है ।"

"ऐसा ही होगा हुज़ूर ।"

: २२ :

शाही दरबार

दीवाने-खास में शाही दरबार की तैयारी हो रही थी। तख्ते-शाही के सामने सात जड़ाऊ सुनहरी कुर्सियाँ बिछाई गई थीं, जिन पर लार्ड लेक और दूसरे अंग्रेज अफ़सर बैठने वाले थे। लार्ड लेक और कर्नल आक्टर-लोनी कुछ अफ़सरों के साथ फ़ौजी वर्दी में लैस दरबार हाल में हाज़िर थे, इतने ही में 'अदब—क़ायदा—निगह रूबरू' की पुकार हुई, और बादशाह सलामत की सवारी हवादान पर सवार हो कर-दीवाने-खास में आई। सभी दरबारी सिर झुकाए खड़े थे, सिर्फ़ अंग्रेज अफ़सर तने हुए अपनी-अपनी तलवारों की मूँठ पर हाथ रखे—चुस्त खड़े थे।

बादशाह ने तख्त पर बैठ कर धीमी आवाज़ में कहा—"हम शाही दरबार में, कम्पनी बहादुर के गवर्नर-जनरल के एलची लार्ड लेक का इस्तक़बाल करते हैं ।"

"मैं गवर्नर-जनरल महोदय की ओर से, और अपनी ओर से भी बादशाह सलामत को धन्यवाद देता हूँ और उनकी सलामती चाहता हूँ।

मसरूफ़ियत के कारण जनाब गवर्नर-जनरल बहादुर खुद तशरीफ़ नहीं ला सके, इसी से मुझे उन्होंने अपने सब इख्तियारात दे कर शाही खिदमत में भेजा है।"

"तो मतलब बयान हो।"

"सब से पहले मैं आनरेबुल कम्पनी-बहादुर की सरकार की ओर से आप को यक़ीन दिलाता हूँ कि कम्पनी बहादुर की सरकार ने जो-जो वादे किए हैं—वे सब पूरे किए जाएँगे। और इस बात का पूरा ध्यान रखा जाएगा कि बादशाह सलामत और उनके खानदान के किसी आदमी को कोई तकलीफ़ न हो। इसके अलावा लाल क़िले की चहारदीवारी के भीतर इन्तज़ाम में कोई फ़िरंगी दखल नहीं देगा।"

"ममनून हुआ, लेकिन मेरी बक़ाया पेन्शन ?"

"उसके मुतल्लिक़ मैं गवर्नर-जनरल को लिखूँगा। उम्मीद है कि वह आप को मिल जायगी। खातिर जमा रहे।"

"तसल्ली हुई। तो अब दरबार बर्खास्त, शुक्रिया।"

इतना कह कर बादशाह ने एक दस्तक दी, और तख्त से उठ खड़े हुए। हवादान आया और बादशाह महलों में चले गए। इस प्रकार चन्द मिनटों में ही यह दरबार खत्म हो गया। महल में पहुँचते ही बादशाह बेहोश हो गए। और शाही हकीम को बुलाने की दौड़-धूप होने लगी। लार्ड लेक ने यह दशा देखी तो वे तेज़ी से टमटम पर सवार होकर अपने बंगले पर पहुँचे और एक निहायत ज़रूरी खत तावड़तोड़ गवर्नर-जनरल को कलकत्ते रवाना कर दिया।

: २३ :

चौधरी की निराशा

चौधरी की दौड़-धूप कारगर नहीं हुई। दिल्ली में रहते अब उन्हें दो बरस बीत चुके थे। बादशाह सलामत से मिलने के भी उन्होंने बहुत जोड़-तोड़ मिलाए—पर बादशाह शाह-आलम बीमार थे। मुलाक़ात न हो सकी। इसी बीच बादशाह शाह-आलम का देहान्त हो गया। और

तख्त पर अहमदशाह रौनक़-अफ़रोज़ हुए। कुछ दिन लाल क़िले में जश्न होते रहे। यह सब उलट-फेर दिल्ली में हो ही रहे थे कि तुरन्त सुना गया कि भरतपुर अंग्रेज़ों ने सर कर लिया। यह भी सुना कि होल्कर सरकार भरतपुर के इस पतन से इस क़दर निराश हो गए कि वे पागल हो गए, और कुछ दिन बाद उन का इन्तक़ाल हो गया।

इस प्रकार देखते ही देखते मराठा-मण्डल का खात्मा हो गया। दिल्ली का तख्त उलट गया। अब तो भारत में अंग्रेज ही अंग्रेज़ थे। अब अंग्रेज़ों ही की कृपादृष्टि प्राप्त करना चौधरी ने आवश्यक समझा। वे अवसर पा कर वज़ीरे आज़म से मिले और होल्कर का खत उन्हें दिया। होल्कर ने उस में चौधरी की बहुत सिफ़ारिश की थी। वज़ीर चौधरी से बहुत मेहरबानी से पेश आया, और उस ने शाही तौर पर चौधरी के चालीस गाँवों का पक्का पट्टा नए सिरे से लिखा कर बादशाह सलामत की मुहर करा दी। इसके बाद उसने चौधरी को सलाह दी कि वह अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट विक्टर लोनी से किसी तरह मुलाक़ात करके अंग्रेज़ों की कम्पनी-बहादुर से भी अपनी रियासत का पक्का पट्टा करालें।

वज़ीर ने ही चौधरी को दिल्ली की मशहूर रंडी जुबैदा खातून से मुलाक़ात करा दी, जो आक्टर-लोनी की नाक का बाल बनी हुई थी। चौधरी ने बहुत-सा रुपया चटा कर खातून को अपनी सिफारिश के लिए राजी कर लिया। और उसकी सिफारिश से चौधरी का मतलब सध गया। उसकी तमाम ज़मींदारी का क़बूली पट्टा कम्पनी बहादुर की सरकार से मंज़ूर हो गया। और चौधरी ने लिख दिया कि वह बाक़ायदा कम्पनी बहादुर को खिराज-लगान देता रहेगा। तथा फौज नहीं रखेगा। इस प्रकार कृतकृत्य होकर तथा दो बरस दिल्ली में रह कर चौधरी मुक्तेसर लौटा।

चौधरी का घराना देखते ही देखते मुक्तेसर में अपनी जड़ पकड़ गया, और आस-पास के सब ज़मींदारों से पद-प्रतिष्ठा। और धन में अग्र-गण्य हो गया।

मुक्तेसर के आस-पास इस समय अनेक छोटी-छोटी मुस्लिम ज़मीं-दारियाँ थीं। इनमें कुछ तो रुहेले थे, जो अहमदशाह दुर्रानी के साथ आए थे, और अब यहीं बस गए थे। कुछ मुग़ल थे। उस अंधेरगर्दी में जिसने जो इलाक़ा हथिया लिया, वही उसका स्वामी बन बैठा था। बादशाह तो सिर्फ यही चाहता था कि उन्हें ठीक वक्त पर खिराज मिल जाय। शुरू में ये जमींदार बादशाह को खिराज ठीक-ठीक देते रहे। पर जब मराठों, और अंग्रेज़ों ने बादशाह की शक्ति को छिन्न-भिन्न कर दिया। तो अब इन जमींदारों ने भी खिराज देना बन्द कर दिया। बादशाह की शक्ति न थी कि इनसे खिराज वसूल करे। इसी से जब कम्पनी-बहादुर का अधिकार हुआ और बादशाह केवल पैन्शन पाने के अधिकारी रह गए तो अंग्रेज़ों ने बेरहमी से खिराज और लगान उगाहना आरम्भ किया। अब ये ज़मींदार अंग्रेज़ों को खिराज देते और ठसक से रहते थे।

मुक्तेसर के पास बड़े गाँव के मियाँ का दबदबा सब से बढ़-चढ़ कर था। ये बीस गावों के मालिक थे। उनका सौजन्य और उदार तथा धर्मवृत्ति से प्रभावित होकर चौधरी का आरम्भ ही में उनसे प्रेम हो गया। बड़े-गाँव के मियाँ ने ही चौधरी की आरंभ में बहुत मदद की थी चौधरी इस अहसान को भूले नहीं। दुर्भाग्य से इस वक्त बड़े-गाँव का इलाक़ा सम्पन्न नहीं रहा। बड़े मियाँ पर चौधरियों ही का बड़ा क़र्ज़ा लद गया था। पर चौधरी और बड़े मियाँ के बीच जो प्रेम और मैत्रीभाव था वह ज्यों का त्यों ही रहा। ये दोनों ही सरदार-जिनमें एक शरीफ मुसलमान और दूसरे धर्मनिष्ट हिन्दु थे। परस्पर पड़ोसी ज़मींदार थे। और उनका अपना रहन-सहन और आपसी व्यवहार कैसा था, इसकी यत्किंचित् झलक उपन्यास के प्रारम्भ में हम ने दिखाने की चेष्टा की है। यह काल यद्यपि राजनैतिक अंधेरगर्दी का था, परन्तु हिन्दु-मुसलमान आपस में प्रेम से रहते थे। उनके भाईचारे के सम्बन्ध अटूट थे। वे परस्पर सच्चे पड़ौसी और सच्चे मित्र थे, जिसका दिग्दर्शन आरम्भिक परिच्छेदों में है।

सोना और खून

तीसरा खण्ड

: १ :
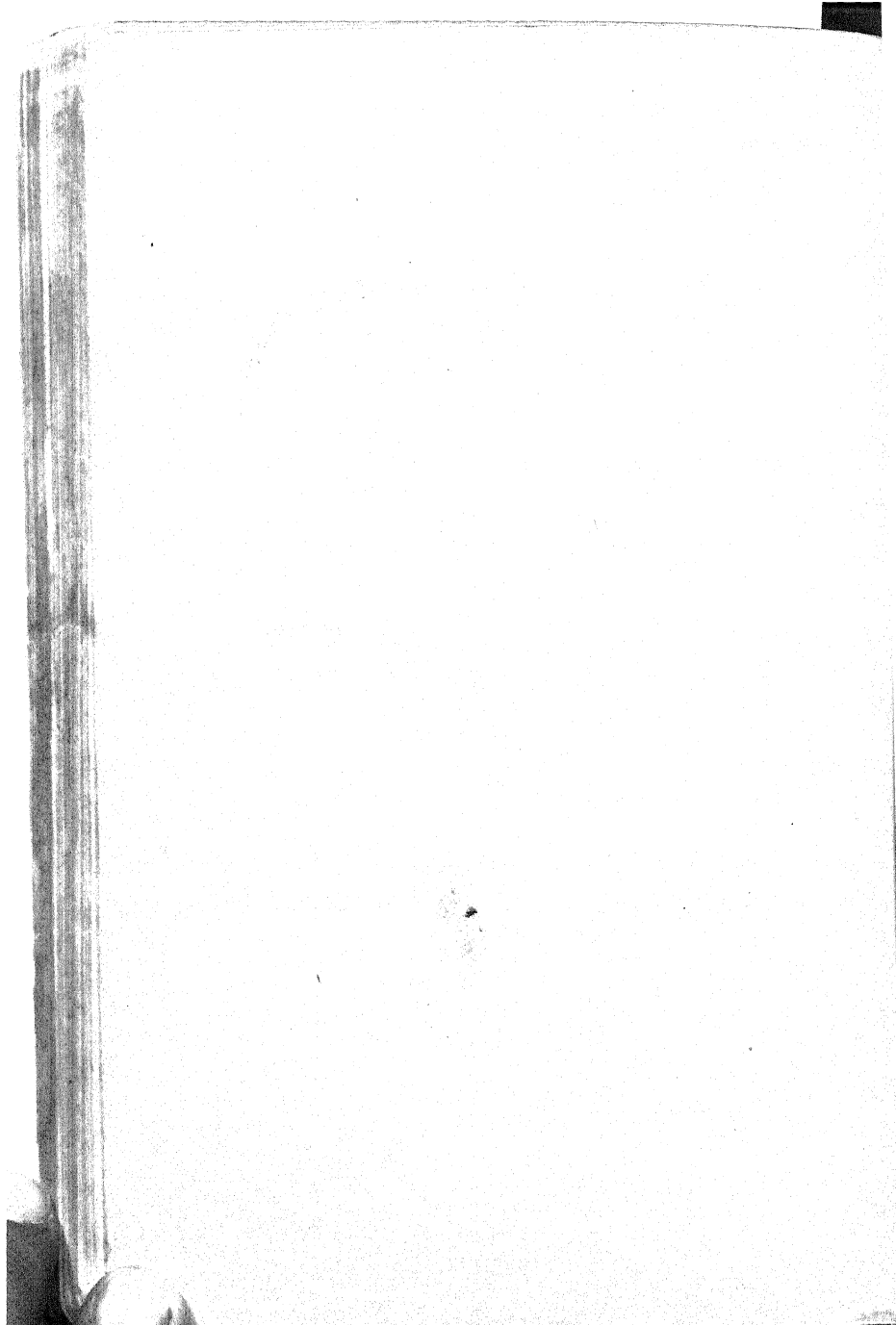
एलफिंस्टन की गिरफ्त

रणजीतसिंह का मुँह पच्छिम की ओर फेर कर, और सतलुज के इस पार के सब इलाकों पर अपना अधिकार कर अब अंग्रेज़ों ने बड़ा दाव लगाया। रणजीतसिंह को उकसा कर उसे अफ़ग़ानिस्तान पर हमला करने को अकेला छोड़ दिया। शीघ्र ही सिक्खों और पठानों में वैरभाव बढ़ने लगा। अब ब्रिटिश भारत और उसके भावी आक्रमणों के बीच पंजाब एक दीवार हो गया था। इधर अंग्रेज़ी राज्य के विस्तार के लिए सतलुज का मैदान साफ हो गया था।

इस समय मालकम और महदी अली खाँ अंग्रेज़ों के एजेन्ट ईरान में बैठे हुए वहाँ के बादशाह बाबा खाँ को अफ़ग़ानिस्तान के विरुद्ध भड़का रहे थे, और इधर सर मैटकाफ पंजाब में महाराजा रणजीतसिंह के दरबार में एजेन्ट की हैसियत से बैठे हुए रणजीतसिंह को अफ़ग़ानिस्तान पर हमला करने को उकसा रहे थे। अब नई चाल अंग्रेज़ों ने यह खेली कि लार्ड एलफिंस्टन को अंग्रेज़ सरकार का विशेष दूत बना कर अफ़ग़ा-निस्तान भेज दिया। जिसका उद्देश्य यह था कि वह अफ़ग़ानिस्तान में वहाँ के बादशाह शाहशुजा को ईरान के ख़िलाफ लड़ाई करने के लिए उकसाए, और उसे यह विश्वास दिलाए कि रूस और फ्रांस मिल कर हिन्दुस्तान पर हमला करने वाले हैं, और उस आपत्ति का मुकाबिला करने के लिए अंग्रेज़ों और अफ़ग़ानिस्तान की सरकारों में मित्रता रखनी ज़रूरी है। अंग्रेज़ नहीं चाहते थे कि अंग्रेज़ों की यह चाल रणजीतसिंह को मालूम हो जाय और वह चौकन्ना हो जाय। इसलिए एलफिस्टन चालाकी से रणजीतसिंह के इलाके से नीचे ही नीचे उससे बचते हुए हुए बीकानेर, बहावलपुर और मुलतान के रास्ते पेशावर में जा पहुँचा। परन्तु इस समय बेचारा शाहशुजा अनेक मुसीबतों में घिरा हुआ था। उस समय अफ़ग़ानिस्तान में आपस की लड़ाइयाँ और बग़ावतें जारी थीं।

इसलिए अफग़ानिस्तान के बादशाह और वहाँ के दरबार ने एलफिंस्टन को काबुल में घुसने की इजाजत नहीं दी, और न बादशाह ने उससे मुलाक़ात करना मंज़ूर किया। परन्तु एलफिंस्टन ने बहुत मीठी-मीठी बातें कीं, और उन्हें विश्वास दिलाया कि मेरा उद्देश्य आपकी मदद करने और अंग्रेज़ों के साथ दोस्ती के सम्बन्ध पैदा करना है। आखिर शाहशुजा ने एलफिंस्टन से पेशावर में आकर मुलाक़ात की। और पूछा—

"आपका यहाँ मेरे मुल्क में आने और मुझ से मुलाक़ात करने का मक़सद क्या है ?"

"मैं आनरेबुल कम्पनी की सरकार की ओर से आपको यह सूचित करने आया हूँ कि अफग़ानिस्तान को रूस, फ्रांस और ईरान, तीनों से खतरा है। इसलिए मेरी प्रार्थना है कि आप फ्रांसीसियों और ईरानियों को अपने राज्य में न घुसने दें। और यदि ये लोग भारत पर हमला करना चाहें, तो आप उन्हें रोकने में अंग्रेज़ों को मदद दें।"

"जब किसी के घर में आग लगी हो तो उसे दूर का डर देखने की फ़ुर्सत नहीं मिल सकती। इस वक्त अफग़ानिस्तान घरेलू बग़ावतों की मुसीबतों से घिरा हुआ है इसलिए यदि अंग्रेज़ हमारी दोस्ती का दम भरना चाहते हैं तो वे पहले अफग़ानिस्तान की बग़ावतों को शांत करने में मेरी मदद करें।"

यह एक सीधा सवाल था, जिसका जवाब एलफिंस्टन जैसे चतुर, चालाक अंग्रेज़ के दिमाग़ में भी हाज़िर न था। उसने कहा—"मुझे अफ़सोस है कि आनरेबुल कम्पनी की सरकार ने मुझे इस मसले पर बातचीत करने का अधिकार नहीं दिया है। और मैं ऐसी किसी मदद का आप से वादा नहीं कर सकता।"

इस पर अफग़ानिस्तान के वज़ीर मुल्ला जफ़र ने गुस्सा होकर कहा—"यह एक अजीब बात है कि अंग्रेज़ अपने दुश्मनों के खिलाफ़ तो शाहे-काबुल की मदद चाहते हैं लेकिन वे काबुल के बादशाह को उसके दुश्मनों के खिलाफ मदद देना नहीं चाहते। इसका साफ़ यह मतलब है

कि आप जिस सुलह का पैग़ाम लेकर आए हैं, उसका पूरा फायदा अंग्रेज़ों को है। और सारा खतरा शाहे अफ़ग़ानिस्तान को।"

एलफिंस्टन भी ताव में आ गए उन्होंने ज़रा तेज़ होकर कहा—"तो क्या आपके कहने का मतलब यह है कि मैं शाहे-अफ़ग़ानिस्तान को धोखा दे रहा हूँ।"

"जी नहीं, मैं यह नहीं कहता कि आप हमारे बादशाह को धोखा देना चाहते हैं, लेकिन मेरा ज़ाती ख्याल है कि आप इतने सीधे नहीं हैं जितना कि आप अपने को ज़ाहिर करते हैं। हक़ीकत तो यह है कि आपका तौरो-तरीका बड़ी चालबाजी का है, और आपके साथ कोई मामला तय करने से पेश्तर ख़ूब होशियारी से रहने की जरूरत है।"

एलफिंस्टन का मुँह लाल हो गया, और उसके मुँह से शब्द नहीं निकला। यह एक ऐसा क़रारा तमाचा उसके मुँह पर पड़ा था कि जिसका उसके पास जवाब न था। कारण, यह था कि इस समय शाहे

काबुल जिन मुसीबतों में फंसा हुआ था, वे सब अंग्रेजों ही की पैदा की हुई थीं। अफ़ग़ानिस्तान के अंदर इन्हीं सब उपद्रवों को खड़ा करने के के लिए महदी अली खाँ और सर मालकम को ईरान भेजा गया था, और ईरान की सरकार को एक नक़द रक़म भी दी गई थी।

शाहे महमूद ने इस समय शाहशुजा के खिलाफ़ बग़ावत खड़ी कर रखी थी, और शाहशुजा तथा शाहे महमूद दोनों को ज़मान शाह के विरुद्ध भड़का कर अंग्रेज़ों ने ईरान से अफ़ग़ानिस्तान भिजवा दिया था। इसके अतिरिक्त हाल ही में अंग्रेज़ों ने रणजीतसिंह को भी अफ़ग़ानिस्तान के विरुद्ध भड़का दिया था। ऐसी हालत में एलफ़िस्टन के पास शाहे-काबुल के प्रश्न का कोई जवाब ही नहीं था।

जब शाह ने एलफ़िस्टन को चुप देखा, तो आहिस्ते से कहा—"खुदा के लिए अब आप अपने इलाक़े को लौट जाइए। खुदा हाफ़िज़।"

लेकिन एलफ़िस्टन जैसा पुरुष निराश हो कर नहीं लौट सकता था। खास कर इसलिए भी कि रूस के हमले का डर पूरा-पूरा बना हुआ था। उसने गुस्सा पी कर ठण्डे दिमाग से विचार किया और कहा—"शाहे-अफ़ग़ानिस्तान के घरेलू मामलों में अंग्रेज़ सरकार को पड़ना मुनासिब नहीं है, इसलिए मैं मजबूर हूँ, लेकिन यदि अफ़ग़ान सरकार अंग्रेज़ों से दोस्ती की सन्धि करे तो अंग्रेज़ सरकार अफ़ग़ान सरकार को फ़िलहाल एक माक़ूल रक़म नक़द देने को राज़ी है, और आइन्दा भी जब तक कि अफ़ग़ानिस्तान के शाह अंग्रेज़ों से दोस्ती का बर्ताव रखेंगे, उन्हें यह रक़म बराबर हर साल मिलती रहेगी।

शाह ने इसे स्वीकार किया और अफ़ग़ानिस्तान और अंग्रेज़ों की सन्धि हो गई। और अफ़ग़ानिस्तान की सैनिक शक्ति और अफ़ग़ानिस्तान और भारत के मार्गों और मार्ग की क़ौमों की पूरी जानकारी प्राप्त कर के एलफिंस्टन पंजाब की राह हिन्दुस्तान लौटा।

: २ :

१८१३ का चार्टर

ईस्ट इण्डिया कम्पनी इंगलैंड की पार्लमेंट में क़ानून द्वारा क़ायम हुई थी। कम्पनी के अधिकारों को क़ायम रखने के लिए पार्लमेंट हर बीस बरस बाद नया क़ानून पास करती थी, जिसे चार्टर-एक्ट कहते थे। सन् १८१३ में जो चार्टर-एक्ट बनाया गया। उस में इंगलैंड का बना माल भारत के सिर मढ़ने और भारत के प्राचीन उद्योग धन्धों का नाश करने का विधिवत् प्रयत्न किया गया। यही एक्ट भारत की भारी भयंकर दरिद्रता और असहायता का मूल कारण बना। इस समय तक सूरत से विलायत को जो कपड़ा भेजा जाता था, वह अत्यन्त कड़े और निष्ठुर अत्याचारों द्वारा वसूल किया जाता था। जुलाहों को उनकी इच्छा और हित दोनों के विरुद्ध कम्पनी से काम का ठेका लेने और उस ठेके के अनुसार काम करने को मजबूर किया जाता था। बहुधा जुलाहे—इस प्रकार काम करने की अपेक्षा भारी जुर्माने अदा कर देना पसन्द करते थे। उन दिनों अंग्रेज़ बढ़िया माल के लिए जुलाहों को जो दाम देते थे, उस से कहीं अधिक दाम डच, फ्रेंच, पुर्तगीज़ और अरब के सौदागर घटिया माल के लिए देते थे।

कम्पनी के व्यापारी रेज़ीडेण्ट ने यह बन्दोबस्त किया था कि कम से कम निश्चित दामों पर थान ख़रीद कर समस्त कपड़े के व्यापार पर एकाधिकार अंग्रेज़ कम्पनी का स्थापित हो जाय। इस ज़बर्दस्ती से तंग आकर—जुलाहों ने अपना पेशा छोड़ दिया। अंग्रेजों ने इस बात के लिए, कि कोई जुलाहा दूसरा पेशा न करने पाए, यह क़ानून बना दिया कि कोई जुलाहा फ़ौज में भरती न होने पाए। तथा कोई जुलाहा बिना अंग्रेज़ अफ़सर की आज्ञा के शहर के दरवाज़ों से बाहर न निकलने पाए। आसपास के देशी राज्यों को भी दबाया जाता था कि उनके इलाक़े का कोई कपड़े का थान केवल कम्पनी के सौदागरों और दलालों के अतिरिक्त दूसरों के

हाथों न बेचा जाय। यहाँ तक कि इन मामलों में अंग्रेज़ी अदालतों का भी उपयोग होता था। बंगाल के जुलाहे तो क़ानून द्वारा आजीवन गुलाम बना दिए गए थे। वे हवालात में बन्द कर दिए जाते थे और उन का माल ज़ब्त करा दिया जाता था।

सन् १८१३ के नए चार्टर के जारी होने से प्रथम भारत और इंगलैंड के बीच व्यापार करने का अधिकार ईस्ट इण्डिया कम्पनी ही को प्राप्त था। परन्तु अब इस नए चार्टर की बदौलत कम्पनी से यह अनन्याधिकार छीन लिया गया, और भारत के साथ व्यापार करने का दरवाज़ा प्रत्येक अंग्रेज़ व्यापारी के लिए खोल दिया गया। इसका अर्थ यह था कि अब भारतीय प्रजा पर अत्याचार करने और उन्हें हर प्रकार से लूटने का अधिकार प्रत्येक अंग्रेज़ को मिल गया था। इसके अतिरिक्त यह भी तय हुआ था कि भारत के उद्योग-धन्धों को नष्ट करके इंगलैंड के उद्योग-धन्धों को बढ़ाया जाय, और इंगलैंड का बना माल जबर्दस्ती हिन्दुस्तान में बेचा जाय। अंग्रेज़ों को भारत में रहने और काम करने की अनेक सुविधाएँ दी गई थीं। भारत के ख़र्चे से अब तक आसाम और कुमायूँ क्षेत्र में चाय की खेती के प्रयोग हो रहे थे—अब उनके सफल होने पर वे सब बग़ीचे अंग्रेज़ सौदागरों को सौंप दिए गए। भारत के ख़र्चे पर अनेक अंग्रेज़ों को चाय का बीज लाने चीन भेजा गया। वे चीनी काश्तकारों को भारत में लाए, जिन्होंने भारत में चाय के बाग़ लगाए। और अंग्रेज़ों ने चाय बोने की रीतियाँ उनसे सीखीं। चाय के इन बाग़ों में काम करने के लिए ये गोरे मालिक कुलियों को गुलामी प्रथा पर ही रखते थे। उनके अत्याचारों की कहानियाँ बनती जा रही थीं। इसी प्रकार लोहा और नील के कामों के ठेके भी इन अंग्रेज़ों को दिए जाते थे। और उन्हें भारत से धन और क़ानून की सहायता दी जाती थी।

भारतीय कारीगरों के रहस्यों का पता लगाने की—अनेक रीतियाँ और ज़ोर-जुल्म काम में लाए जाते थे। भारतीयों को विलायती शराब पीने का भी चस्का इसी समय से लगा। छोटे-बड़े शहरों में विलायती

शराब की दूकानें खुल गई थीं। साथ ही भारतीयों में यूरोप के ऐश-आराम तथा दिखावटी सामान ख़रीदने की आदत बढ़ती जाती थी।

इस प्रकार भारतीय उद्योग-धन्धे—चरित्र और जीवन-क्रम का तेज़ी से ह्रास होने लगा था।

प्लासी के युद्ध से वाटरलू के युद्ध तक अर्थात् १७५७ से १८१५ तक लगभग एक हज़ार मिलियन पाउण्ड अर्थात् पन्द्रह अरब रुपया शुद्ध लूट का भारत से इंगलैंड पहुँचा था। जिसके बल पर लंकाशायर और मानचेस्टर के भाप के इंजनों से चलने वाले नए कारखाने धड़ाधड़ उन्नत हो रहे थे। इस का अर्थ यह—कि ५८ वर्ष तक २५ करोड़ रुपया सालाना कम्पनी के नौकर भारतवसियों से लूट कर अपने देश ले जाते रहे। संसार के किसी भी सभ्य देश के इतिहास में भयंकर लूट की इससे बढ़-चढ़ कर मिसाल नहीं मिलती। इस लूट के मुक़ाबले तो महमूद ग़ज़नवी—और मुहम्मद ग़ौरी के हमले और लूट महज़ खेल थे। यह भी जानना चाहिए कि उस समय के और आज के समय में १/५० का अन्तर है।

इस भयंकर लूट ने ही इंगलैंड की नई ईजादों को फलने और वहाँ के कारख़ानों को जन्म देने का अवसर दिया।

इस से दिन-दिन इंगलैंड की आय बढ़ती चली गई और उसी औसत से भारत की दरिद्रता बढ़ने लगी। जिस का परिणाम आगे चल कर यह हुआ कि १९वीं शताब्दि के अन्तिम चरण में—भारत के सब उद्योग-धन्धे—कहानी मात्र रह गए—और जो देश सौ बरस पहले—संसार का सब से अधिक धनी देश था—वह सौ बरस के अंग्रेज़ी राज्य के परिणाम-स्वरूप संसार का सबसे निर्धन देश हो गया। इसी समय गूढ़ पुरुष लार्ड हेस्टिंग्स गवर्नर-जनरल हो कर भारत आया।

सन् १८१२ में नैपोलियन तबाह होकर रूस से लौटा। उसके छह लाख योद्धाओं में से साठ हज़ार ही जीवित बचे थे—जो अर्धमृत अवस्था में थे। इससे नैपोलियन के सब हौसले पस्त हो गए, और भारत पर आक्रमण करने तथा रूस से सहायता लेने के सब सुपने टूट गए। ठीक

इसी समय इंगलैंड-प्रशिया और रूस उसके विरुद्ध उठ खड़े हुए—और इन संयुक्त शक्तियों से परास्त करक नैपोलियन को सिंहासन त्याग कर एल्बा में जो इटली के पश्चिमी तट पर है, नजरबन्द कर दिया। परंतु वह महत्त्वाकाँक्षी वहाँ से अवसर पाकर भाग निकला। इसी समय उसके शत्रु यूरोप के बटवारे में परस्पर खटक रहे थे—यह अभिसन्धि देख वह फिर फ्राँस का बादशाह बन बैठा। परंतु वह इस बार केवल सौ दिन तक ही बादशाहत कर सका। उसके विरुद्ध सारा यूरोप आपस के झगड़े भुला कर सुगठित हो गया। अंत में वाटरलू के संग्राम में उसे पराजित हो कर अंग्रेज़ों का बंदी होना पड़ा—उन्होंने उसे सैंटहेलेना के टापू में कैद कर लिया, जहाँ वह छह वर्ष कैद रह कर मर गया।

सन् १८१२ में जब नैपोलियन पर तबाही आई, ठीक उसके एक वर्ष बाद सन् १८१३ में हेस्टिंग्स गवर्नर-जनरल होकर भारत में आया, और इसी साल कम्पनी का नाम चार्टर भी बदला। यह चार्टर बहुत वाद-विवाद और छान-बीन के बाद तैयार किया गया था। और इस पर स्पष्ट ही इंगलैंड की बढ़ती हुई महत्वाकांक्षाओं का प्रभाव था। सन् १८०७ में नैपोलियन लगभग सारे यूरोप का अधिपति बन गया था। और १७९३ में तो वह भारत विजय के इरादे से मिश्र तक पहुँच चुका था। पर इंगलैंड उसके आगे चट्टान की भाँति अड़ गया, जिससे टकरा कर वह चकनाचूर हो गया। वे यूरोप में नेपोलियन के पतन के बाद उसकी लगभग सम्पूर्ण महत्वाकाँक्षाओं को अपने मन में समेट कर हेस्टिंग्स भारत में आया था और उसने भारत में आते ही चौमुखा आक्रमण आरंभ कर दिया था। सन् १३ का चार्टर इंगलैंड की बढ़ती हुई जन-क्रान्ति का प्रतीक था। इस समय इंगलैंड पर तीसरे जार्ज का शासन था, जो अन्धा बहरा और पागल था। इसके बाद हेस्टिंग्स ही के काल में वह बादशाह मर गया और और जार्ज चतुर्थ बादशाह बना। जो बड़ा शराबी, ऐयाश, जुआरी और नालायक आदमी था। इस समय इंगलैंड का मंत्री-मण्डल उकस रहा था। और इंगलैंड भर में नई हवा बहने लगी

थी। फ्राँस के साथ बाईस वर्ष लोहा लेकर इंगलैंड विजयी हुआ था—इसलिए वह गर्व से इतरा रहा था।

: ३ :

गूढ़पुरुष

मार्क्विस आफ हेस्टिंग्स बड़े ही गूढ़ पुरुष थे। इस समय वे ईस्ट इण्डिया कम्पनी के गवर्नर-जनरल थे, पर इस समय कम्पनी की आर्थिक अवस्था बड़ी डावाँडोल थी। बाजार में कम्पनी की हुण्डी बारह फी सदी बट्टे पर चल रही थी। मार्क्विस का ध्यान तुरन्त अवध के नवाब वज़ीर की ओर गया। यह वह समय था जब अंग्रेज दिल्ली सम्राट् के रहे-सहे प्रभाव का एकदम अंत कर देने के लिए उत्सुक थे। अब तक अवध का नवाब दिल्ली का एक सूबेदार और मुग़ल दरबार का एक वजीर था। हेस्टिंग्स ने लखनऊ में एक दरबार किया और नवाब वज़ीर गाजीउद्दीन हैदर को बाज़ाप्ता बादशाह का ख़िताब दे दिया। इसका अभिप्राय यह था कि अवध का नवाब अब से दिल्ली के बादशाह के अधीन नहीं रहा। परन्तु इसका यह अर्थ न था कि वास्तव में नवाब की स्वाधीनता बढ़ गई हो। गाजीउद्दीन को बादशाह बनाते हुए यह शर्त साफ-साफ कर ली गई थी कि बादशाह होने से कम्पनी के साथ उसके सम्बन्धों में कोई अंतर नहीं पड़ेगा। इस सिलसिले में कम्पनी को लगभग अपना आधा राज्य नवाब वज़ीर ने दे दिया था। जिस समय गाज़ीउद्दीन सिंहासन पर बैठा था उस समय मृत नवाब का संचित चौदह करोड़ रुपया राजकोष में नक़द था। जिस पर अंग्रेजों की दृष्टि पड़ी थी। अब वह बड़ी तेजी से ख़ाली हो रहा था।

गाज़ीउद्दीन किताबी मुल्ला के नाम से प्रसिद्ध थे। ये दिन-रात कुरान के पन्ने उल्टा करते थे। व्यवहार में वे भद्र और शिष्ट थे। फिर अंग्रेजों ने तो उन्हें बादशाह बनाया था, इसलिए उनके प्रति कृतज्ञ होना

और विनम्र रहना उनके लिए और भी लाज़िमी था। इसी से जब बादशाह को सनद देकर गवर्नर-जनरल बहादुर लखनऊ से विदा होने लगे तब गाजीउद्दीन हैदर ने उनसे हाथ मिलाते हुए कहा—"मेरा जानो-माल आपके लिए हाजिर है; ख़ुदा हाफिज।"

निस्संदेह यह कोरा शिष्टाचार का वाक्य था परन्तु चतुर गवर्नर-जनरल ने नए बादशाह का वह बहुमूल्य वाक्य अपनी स्मृति पुस्तक में तुरन्त नोट कर लिया और उस पर पोलीटिकल डिपार्टमेन्ट के सेक्रेटरी स्विन्टन साहब और कौन्सिल के मेम्बर आदम साहब की साक्षी करा ली।

मेजर बेली उन दिनों लखनऊ के रेजिडेन्ट थे। इनकी बेअदबी और बुरे व्यवहार से गाजीउद्दीन जिन्दगी से बेजार हो गए। परन्तु मेजर बेली ऊपर से संकेत पाकर ही उनसे ऐसा व्यवहार करता था। गवर्नर-जनरल ने बादशाह के ऊपर मेजर बेली के प्रभुत्व को रिवट लगा कर और भी अधिक पक्का कर दिया था। मेजर बेली छोटी-छोटी बातों में बादशाह पर हुक्म चढ़ाता था। वह चाहे जब बिना पूर्व सूचना के नवाब के महल में जा धमकता। उसने अपने गुर्गे बड़ी-बड़ी तनख्वाहों पर जबर्दस्ती महल में लगवा दिए थे। जो महल के राई-रत्ती हालचाल उस तक पहुँचाते रहते थे। वह अभागे बादशाह के साथ बड़ी शान से बात करता, और उसके साथ ऐसा व्यवहार करता कि वह अपने कुटम्बियों और नौकरों तक की नजर में गिर जाय।

दिल्ली के केन्द्र को भंग करने और भारत के शिक्षा और वाणिज्य को गारत करने के बाद अब अंग्रेजों के नए मन्सूबे यह थे कि भारत को एक ब्रिटिश उपनिवेश बना दिया जाय, और अधिक से अधिक अंग्रेजों को भारत में बसा दिया जाय। इसी से उनके लिए मुक्त वाणिज्य का द्वार खोल दिया गया था। वे अपने साम्राज्य के सुपने साकार कर रहे थे—उनकी मुख्य अभिलाषा यह थी कि जैसे आस्ट्रेलिया, अफ्रीका और अमेरिका में अंग्रेज़ी बस्तियाँ कायम हो चुकी हैं, वैसी ही भारत में हो जाय। परन्तु भारत का गर्म जलवायु इस कार्य के उपयुक्त न था कि अधिक अंग्रेज

भारत में बसाए जायें। फिर भी हिमालय की रमणीय घाटियाँ, देहरादून, कुमायूँ, गढ़वाल आदि के इलाके ठण्डे थे। अंग्रेज चाहते थे कि भारत के गरम मैदानों की अपेक्षा हिमालय की घाटियों ही में ये अंग्रेज़ी उपनिवेश स्थापित किए जायँ, जहाँ अंग्रेज़ों की अपनी नैतिक और शारीरिक शक्तियाँ ज्यों की त्यों कायम रह सकें। परन्तु उस समय वे सब नेपाल साम्राज्य के अधीन थे, जो स्वाधीन राज्य था। इसलिए अब भारत पर पूरा पंजा जमा कर उन्होंने नेपाल की ओर रुख किया। अंग्रेज कुछ दिन पूर्व ही लाहौर के महाराज रणजीतसिंह को नेपाल से लड़ा चुके थे। अब युद्ध को उकसाने के लिए, कुछ सरहद्दी झगड़े खड़े कर लिए और बिना मामला निपटारा किए विवादग्रस्त जमीन पर कब्जा कर लिया। इस प्रकार युद्ध की पृष्ठभूमि तैयार हो गई। परन्तु अब सब से बड़ी समस्या रुपये की थी। गवर्नर-जनरल को अब अपने नए बादशाह की याद आई, उसने कहा था कि मेरा जानोमाल आपके लिए हाजिर है।

उसने अपने सेक्रेटरी रिकेट को लखनऊ भेजा और कहा—कि नवाब बादशाह ने दो करोड़ रुपया देने का वादा किया था, वह रुपया वसूल कर लाए।

सेक्रेटरी रिकेट साहब रेजीडेन्सी पहुँचे और गवर्नर-जनरल का संदेश उन्हें सुनाया। सुन कर मेजर वेली ने कहा—

"मुझे तो याद नहीं, कब गाजीउद्दीन हैदर ने मेरे सामने गवर्नर जनरल को दो करोड़ रुपया देने का वादा किया था।"

"लेकिन गवर्नर महोदय की स्मृति-पुस्तक में साफ़ लिखा हुआ है कि मेरा जानोमाल आपके लिए हाजिर है। इसका मतलब हुआ, तमाम फौज और पूरा खजाना।"

"लेकिन वह तो महज शिष्टाचार की बात थी। वे मुसलमान हैं, अपने शिष्टाचार के तौर पर ही उन्होंने वह बात कही थी।"

"तो कोई परवाह नहीं, गवर्नर-जनरल बहादुर यह रुपया दान में नहीं

माँगते। बतौर क़र्ज नवाब दे सकते हैं, उनका खजाना अभी तक भर-पूर है।"

"और यह क़र्जा हमारी कम्पनी की सरकार शायद सौ या हजार बरस बाद चुकाएगी ?"

"यह तो तब देखा जायगा, जब चुकाने का वक्त आयगा, अभी तो क़र्ज लेने भर की बात है।"

"लेकिन मुझे गवर्नर-जनरल का आदेश मिला था। बहुत ज़ोर-ज़ुल्म करने पर नवाब एक करोड़ रुपया देने को राजी हुए हैं। यह बात मैंने गवर्नर-जनरल को लिख भी दी थी।"

"इसी लिए तो उन्होंने मुझे भेजा है। आप ने बड़ी ही योग्यता से एक करोड़ रुपये की स्वीकृति ली है। इस के लिए गवर्नर-जनरल महोदय आप के उपकृत हैं। परन्तु और एक करोड़ रुपया लिए बिना काम नहीं चलेगा। दो करोड़ रुपया तो होना ही चाहिए।"

"मैं नहीं समझता कि नवाब इतना दे सकेगा भी। फिर भी शायद और पचास लाख का प्रबन्ध कर सके।"

"पचास लाख नहीं। 'पूरे दो करोड़ रुपये चाहिएँ—मेजर, यह गवर्नर-जनरल साहब बहादुर का हुक्म है। इस की तामील होनी ही चाहिए।"

और मेजर वेली को कस कर बादशाह की गर्दन दबोचनी पड़ी। जिस तरह भी सम्भव हुआ बादशाह वजीर को दो करोड़ रुपया अंग्रेजों को देना पड़ा। इसके लिए बादशाह को बहुत सताया गया। बड़ी यातनाएँ दी गईं। यह रुपया नेपाल को ज़ेर करने में खर्च किया गया—नवाब का खजाना राई-रत्ती खाली हो गया। और नवाब का दिल भी टूट गया। इसी अवस्था में भग्न-हृदय बादशाह ने दम तोड़ा।

: ४ :

कलंगा दुर्ग

इस समय नेपाल का राज्य कम्पनी के राज्य से बहुत छोटा था। दोनों राज्यों के बीच पंजाब में सतलुज से लेकर बिहार में कोसी नदी तक लगभग ६०० मील लम्बी सरहद थी। अंग्रेज़ों ने इस सरहद पर पाँच मोर्चे बांधे। और पांचों स्थानों से आक्रमण करने का प्रबन्ध कर लिया। एक मोर्चा लुधियाने में कर्नल आक्टरलोनी के अधीन था। दूसरा मेजर जनरल जिलेप्सी के अधीन मेरठ में था। तीसरा मेजर जनरल वुड के अधीन बनारस और गोरखपुर में था। चौथा मुर्शिदाबाद और पाँचवाँ कोसी नदी के उस पार पूर्णिया की सरहद और सिकिम राज्य के सिर पर था। इन सब मोर्चों पर अंग्रेज़ सरकार की तीस हजार सेना, मय उत्तम तोपखाने के जमा की गई थी, जिसका सामना करने के लिए नेपाल दर्बार मुश्किल से बारह हजार सेना जुटा सका था। उसके पास न काफी धन था, न उत्तम हथियार। और कूटनीति में तो वे अंग्रेजों के मुकाबिले बिल्कुल ही कोरे थे।

मेजर जनरल जिलेप्सी ने सब से पहले नेपाल सीमा का उल्लंघन कर देहरादून क्षेत्र में प्रवेश किया। नाहन और देहरादून, दोनों उस समय नेपाल राज्य के अधीन थे। नाहन का राजा अमरसिंह थापा था, जो नेपाल दर्बार का प्रसिद्ध सेनापति था। अमरसिंह ने अपने भतीजे बलभद्र-सिंह को केवल छह सौ गोरखा देकर जिलेप्सी के अवरोध को भेजा। बलभद्रसिंह ने बड़ी फुर्ती से देहरादून से साढ़े तीन मील दूर नालापानी की सब से ऊँची पहाड़ी पर एक छोटा-सा अस्थायी किला खड़ा किया। यह किला बड़े-बड़े अनगढ़ कुदरती पत्थरों और जंगली लकड़ियों की सहायता से रातोंरात खड़ा किया गया था। हकीकत में किला क्या था, एक अधूरी अनगढ़ चहार दिवारी थी। परन्तु बलभद्र ने उसे किले का रूप दिया, और उस पर मजबूत फाटक चढ़वाया। उस पर नेपाली झण्डा फहरा कर उसका नाम कलंगा दुर्ग रख दिया।

अभी बलभद्र के वीर गोरखा इन अनगढ़ पत्थरों के ढोकों को एक-पर-एक रख ही रहे थे कि जिलेप्सी देहरादून पर आ धमका। उसने इस अद्भुत किले की बात सुनी और हँस कर कर्नल मावी की अधीनता में अपनी सेना को किले पर आक्रमण करने की आज्ञा दे दी। जिलेप्सी की सेना में एक हजार गोरा पल्टन और अढ़ाई हजार देशी पल्टन सेना थी। परन्तु बलभद्र के इस किले में इस समय केवल तीन सौ जवान और इतनी ही स्त्रियाँ और बच्चे थे। उसने उन सभी को मोर्चे पर तैनात कर दिया।

मावी ने देहरादून पहुँच कर उस अधकचरे दुर्ग को घेर लिया और अपना तोपखाना उसके सामने जमा दिया। फिर उसने रात को बलभद्र के पास दूत के द्वारा संदेश भेजा कि किले को अंग्रेजों के हवाले कर दो। बलभद्रसिंह ने दूत के सामने ही पत्र को फाड़ कर फेंक दिया और उसी दूत की जबानी कहला भेजा कि अंग्रेज़ों के स्वागत के लिए यहाँ नेपाली गोरखों की खुखरियाँ तैयार हैं।

संदेश पा कर मावी ने रातोंरात अपनी सेना नालापानी की तलहटी में फैला दी और किले के चारों ओर से तोपों की मार आरम्भ कर दी। इसके जवाब में किले के भीतर से गोलियों की बौछारें आने लगीं। तोपों के गोलों का जवाब बंदूक की गोलियों से देना कोई वास्तविक लड़ाई न थी। और अंग्रेज उन पर हँस रहे थे। परन्तु शीघ्र ही उन्हें पता लग गया कि नेपालियों के जौहर साधारण नहीं हैं। रात-दिन सात दिन तक गोलाबारी चलती रही परन्तु कलंगा दुर्ग अजेय खड़ा रहा।

जनरल जिलेप्सी इस समय सहारनपुर में पड़ाव डाले उत्कण्ठा से देहरादून की घाटियों की ओर ताक रहा था। जब उसे अंग्रेजी सेना के प्रयत्नों की विफलता के समाचार मिले, वह गुस्से से लाल हो गया और अपनी सुरक्षित सैना को ले नालापानी जा धमका। सारी स्थिति को देखने, समझने और आवश्यक व्यवस्था करने में उसे तीन दिन लग गए। उसने सेना के चार भाग किये। एक ओर की पल्टन कर्नल कार-

पेण्टर की अधीनता में आगे बढ़ी। दूसरी कप्तान फास्ट की कमान में, तीसरी मेजर कैली की और चौथी कप्तान कैम्पवैल की कमान में। इस प्रकार अंग्रेज़ों ने एक बारगी ही चारों ओर से दुर्ग पर आक्रमण कर दिया। कलंगा दुर्ग पर धड़ाधड़ गोले बरस रहे थे और दुर्ग के भीतर से बंदूकें तोपों का दनादन जवाब दे रही थीं। अंग्रेज़ी सेना का जो योद्धा दुर्ग की दीवार या द्वार के निकट पहुँचने की हिमाकत करता था, वहीं ढेर हो जाता था, वापस लौटता न था। इस समय नेपाली स्त्रियाँ भी अपने बच्चों को पीठ पर बाँध कर बंदूकें दाग रही थीं। अनेक बार अंग्रेज़ी सेना ने दुर्ग की दीवार तक पहुँचने का प्रयत्न किया, पर हर ब.र उन्हें निराश होना पड़ा। अनगिनत अंग्रेज सिपाहियों और अफसरों को गोरखा गोलियों का शिकार होकर वहीं ढेर होना पड़ा।

बार-बार की हार और विफलता से चिढ़ कर जनरल जिलेप्सी स्वयं तीन कम्पनियाँ गोरे सिपाहियों को साथ लेकर दुर्ग के फाटक की ओर बढ़ा। परन्तु दुर्ग के उपर से जो गोलियाँ और पत्थरों की बौछारें पड़ीं तो गोरी पल्टन भाग खड़ी हुई। गुस्से और खीझ में भरा हुआ जिलेप्सी अपनी नंगी तलवार हवा में घुमाता हुआ दुर्ग के फाटक तक बढ़ता चला गया। जब वह फाटक से केवल तीस गज के अन्तर पर था कि एक गोली उसकी छाती को पार कर गई और वह वहीं ढेर हो गया।

गोरखों के पास केवल एक ही छोटी सी तोप थी। वह उन्होंने फाटक पर चढ़ा रखी थी। उसकी आग के मारे शत्रु आगे बढ़ने का साहस न कर सकते थे। इसके अतिरिक्त तीखे तीर भी गोरखे बरसा रहे थे।

जनरल जिलेप्सी की मृत्यु से अंग्रेज़ी सेना में भय की लहर दौड़ गई। तुरन्त मावी ने अंग्रेज़ी सेना का नेतृत्व हाथ में लेकर सेना को पीछे लौटने का आदेश दिया। अंग्रेज़ी सेना बेंत से पिटे हुए कुत्ते की भाँति कैम्पों में लौट आई। मावी अब किले पर आक्रमण का साहस न कर सकता था। वह घेरा डाल कर पड़ा रहा। किले वालों को सांस लेने का अवसर मिला।

मावी ने दिल्ली सेन्टर को मदद भेजने को लिखा। और वहाँ से भारी

तोपखाना ग्रौर गोरी पल्टन देहरादून ग्रा पहुँची। इसके बाद नए साज-बाज से किले का मुहासरा किया गया। ग्रब रात दिन किले पर गोले बरस रहे थे। गोलों के साथ दीवारों में लगे ग्रनगढ़ पत्थर भी टूट-टूट कर करारी मार करते थे। एक-एक कर के किले के ग्रादमी कम होते जाते थे। गोली बारूद की भी कमी होती जाती थी। परन्तु बलभद्रसिंह की मूछें नीचे झुकती नहीं थीं। उसका उत्साह ग्रौर तेज वैसा ही बना हुग्रा था। इसी प्रकार दिन ग्रौर सप्ताह बीतते चले गए।

ग्रकस्मात ही किले में पानी का ग्रकाल पड़ गया। पानी वहाँ नीचे की पहाड़ियों के कुछ झरनों से जाता था। ग्रौर ग्रब यह झरने ग्रंग्रेज़ी सेना के कब्जे में थे। उन्होंने नाले बंद करके किले में पानी जाना बंद कर दिया था। धीरे-धीरे प्यासी स्त्रियों ग्रौर बच्चों की चीत्कारें करुणा का श्रोत बहाने लगीं। दीवारें ग्रब बिल्कुल भंग हो चुकी थीं। उनकी मरम्मत करना सम्भव न था। तोप के गोले निरन्तर ग्रपना काम कर रहे थे। उन तोपों की भीषण गर्जना के साथ जख्मियों की चीखें, पानी की एक बूंद के लिए स्त्रियों ग्रौर बच्चों का कातर क्रंदन दिल को हिला रहा था। ये सारी तड़पनें, चीत्कारें ग्रौर गर्जन-तर्जन सब कुछ मिल कर उस छोटे से ग्रनोखे दुर्ग में एक रौद्र रस का समा उपस्थित कर रहा था। ग्रौर उसकी छलनी हुई भग्न दीवारों के चारों ग्रोर ग्रंग्रेज़ी तोपें ग्राग ग्रौर मृत्यु का लेन-देन कर रही थीं।

एकाएक ही दुर्ग की बन्दूकें स्तब्ध हो गईं। कमानें भी बन्द हो गईं। ग्रंग्रेज़ों ने ग्राश्चर्य चकित होकर देखा—इसी समय दुर्ग का फाटक खुला। ग्रंग्रेज सेनापति सोच रहा था कि बलभद्रसिंह ग्रात्मसमर्पण करना चाहता है। उसने तत्काल तोपों को बन्द करने का ग्रादेश दे दिया। सारी ग्रंग्रेज़ सेना स्तब्ध खड़ी उस भग्न दुर्ग के मुक्तद्वार की ग्रोर उत्सुकता से देखने लगी। बलभद्र ही सब से पहले निकला। कन्धे पर बन्दूक, हाथ में नंगी तलवार, कमर में खुखरी, सिर पर फौलादी चक्र, गले में लाल गुलुबन्द। ग्रौर उसके पीछे कुछ घायल, कुछ बेघायल योद्धा बन्दूकें कन्धों पर ग्रौर

नंगी तलवारें हाथ में लिए हुए, उनके पीछे स्त्रियाँ जिनकी पीठ पर बच्चे कस कर बन्धे हुए और हाथों में नंगी खुखरियाँ। कुल सत्तर प्राणी थे। सब प्यास से बेताब।

बलभद्र का शरीर सीधा, चेहरा हंसता हुआ मूछें चढ़ी हुई। सिपाही की नपी-तुली चाल चलता हुआ वह अंग्रेजी सेना में धंसता चला गया। उसके पीछे उसके सत्तर साथी—स्त्री पुरुष। किसी का साहस उन्हें रोकने का न हुआ। बलभद्रसिंह अंग्रेज़ी सेना के बीच से रास्ता काटता हुआ साथियों सहित नालापानी के झरनों पर जा पहुँचा। सबने जी भर कर झरने का स्वच्छ ठण्डा और ताजा पानी पिया। फिर उसने अंग्रेज़ जनरल की ओर मुँह मोड़ा। उसी तरह बन्दूक उसके कन्धे पर थी और हाथ में नंगी तलवार। उसने चिल्ला कर कहा—"कलंगा दुर्ग अजेय है! अब मैं स्वेच्छा से उसे छोड़ता हूँ।" और वह देखते ही देखते अपने साथियों सहित पहाड़ियों में गुम हो गया। अंग्रेज़ जनरल और सेना स्तब्ध खड़ी देखती रह गई।

जब अंग्रेज़ दुर्ग में पहुँचे, तो वहाँ मर्दों, औरतों और बच्चों की लाशों के सिवा कुछ न था। ये उन वीरों के अवशेष थे, जिन्होंने एक डिवीजन अंग्रेज़ी सेना को एक महीने से अधिक काल तक रोके रखा था। और जहाँ के संग्राम में जनरल जिलेप्सी को मिला कर अंग्रेज़ों के इकतीस अफसर और ७१८ सिपाही काम आए।

अंग्रेज़ों ने किले पर कब्ज़ा करके उसे ज़मींदोज़ कर दिया। इस काम में केवल कुछ घण्टे लगे।

: ५ :
सिंधिया को क़िस्त मात

कर्नल टाड की कूटनीतिक सहायता से हेस्टिंग्स ने राजपूतों और सिंधिया के सम्बन्धों को तोड़-फोड़ डाला। और तमाम राजपूत रियासतों

को अपना सामन्त बना कर सब-सीडीयरी सन्धि के जाल में फाँस कर परकैंच कर लिया। अब उसे सिंधिया को अन्तिम क़िस्त मात देना शेष था। अब भी सिंधिया अन्य सब देशी नरेशों से कहीं अधिक शक्तिशाली था। उस की सेना अभ्यस्त, तोपख़ाना व्यवस्थित और उसकी दृष्टि चौकन्नी थी। वह उस समय अपने राज्य के सब से अधिक धन सम्पन्न इलाक़े के बीचों बीच ग्वालियर में बैठा था। और वह अब आख़िरी बार अपनी क़िस्मत का फ़ैसला करने को मैदान में उतरा था। लार्ड हेस्टिंग्स इस समय सिंधिया पर अपनी शक्ति केन्द्रित कर रहा था—और वह स्वयं उसके समक्ष मोर्चे पर आया था।

ग्वालियर से लगभग बीस मील दक्षिण में, छोटी सिन्धु नदी से ले कर चम्बल तक अत्यन्त ढालू पहाड़ियों की एक पंक्ति थी, जो घने जंगलों से ढकी हुई थी। उस में केवल दो मार्ग थे—जिन में गाड़ियाँ और सवार पहाड़ी को पार कर सकते थे। एक छोटी सिन्धु नदी के बराबर से, दूसरी चम्बल के पास से। हेस्टिंग्स ने इस महत्वपूर्ण सामरिक महत्व के स्थान को कर्नल टाड के नए नक़्शे की सहायता से ख़ूब बारीकी से जाँचा। और अपनी सेना के बीच के डिवीज़न द्वारा एक ऐसी जगह घेर ली, कि जिस से छोटी सिन्धु नदी के बराबर के रास्ते से सिंधिया का आ सकना असम्भव हो गया। और दूसरे रास्ते के पीछे मेजर-जनरल डनकिन की डिवीजन को खड़ा कर दिया।

दुर्भाग्य की बात थी कि महाराज सिंधिया ने सैनिक दृष्टि से इस महत्वपूर्ण स्थान की सुरक्षा का कोई विचार ही नहीं किया, जो उस की राजधानी से केवल बीस मील के अन्तर पर था। ज्यों ही सिंधिया अपने शानदार तोपखाने को लेकर, जिस में सौ से ऊपर पीतल की बड़ी तोपें थीं, घाटी पर पहुँचा तो सामने अंग्रेजों की छातियाँ तनी देख सिर पीट कर रह गया। अब युद्ध का तो कोई प्रश्न ही न था।

अब सिंधिया के सामने सिवा इसके कोई चारा न था कि या तो जो सन्धि-पत्र अंग्रेज उस के सामने रखें उस पर वह चुपचाप दस्तख़त करदे,

या अपने शानदार विशाल तोपखाने को मय सब सामान और गोला-बारूद के—और अपने सब से अधिक क़ीमती इलाक़ों को अंग्रेजों के हाथ छोड़ कर अपने थोड़े से साथियों के साथ—जो उसके साथ जा सकें, पगडण्डियों के रास्ते उन पहाड़ियों के पार निकल जाय।

सिंधिया ने सिर धुन लिया, और अंग्रेजों के सन्धि-पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए। इस सन्धि से अंग्रेजों का उस पर पूरा अधिकार हो गया। और सिंधिया ने पूरी अधीनता स्वीकार कर ली। इस प्रकार बिना ही युद्ध के मराठों का यह सब से बड़ा स्तम्भ ढह गया।

: ६ :

बाजीराव

दूसरे मराठा युद्ध के बाद बाजीराव को कम्पनी ने अपने ही हित के लिए पूना की मसनद पर बैठाया था। क्रियात्मक दृष्टि से इस समय बाजीराव अंग्रेज़ों का कैदी था। इस पर कम्पनी बहादुर के कर्मचारी उसकी बेड़ियों को निरन्तर कसते ही रहते थे। इस समय पूना दरबार में रिश्वतों और विश्वासघातियों का बाज़ार गर्म हो रहा था। बाजीराव के मन्त्रियों से लेकर घरेलू सेवकों तक सब पैसा पाकर अंग्रेज़ों की जासूसी कर रहे थे। अब हेस्टिंग्स ने एल्फिन्स्टन को पूना दरबार का रेज़ीडेन्ट बना कर भेजा। उनकी शुद्ध दृष्टि बाजीराव के उर्वर प्रान्तों पर पड़ी, जिनकी आय इस समय भी डेढ़ करोड़ रुपया वार्षिक थी। एल्फिन्सटन चलता-पुरज़ा, कूट पुरुष और चालाक आदमी था ही। इस समय तक भी काठियावाड़, नवानगर, जूनागढ़ का अधिराज पेशवा बाजीराव ही था, परन्तु अंग्रेज़ों ने बिना ही पेशवा से पूछे इन नरेशों से युद्ध कर उनसे बड़ी-बड़ी रकमें जुर्माने में वसूल कर लीं। इसके अतिरिक्त निज़ाम और गायकवाड़ के साथ पेशवा का कुछ पुराना झगड़ा था। ये दोनों राज्य इस समय अंग्रेज़ों के संरक्षण में आ गए थे। और वे पेशवा की अब कुछ भी आन न मानते थे। गायकवाड़ की रियासत तो अंग्रेज़ों के हाथ का

खिलौना ही थी। इन रियासतों के एजेन्टों से मिलकर अंग्रेज़ रेजीडेन्ट एलिफन्सटन निरन्तर नित नए षड्यन्त्र पेशवा के विरुद्ध कर रहा था। यहाँ तक कि पेशवा के हितैषीजनों को मरवा डाला तक गया। उन दिनों इस प्रकार की हत्याएँ आम बात थीं। बड़े-बड़े महत्व के लोग भी आसानी से मरवा डाले जाते थे। और हत्या पेशवा के सिर पर थोप दी जाती थी।

इस समय बहुत से विश्वासघाती अंग्रेज़ों के टुकड़ों पर पल रहे थे। इन विश्वासघातियों में एक बालाजी पन्तनालू था। यह आदमी शुरू में सतारा में किसी घराने में पाँच छह रुपए माहवार का नौकर था। पूना आकर वह रेज़ीडेन्ट के यहाँ नौकर हो गया, शीघ्र ही वह अपनी चालाकी और कारगुज़ारी के कारण एलिफन्सटन की नज़र पर चढ़ गया और पक्का जासूस बन गया। वह पेशवा की राई-रत्ती बातों की खबर अंग्रेज़ों को देता था। दूसरा ऐसा ही आदमी यशवन्त राव घोरपाड़े था। जो पेशवा के विरुद्ध झूठी-सच्ची बातें बनाने और मुक़दमें तैयार करने में एक ही था।

अन्ततः अंग्रेज़ों ने बाजीराव के मन्त्री त्र्यम्बक को उस पर हत्याओं और षड्यन्त्रों के आरोप लगाकर चुनार में कैद कर लिया, जहाँ वह घुल घुल कर मर गया। वास्तव में त्र्यम्बक जी अंग्रेजों के मार्ग का एक कांटा था। वह एक योग्य जागरूक मराठा राजनीतिज्ञ था। वह सदा ही पेशवा को अंग्रेजों के विरुद्ध सावधान करता रहता था। इस लिए उस कांटे को दूर कर अब अंग्रेज तीसरे मराठा युद्ध की विशाल तैयारी में लगे।

सिंहगढ़, पुरन्दर और रायगढ़ के क़िले कम्पनी को मिल ही चुके थे। पर कम्पनी की सरकार तो अब असहाय बाजीराव से भेड़िए और मेमने की कहानी के समान क्षण-क्षण पर बदल रही थी। अंग्रेज संगीनों, जासूसों और कूटनीति से बाजीराव को दबोचते और हत्या तक के अपराध की स्वीकृति कराते जा रहे थे। बाजीराव अब बेहद घबरा गया। जासूसों—

संगीनों और कूटनीति से भयभीत होकर वह पंढरपुर चला गया। वहाँ से वह सतारा के निकट माहुली तीर्थ जा पहुँचा, जहाँ कि कृष्णा और पन्ना नदी का संगम है।

वहाँ उसने सर जान मलकम को बुलाया। और कहा—संगीनों के बल पर मुझ से सन्धि पर दस्तखत कराए गए हैं। और एल्फ़िन्स्टन ने मेरे ऊपर जासूसों का ऐसा जाल बिछाया है कि मैंने किस दिन क्या खाया, वह भी उन्हें पता लगता रहता है। मैं तो अब भी अंग्रेजों से सच्ची मित्रता चाहता हूँ।

सर जान मेलकम ने उसे सलाह दी—अंग्रेज इस समय पिण्डारियों के दमन के लिए, सैन्य संग्रह कर रहे हैं। आप भी एक सैन्य संग्रह करके उनकी सहायता कीजिए। उस से आप के और अंग्रेजों के सम्बन्ध ठीक हो जाएँगे।

भोले बाजीराव ने यह बात गाँठ बाँध ली, और मेलकम की सलाह के अनुसार अंग्रेजों की मदद के लिए सेना जमा करना आरम्भ कर दिया। यहीं वह अंग्रेज कूटनीति से मात खा गया, जिस के कारण उसे पदच्युत हो आगे तीस बरस अंग्रेजों के कैदी की भाँति काटने पड़े।

: ७ :
नवागन्तुक

अभी सूर्योदय हुआ ही था, कि एक ब्रिटिश जहाज बम्बई के बन्दरगाह पर आकर लगा। इस जहाज की प्रतीक्षा बड़ी देर से की जा रही थी, क्योंकि इस में कुछ अंग्रेज सैनिकों की टुकड़ियाँ, सैनिक अफ़सर और नए ढंग की बन्दूकें और तोपें आने वाली थीं।

सूर्य की शरदकालीन धूप में हारबर के उस छोर पर पहाड़ियाँ चमक रही थीं—जिन पर दूर कहीं-कहीं मराठों के पहाड़ी क़िले चुपचाप आकाश में सिर ऊँचा किए खड़े थे। आज कल बम्बई का जो सब से गुलजार इलाक़ा फ़ोर्ट के नाम से प्रसिद्ध है, उन दिनों यहाँ अंग्रेजों का

क़िला और उसके चारों ओर कुछ पुख़्ता इमारतें थीं—जो सब यूरोपियनों की थीं और जहाँ यूरोपियन सौदागरों ने अपनी कोठियाँ तथा व्यापारिक अड्डे बनाए हुए थे। उस समय नगर के इस भाग में कोई सुरक्षा की दीवार भी न थी। सड़कें भी अपूर्ण थीं, यद्यपि इस बन्दरगाह को बसे अब पचास बरस बीत चुके थे। क़िले की फ़सीलें भी ऐसी न थीं जो किसी अच्छे आक्रमण का मुक़ाबला कर सकें।

जहाँ जहाज ने लंगर डाला था—वहाँ से सैंट थामस कैथेड्रल का टावर दीख रहा था—जो अभी हाल ही में बन कर तैयार हुआ था। जहाज से अनेक अंग्रेज और डच यात्री किनारे पर उतर कर अपने-अपने माल अस्बाब की देख-भाल कर रहे थे। दुभाषिए लोग और गाइड उस समय अपने-अपने सर्टिफ़िकेट्स लिए यात्रियों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे और टूटी-फूटी हिन्दुस्तानी अंग्रेजी में बता रहे थे, कि बिना उनकी सहायता के उन्हें इस अपरिचित भूमि में बहुत तकलीफ़ होगी। वे लुट जाएँगे। परन्तु यदि वे उनकी सहायता लेंगे तो लाभ में भी रहेंगे और सुरक्षित भी।

इन आगत यात्रियों में एक तरुण अंग्रेज आतुरता से ऊँची गर्दन उठाए—किसी को उस भीड़-भाड़ में खोज रहा था। जब उसे कोई परिचित चेहरा न दिखाई दिया—तो उस ने हताश होकर एक गाइड को संकेत से अपने पास बुलाया और कहा—"क्या तुम मुझे कैप्टेन मूर के बंगले पर पहुँचा सकते हो?"

"यैस साब, मैं मूर साब को बखूबी जानता हूँ। आप मेरे साथ आइए, अस्बाब की चिन्ता मत कीजिए, मेरा आदमी पहुँचा देगा। मैं इज्जतदार गाइड हूँ सर। यह मेरे पास मेकलिन साब का सार्टिफ़िकेट है—जो बम्बई के मशहूर सौदागर हैं।"

तरुण ने एक उड़ती नज़र काग़ज पर डाली और उसके साथ हो लिया।

अभी वे दोनों थोड़ी ही दूर गए थे—कि सामने से एक अफ़सर

सैनिक वर्दी डाटे और एक हाथ में चाँदी के मूठ की छड़ी लिए धीरे-धीरे आता दीख पड़ा। गाइड ने युवक के कान में कहा—"वह कप्तान मूर आ रहे हैं सर, कप्तान मूर।"

युवक ने आगे बढ़ कर अपना परिचय दिया। कैप्टेन ने अपने हाथ की छड़ी पीछे आने वाले खिदमतगार को दी और हाथ मिलाते हुए तरुण का स्वागत किया।

उसने कहा—"जहाज तीन दिन देर से आया है, हम घबरा रहे थे, कि क्या कारण हो सकता है। एलिस का खत मुझे ठीक समय पर मिल गया था। मैं आशा करता हूँ कि तुम शीघ्र ही अपने मिशन में सफल होओगे। और सामने पहाड़ियों पर चारों ओर जो क़िले देख रहे हो, उन में से किसी न किसी पर कब्जा करके बहादुरी और नेकनामी हासिल करोगे। खैर, अभी तुम मेरे घर चल कर आराम करो—और बातें फिर होंगी।"

: ८ :

नए देश का मेहमान

उन दिनों मझगाँव में अमीर और अफ़सर अंग्रेजों की कोठियाँ बसी थीं। वहाँ पर कर्नल मूर एक उम्दा फ्लैट में शान से रहता था। वह अकेला था और उसकी सेवा में अनेक हिन्दुस्तानी नौकर थे। वह एक शानदार अफ़सर था, और शान से रहता था। उस ने घर का सब से बढ़िया सजा हुआ कमरा अपने मेहमान को दिया। और शीघ्र ही ब्रेक-फ़ास्ट चुनने का आर्डर बैरा को दिया।

ब्रेक-फ़ास्ट की टेबुल पर शाही भोजन तैयार थे। रेड-एण्ड-ह्वाइट की शराब, जो उस समय अमीर ही पी सकते थे—टेबल पर सजी थी। इसके अतिरिक्त अनेक जाति की स्वादिष्ट मछलियाँ थीं। एक प्लेट में पम्फेल्ट मछली थी जिसे ऊँचे तबक़े के खाने के शौक़ीन अंग्रेज बहुत ही पसन्द करते थे। स्वाच-सालमन की प्लेटें भी थीं जो यहाँ बम्बई में

क़ाफ़ी मंहगी मछली थी। प्रान मछली की स्वादिष्ट करी की उम्दा डिशें तैयार की गई थीं। दोनों दोस्त प्रसन्नमन कर ब्रेक-फ़ास्ट का आनन्द ले रहे थे। आगन्तुक तरुण को लम्बे जहाज़ी सफ़र के बाद, जहाँ सूखा माँस और मछलियाँ सीमित मात्रा में मिलती थी, यह स्वादिष्ट और ताज़ा भोजन बहुत ही प्रिय और आनन्ददायक प्रतीत हो रहा था।

ब्रेक-फ़ास्ट से फ़ारिग़ होकर दोनों दोस्त गप्पें उड़ाने बैठ गए। कर्नल मूर ने आज की छुट्टी ली हुई थी। वह खुश मिज़ाज और अच्छे विचारों का तरुण था। अपनी मुस्तैदी और अच्छे स्वभाव के कारण ही वह थोड़े ही समय में ऊँचे पद पर पहुँच चुका था।

ख़िदमतग़ार हुक्का रख गया। आगन्तुक तरुण ने पूछा—

"यह क्या बला है ?"

"यह हवुल ववुल है, हिन्दुस्तानी लोग इसे हुक्का कहते हैं यह वास्तव में स्मोकिंग मशीन है। मजा आता है इसमें तमाखू पीने में। देखो पी कर।"

कप्तान मूर ने खुद कश लगाया। जब पानी में गुड़गुड़ाहट उठी तो नवागन्तुक तरुण हंसने लगा। मूर ने कहा, धुआँ पानी में होकर आता है। तुम्हें शायद पसन्द न हो, इसलिए मैंने तुम्हारे लिए साउथ इण्डिया से चुरुट मंगा लिए हैं। उसने मेज की दराज से चुरुट निकाल कर टेबुल पर रख दिए।

नवागन्तुक तरुण ने कहा—"धन्यवाद कैप्टेन मूर, मैं हवुल-बवुल ही को पसन्द करूँगा।"

"तो शौक से पिओ दोस्त, यह मजेदार चीज है।"

"लेकिन कैप्टेन, मैंने हारवर पर एक अजीब बात देखी। यह क्या बात है ?"

"क्या देखा ?"

"बहुत लोग खून थूक रहे थे। क्या यह इन नेटिव लोगों की आम बीमारी है ?"

"नहीं, मेरे दोस्त, वे पान चबाते हैं। पान एक पत्ता होता है, उसमें वे कुछ मसाला डालते हैं। यहाँ पान चबाने का आम रिवाज है।"

"क्या यूरोपीय भी पान चबाते हैं ?"

"नहीं। मैंने एक बार चबाया तो सिर चकरा गया। तौबा, तौबा। शौक हो तो मंगा दूँ ?"

"खुदा बचाए। हाँ, यहाँ के कुछ हाल-चाल तो बताइए, इस मुल्क के क्या रंग-ढंग हैं ?"

"ओह बम्बई के आस-पास का समूचा इलाक़ा और मध्यभारत तक अराजकता से भरा है। गोया चौतरफ सिविल वार छिड़ी है। मुल्क के इस छोर से उस छोर तक पिण्डारी छाए हुए हैं। सो सालहा साल से मुल्क में बदअमनी फैला रहे हैं। मुल्क के अमीर-ग़रीब सभी उनके नाम से काँपते हैं। वह न किसी राजा की आन मानते हैं, न अदल। झुण्ड के झुण्ड हथियार बंद गिरोह बना कर घूमते रहते हैं। गावों को जलाते हैं। अमीरों को घरों से उठा ले जाते हैं, और बड़ी-बड़ी रक़म लेकर छोड़ते हैं। रक़म न मिलने पर जान से मार डालते हैं। अब आनरेबुल कम्पनी के गवर्नर जनरल लार्ड हेस्टिंग्स ने इनके सफाया करने का बीड़ा उठाया है, और इसके लिए उन्होंने एक लाख सेना तैयार की है। प्रगट में पेशवा औरमरहटे भी इस अभियान में अंग्रेज़ों का साथ दे रहे हैं, पर हक़ीक़त है कि वे स्वयं परस्पर भी लड़ रहे हैं और ब्रिटिश लोगों से भी लड़ने को यह तैयार बैठे हैं। इसके अतिरिक्त पेशवा बाजीराव मन से अंग्रेज़ों का दुश्मन है, वह सन्धि भंग करने पर तुला बैठा है। अब सुना है कि वह पिण्डारियों के दमन करने के बहाने अंग्रेज़ों के विरुद्ध सेना संग्रह कर रहा है। खैर, अब अपनी कहो—क्या इरादा है ?

"क्या कहूँ, आज ही मैं यहाँ आया हूँ और अभी से मेरी तबीयत ऊब रही है।"

"इसमें आश्चर्य की बात क्या है। हक़ीक़त में बम्बई किसी भी फैशनेबुल यूरोपियन के लिए एकदम नीरस जगह है। कोई अंग्रेज़ यहाँ देर तक

नहीं रह सकता। न यहाँ जीवन की रंगीनी है, एकदम मुर्दा जगह है। इसके अतिरिक्त यहाँ की आबोहवा भी एकदम आदमी की एनर्जी और शक्ति को खत्म कर देती है।"

"लेकिन कैप्टन, तुम तो अच्छे तगड़े बने हुए हो। बम्बई की खराब आबोहवा का तुम पर कुछ भी असर नहीं दीख रहा।"

"मैं बहुत सावधानी से रहता हूँ। मुझे यहाँ रहना पड़ता है। पर यह भी कोई जिन्दगी है कि मौज मज़ा से दूर एक ब्रह्मन की तरह रूखी-सूखी जिन्दगी काट दी जाय।"

तरुण हंस दिया। उसने कहा—"फिर भी मेरे सामने कैप्टेन मूर और सर एलफिस्टन के अनुकूल उदाहरण हैं जिन्होंने भारत में आकर अपने जीवन का ध्येय पूरा किया है। क्यों न मेरे जैसा तरुण उनके उदाहरण से साहस और उत्साह ग्रहण करे। ज्यों ही मैंने भारत में आने का इरादा किया, तभी मैंने सुना कि भारत में भेजे जाने के लिए अच्छे तरुणों की आवश्यकता है। बस मैं शीघ्र ही डायरेक्टरों के कोर्ट के सम्मुख पेश हुआ, और वहाँ से अनुमति पत्र पा कर जब मैं इण्डिया आफ़िस गया तो मेरा नाम तुरन्त यूरोपियन रेज़ीमेडेण्ट के केडेटशिप में दर्ज कर लिया गया। मैंने नियमानुसार शपथ ग्रहण की, और चूंकि लंडन में भी निकट भविष्य में होने वाली लड़ाई की चर्चा गर्म है, इसलिए सर्वप्रथम जहाज से जो यूरोपियन इन्फ़ेंट्री की रेजीमेंट आ रही थी—उसी में मुझे भी कैप्टेन डिक्सन की कमाण्ड में भेज दिया गया।"

"तो तुम ठीक वक्त पर आए हो मेरे दोस्त। यहाँ तुम्हें ज्यादा देर सुस्त बैठे रह कर ऊबना न पड़ेगा। क्योंकि आज सुबह ही—माउण्ट स्टुर्ट एलफ़िन्सटन का पूना से डिस्पैच आया है, जिस में ताकीद की गई है—कि तुम्हारी कम्पनी ज्यों ही भारत भूमि पर क़दम रक्खे, उसे तुरन्त ही तेज़ी से पूना रवाना कर दिया जाय। मेजर विल्सन की कमाण्ड में तुम जा रहे हो मेरे दोस्त, जो बड़े मेहरबान अफ़सर हैं। मैं आज रात ही

को तुम्हारी उन से मुलाक़ात करा दूँगा। क्योंकि कल सुबह ही तुम्हें कूच करना होगा।"

"यद्यपि मैं थका हुआ हूँ—और मुझे अभी आराम की ज़रूरत है पर मैं तुरन्त ही सफ़र को तैयार हूँ—मैं चाहता हूँ जब तक हिन्दुस्तान की वाहियात जलवायु मेरी तबियत को सुस्त और निकम्मा न कर दे—उससे प्रथम ही मैं अपनी तलवार के जौहर दिखा सकूँ।"

"बेशक, बेशक। किन्तु क्या तुम्हें जहाज़ की यात्रा में बहुत तकलीफ़ हुई।"

"ओह, बहुत कैप्टेन, यद्यपि हम तेज़ चाल से चले, परन्तु राह में रुकना पड़ा। हम ने मई के अन्त में लंडन छोड़ा था। और अब आज यह अक्टूबर की चौथी तारीख है। हमें चार महीने से अधिक लग गए।

"तो क्या मौसम ज़्यादा खराब रहा ?"

"ओह, बहुत ही खराब। फिर सैनिक अभियान। पीने का पानी बहुत ही खराब। सीले हुए बिस्कुट। बस समुद्री वायु की ताज़गी नाम लेने भर को कही जा सकती थी, पर वह भी ख़ार के कूड़ा-कर्कट की गंध से परिपूर्ण। परन्तु मैंने एक काम बुद्धिमानी का किया।"

"क्या ?"

"मैंने जहाज़ ही पर मराठी और दूसरी हिन्दुस्तानी भाषाएँ कुछ-कुछ बोलनी सीख ली हैं, जो निस्संदेह यहाँ बहुत काम आएँगी।"

"ओह, निस्संदेह यह तुम ने अच्छा काम किया। तो अब तुम थोड़ा आराम करो दोस्त। शाम को मैं तुम्हें मेजर विल्सन से मिलाऊँगा। और सुबह तुम्हारा कूच होगा।"

: ६ :

पेशवा के हुज़ूर में

पूना में इन दिनों बड़ी भारी सरगर्मी थी। मराठों की हथियार बन्द टुकड़ियों जत्था-बन्द बाज़ारों और गली कूचों में चक्कर काट रहीं

थीं। वे अंग्रेजों के विरुद्ध जोर-जोर के नारे लगा रही थीं। दूकानदार अपने आगे नंगी तलवार रख कर सौदा सुलफ़ तोल रहे थे। कारीगर एक हाथ में तलवार और एक हाथ में औजार लिए काम कर रहे थे। सब से अधिक भीड़ भाड़-शिव मन्दिर के आगे तालाब के किनारे पर थी—जिस में बड़े-बड़े कमल फूल रहे थे।

नई ब्रिटिश सेना के आने से नगर में और भी उत्तेजना फैल गई थी।

नवागंतुक तरुण का नाम जानहेनरी था। तीसरे पहर वह सातवी रेजीमेन्ट के देशी इन्फेन्ट्री के एक सिपाही को साथ लेकर नगर घूमने निकला। दोनों घोड़ों पर सवार थे और सीधे बढ़े चले जा रहे थे। उन्हों ने देखा—अनेक क्रुद्ध दृष्टि उन पर पड़ रही हैं, और लोग उन्हें देख कर भाँति-भाँति के कटु शब्द कह रहे हैं। तरुण को अपनी भूल शीघ्र मालूम हो गई। परन्तु अब लौटने का उपाय नहीं था। वह एक लम्बा चक्कर काट कर बाहर ही बाहर अंग्रेजी छावनी में पहुँच जाना चाहता था।

दोनों ने अपने घोड़े बढ़ा दिए। पर अब अन्धकार तेजी से फैलता जा रहा था, और शायद वे रास्ता भूल गए थे। सूरज छिप गया था। कई बार ऐसा हुआ कि कोई मराठा सवार उसे धक्का देता हुआ निकल गया। पर अभी किसी ने उस पर हमला नहीं किया था। इसी समय उसके कान में ये शब्द पड़े—"यदि साहब अपनी जानों-माल की खैर चाहता है तो चुपचाप मेरे पीछे चला आए।" तरुण ने चौकन्ना होकर देखा—एक मनुष्य मूर्ति कपड़े से अपना मुख और शरीर छिपाए तेजी से एक गली में मुड़ गई। किसी अज्ञात प्रेरणा से प्रेरित होकर तरुण ने भी अपना घोड़ा उसके पीछे मोड़ लिया। कुछ देर तक वे तेजी से आगे बढ़ते गए, पर ज्यों-ज्यों वे आगे बढ़ते गए, गली तंग और अंधेरी होती गई। तरुण ने अपने साथी को तुरन्त घोड़े रोकने और वापस लौटने की आज्ञा दी। पर इस पर वही मूर्ति फिर रुकी। और उसने कहा—"खबरदार अगर लौटे तो जान नहीं बचेगी।" इस पर साहस करके तरुण उस अज्ञात पुरुष के पीछे फिर चलने लगा। वह पुरुष पैदल था—पर वह घोड़े

से भी तेज चला जा रहा था। तरुण यह जानने की चेष्टा ज़रूर कर रहा था—कि यह कौन सा स्थान है। अन्त में एक मकान के द्वार पर रुक गया। द्वार छोटा सा था, पर दीवारें बहुत ऊंची-ऊंची थीं। वह द्वार खोल ही रहा था कि तरुण ने तलवार नंगी करके उस की गर्दन पर रख कर कहा—"तू कौन है, और यहाँ मुझे किस मतलब से लाया है।"

परन्तु वह व्यक्ति कुछ भी उत्तर न दे कर लोमड़ी की भाँति फुर्ती से मकान में घुसकर ग़ायब हो गया।

तरुण क्षण भर रुका। फिर अपने साथी सिपाही के सुपुर्द अपना घोड़ा कर नंगी तलवार हाथ में लिए द्वार के भीतर घुस गया। उस ने देखा—भीतर खुला मैदान है, मैदान में खुशनुमा बाग़ है। भाँति-भाँति

के फूल खिले हैं। और उनकी सुगन्ध से भरे हवा के झोंके मस्ती ला रहे हैं। परन्तु उस आदमी का कहीं पता न था। वह सामने के वृक्षों के झुर-मुट में जा कर ग़ायब हो गया था। क्षण भर वह तरुण वहां खड़ा रहा—और फिर द्वार की ओर लौटा। पर यह देख कर उसका खून ठण्डा हो गया—कि वहाँ दो पुरुष हाथ में नंगी तलवारें लिए राह रोके खड़े थे। उसने पुकार कर अपने साथी सिपाही से कहा—कि भाग कर अपनी जान बचाए। और फिर उन आदमियों की ओर घूम कर कहा—

"मुझे यहाँ रोक रखने का तुम्हारा क्या अभिप्राय है ?"

"तुम्हीं कहो, कि तुम किस इरादे से यहाँ घुस आए हो ?"

"यह मैं खुद नहीं जानता।"

"तो तुम यह भी नहीं जानते होगे कि तुम कौन हो ?"

"मैं ब्रिटिश ट्रुप का एक अफ़सर हूँ।"

"तब तो पक्के जासूस हो। तुम्हारा सिर अभी काटा जायगा।"

"क्या मैं ने यहाँ डाका डाला है ?"

"तुम श्रीमन्त पेशवा सरकार के विश्राम बाग़ महल में घुस आए हो। यह इतना बड़ा अपराध है कि तुम्हारा अभी श्रीमन्त की आज्ञा से सिर काट लिया जायगा।"

बेचारा नवागन्तुक तरुण अंग्रेज़ घबरा कर आँखें फाड़-फाड़ कर उन दोनों राज पुरुषों को देखने लगा—जिन के हथियार और क़ीमती वस्त्र अब दूर से आते हुए प्रकाश में चमक रहे थे। उसने मन ही मन कहा—क्या यह पेशवा सरकार का महल है—जिस के संकेत पर ही दक्षिण का संग्राम और सन्धि निर्भर है। फिर वह बोला—

"मुझे इस बात का पता न था", उसने सारी बात व्योरे बार कह दी।

तब उन पुरुषों ने सलाह कर के कहा—

"तुम्हें अभी श्रीमन्त पेशवा सरकार के रूबरू चलना पड़ेगा।" वे उसे तलवार की नोक पर उस दिशा की ओर ले गए, जिधर महलात दीख

रहे थे—और जहाँ से तेज प्रकाश छन-छन कर चारों ओर बिखर रहा था।

पेशवा दरबार हाल के बीचों-बीच मसनद पर बैठा था। सफ़ेद मल-मल की गद्दी और मसनद पर चिकन ज़रदोज़ी का निहायत नफ़ीस काम हो रहा था। गद्दी पर रंगीन विलायती साटन का चंदोवा तना था, जो सोने के खम्भों पर टंका था, चंदोवे पर चाँदी-सोने के तारों का भव्य क़सीदे का काम किया गया था। श्रीमन्त पेशवा एक महीन ढाके की मलमल की पोशाक धारण किए हुए थे। उसके मण्डील पर एक बहु-मूल्य हीरे की कलगी धक् धक् शुक्र नक्षत्र की भाँति चमक रही थी। जिसका मूल्य आँखों से आंकना सम्भव न था। उसके कंठ में बड़े २ मोतियों का एक हार था, जिस के बीच में याकूत और पन्ने का वज़नी कण्ठमाल था। पेशवा अत्यन्त सुन्दर और गौरवर्ण पुरुष था। पैरों में उसने जूता नहीं पहना हुआ था। उसके पैर छोटे थे। वास्तव में वह एक अत्यन्त सुकुमार पुरुष था, जो किसी प्रकार के कष्ट सहने को नहीं बनाया गया था।

पेशवा के सम्मुख तनिक हट कर पेशवा के प्रधान सेनापति मोरो-दीक्षित और बापू गोखले खड़े थे। दोनों शस्त्र सज्जित और मुस्तैद थे।

तरुण को बापूजी गोखले और मोरो दीक्षित के बीच ले जाकर खड़ा कर दिया गया। जो सरदार उसे गिरफ्तार कर लाए थे, उन्होंने संक्षेप से सब हक़ीक़त बापू गोखले से कह दी।

पेशवा ने मुस्कुरा कर कहा—"यह कौन आदमी है ?"

"श्रीमन्त, इसे विश्राम बाग़ के भीतर पाया गया है।"

"क्या इसके पास कोई संदिग्ध वस्तु भी पाई गई है ?"

"नहीं श्रीमन्त।"

"तो यह कहे—कि इसका इस प्रकार विश्राम बाग़ में अनधिकार प्रवेश का क्या कारण है ?"

इस पर तरुण ने शुद्ध अंग्रेजी भाषा में कहा—

"योर हाईनेस, भूल से मैं आ गया हूँ। मेरा अपराध क्षमा हो।"

"यह तो एक सुशील तरुण है, क्या यह कोई भारतीय भाषा भी जानता है ?"

"श्रीमन्त, मैं टूटी-फूटी मराठी बोल सकता हूँ।"

"तुम भारत में कितने दिन से हो ?"

"आज ही मैं पूना आया हूँ श्रीमन्त, नई ब्रिटिश रेजीमेंट के साथ, भारत में आए भी मुझे अभी पूरा एक सप्ताह नहीं हुआ।"

"तुम क्या यूरोप की अन्य भाषाएँ भी जानते हो ?"

"फ्रैन्च और स्पेनिश जानता हूँ सरकार।"

"क्या तुम हमारी सरकार में वफ़ादारी से नौकरी करोगे ?"

"योर हाईनेस, मैं आनरेबुल कम्पनी का अनुगत और वफ़ादार सेवक हूँ, इसलिए मैं श्रीमन्त की आज्ञा पालन करने में असमर्थ हूँ।"

पेशवा क्षण भर चुप रहा। फिर उसने बिना ही तरुण की ओर देखे कहा—"इसे हमारे हुजूर से ले जाओ, और एलफिंस्टन के सुपुर्द कर दो। साथ ही सारी हक़ीक़त भी लिख दो।"

तरुण को उन्हीं दोनों अफसरों ने अपनी तलवार की छाया में ले लिया और उसे ले चले।

: १० :
पिंडारी

पिंडारी दक्षिण भारत की पठान जाति थी।

शिवाजी के समय से लेकर उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ तक मराठों की सेना में पिण्डारियों का एक खास महत्व था। ये लोग अधिकतर नर्वदा के किनारे रहते थे। जहाँ होल्कर और सिंधिया दरबार की ओर से उन्हें जमीनें दी हुई थीं। शान्ति काल में ये खेती-बाड़ी करते या टट्टू और बैलों पर माल लाद कर बेचते फिरते थे। लड़ाई के समय मराठा सेना में भर्ती हो कर लड़ते थे। पिंडारी वीर—ईमानदार और बफादार होते थे। इनके पृथक्-पृथक् जत्थे होते थे, जो 'दुर्रे' या 'लब्बर'

कहाते थे। जो परस्पर संगठित होते थे। ये बड़े शहसवार और कठिन योद्धा होते थे। मराठों और औरंगजेब के बीच युद्धों में इन्होंने बड़ी भारी वीरता और फर्माबर्दारी दिखाई थी। नसरू पिण्डारी शिवाजी का का एक विश्वस्त जमादार था। उन दिनों एक दूसरा पिंडारी सरदार सेनापति पुनापा मराठों का भारी मददगार था। पेशवा बाजीराव प्रथम ने अधिकतर पिंडारियों की मदद से मालवा जय किया था। इसके बाद भी होल्कर और सिंधिया की सेना में पिंडारियों के अनेक दुर्रे और लब्बर थे। हीरा खाँ पिंडारी और तुरान खाँ पिंडारी माधोजी सिंधिया के विश्वस्त सेनापति थे। पिडारी सरदार चीतू को उसकी सेवाओं के उपलक्ष्य में महाराज दौलतराव सिंधिया ने नवाब की उपाधि दी थी। एक दूसरे पिण्डारी सरदार करीम खाँ को भी उन्होंने नवाब बनाया था। पानीपत की तीसरी लड़ाई में पिण्डारी सरदार हूल सवार ने पन्द्रह हजार सवार लेकर मराठों के साथ प्राण त्यागे थे।

मराठों और मुसलमानों के बीच कभी वेमनस्य न रहा था। दोनों ही मराठी बोलते तथा दोनों के रीति-रिवाज भी प्रायः एक से ही रहते थे। सिंधिया और अन्य मराठा नरेशों के सेनापति प्रायः मुसलमान होते थे। शान्ति-काल में ये खेती-बाड़ी और वणिज-व्यापार करते थे, युद्ध छिड़ने पर अपने घोड़े और हथियार लेकर मराठा दरबारों की मदद को पहुँच जाते थे। होल्कर राज्य के पिंडारी होल्करशाही और सिंधिया सरकार के सिंधियाशाही कहाते थे।

जब ईस्ट इंडिया सरकार ने सब-सीडीयरी सेना का जाल बिछा कर सिंधिया होल्कर और पूना दरबार को फाँस लिया, तो ये बेचारे पिण्डारी असहाय रह गए। अब इनका कोई सैनिक उपयोग मराठा दरबार न कर सकते थे। खेती क्यारी की आय यथेष्ट न थी—खास कर वे प्रकृत सिपाही पेशा लोग थे। अब पिंडारियों के दल लावारिस सैनिक टुकड़ियों की भाँति समूचे मध्यभारत में घूमते-फिरते थे। जो चाहे उनकी सेवाएं खरीद सकता था। अंग्रेजों की नजर पहले ही उनकी

थी। उन्हीं के कौशल से ये मराठा दरबार से निराश्रय हुए थे। उन्होंने गुप्त रीति पर उनकी सेवाओं का उपयोग करना आरम्भ किया—और उन्हें धन का लालच और बड़ी-बड़ी रकमें देकर उनके द्वारा जयपुर आदि राजपूत रियासतों को, और बाद में मराठा रियासतों में भी लूट-मार करने को आमादा कर लिया। देखते-देखते ही पिण्डारियों का आतंक सारे राजस्थान और मध्यभारत में छा गया। अब वे स्वेच्छा से ही दल बना कर गांवों को लूटने और वहाँ से लोगों को पकड़ ले जाने लगे—जिन्हें वे बड़ी-बड़ी रकमें लेकर छोड़ते थे। धीरे-धीरे पिण्डारियों के ये जत्थे अंग्रेजों की शक्ति के बाहर होने लगे। और एक बार मेजर फ्रेजर ने उनके एक जत्थे पर आक्रमण भी कर दिया, जिससे क्रुद्ध होकर पिंडारियों ने कृष्णा नदी के किनारे-किनारे समस्त अंग्रेजी इलाकों में अंधेरगर्दी मचा दी।

इस समय तक भी कम्पनी के इलाकों के अधिवासियों की अपेक्षा देशी राज्यों के अधिवासी अधिक सम्पन्न और खुशहाल थे। चोरी और डकैती के लिए भी वहाँ कठोर दण्ड दिया जाता था। परन्तु अंग्रेज़ी अमलदारी में डाकुओं को दण्ड देना अथवा उनसे प्रजा की रक्षा करना अंग्रेज शासकों की नीति के ही विरुद्ध था। भारतीय प्रजा इस तरह की आपत्तियों में फंसी रह कर पूर्णतः निरीह और निराश्रय बन जाय, इसी में अंग्रेज़ों को अपनी कुशल दीख रही थी। प्रजा की जानमाल की रक्षा करने की उन्हें कुछ आवश्यकता न थी। उनके लिए आवश्यक था कि वे प्रजा को दबाए रखें, जिससे वह उनके विरुद्ध विद्रोह न कर सके। प्रजा को लगातार आपत्तियों में फंसाए रखना और उसे खुशहाल और निश्चिन्त न होने देना, उस समय अंग्रेज़ों की शासन नीति थी। लार्ड कार्नवालिस ने जो शासन सुधार किए थे, उनका मुख्य उद्देश्य भी भारतीय प्रजा में निरन्तर आपसी झगड़े क़ायम रखना ही था। और यही उन सुधारों का परिणाम हुआ भी। इस समय अंग्रेज़ कर्मचारी कारीगरों और व्यापारियों से मनमाने ढंग पर माल खरीदने और माल तैयार

कराने में तो निर्दय अत्याचार करते ही थे। लगान की वसूली और दूसरे कर ग्रहण करने में भी वे ऐसे अत्याचार करते थे, जो रोमांचकारी होते थे। इसके अतिरिक्त सांसिए, हाबूड़े और कंजरों के छोटे-छोटे दल निर्भय गाँवों में घुस कर उन्हें लूट लेते, कत्ल कर देते और गाँवों में आग लगा देते थे। उनकी कोई दाद-फर्याद सरकारी अमलदार नहीं सुनते थे, इसी से कम्पनी के राज्य की वृद्धि के साथ-साथ इन खानाबदोश डाकुओं के संगठन भी दृढ़ होते जा रहे थे। इस समय दिल्ली, मेरठ, सहारनपुर का और उसके आस-पास पचास मील तक का इलाक़ा इन डकैतों की दया पर छोड़ा हुआ था।

: ११ :

सेना का जाल

इस समय पचास हज़ार से भी अधिक पिण्डारी छोटी-बड़ी टुकड़ियों में अनुशासन विहीन लूट-मार करते आतंक फैलाते फिर रहे थे। अंग्रेज़ों के लिए उनका दबाना असह्य था। वे उन्हें दबाने के बहाने अपनी सैन्य संग्रह करते जा रहे थे। पर वास्तव में यह सैन्य संग्रह दक्षिण से पेशवा के तख़्त को उलटने के लिए थी। उधर पेशवा भी दबादब सेना संग्रह कर रहा था। कहा जाता है कि पिण्डारियों के दमन के लिए वह अंग्रेज़ों की मदद करने के लिए यह सैन्य संग्रह कर रहा है। वास्तव में दोनों ओर से कूटनीतिक चालें चली जा रही थीं। पेशवा समझ गया था कि अब नहीं तो फिर कभी नहीं। और अंग्रेज़ समझ रहे थे कि यही अन्तिम दाव है। अब उन्हें यह भय साफ़ दीख रहा था कि यदि ये दुर्मद पिण्डारी मराठा शक्ति से मिल गए तो फिर अंग्रेज़ों का निस्तार नहीं है। मराठों के दल-बादल प्रतिहिंसा की आग मन में लिए बैठे थे। पेशवा का अपमान वे किसी हालत में सह नहीं सकते थे। पेशवा के साथ छल-कपट का जो व्यवहार किया गया था उससे खीझ गया था। और अब वह पूना लौट आया था। तेजी से मराठा तलवारें उसकी कमान

में एकत्र होती जा रही थीं, और जब से पेशवा पूना में लौट कर आया था, पूना की समृद्धि बढ़ाने के लिए उसने पूना के आस-पास के प्रदेश के सब प्रकार के टैक्स माफ़ कर दिए थे। उसने कोतवाल का पद तक उड़ा दिया था, और इस बात की कड़ी नज़र रखी थी कि कोई राज कर्मचारी प्रजा के साथ जबर्दस्ती न करे। यद्यपि हाल ही में पूना में अंग्रेज़ तबाही ला चुके थे, लूट और अकाल से भी पूना बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो चुका था, परन्तु इस समय पूना शहर निहायत खुशहाल दिखाई दे रहा था। तमाम मुख्य-मुख्य गलियों और बाज़ारों में इस तरह के लोग भरे हुए थे, जिनकी पोशाक और सूरतों से प्रतीत होता था कि जितना आराम-सुख और व्यापार या दस्तकारियाँ वहाँ थीं, उतनी यूरोप के किसी शहर में भी न थीं। चारों ओर खुशहाली और सम्पन्नता का दृश्य दिखाई देता था।

इस समय तमाम मराठा साम्राज्य की सीमाओं को घेर कर एक लाख तीस हज़ार अंग्रेज़ सेना सन्नद्ध हो रही थी। स्पष्ट था कि यह विशाल तैयारी केवल पिण्डारियों के दमन के लिए न थी।

यदि आप तत्कालीन भारत के नक़्शे की ओर ध्यान दें, तो आप देखेंगे कि कृष्णा नदी और गंगा नदी के बीच बहुत बड़ा लम्बा-चौड़ा भू-भाग है। इसके बाद दक्षिण-पश्चिम में पूना से लेकर उत्तर-पूर्व में कानपुर तक का विशाल भूखण्ड है। अब आप इन दोनों विशाल भूखण्डों तथा—इनके बीच की देशी रियासतों पर दृष्टि डालिए। और तब यह समझिए कि अंग्रेज़ों की चमू जो तीनों बड़े-बड़े प्रान्तों से चुनी गई थी—तथा जो उत्तर भारत और दक्षिण पथ को घेरती हुई—पिण्डारी जत्थों और देशी रियासतों, को अपने में समेटती हुई, इस विस्तृत भू-भाग के ऊपर फैलती जा रही थी। हक़ीक़त तो यह थी—मानो एक जबदस्त शिकारी इस समय भारत के राजा-महाराजाओं—का एक जबर्दस्त शिकार करता जा रहा था। वास्तव में बहुत दिनों तक विश्राम कर लेने के बाद अब अपनी समस्त विशाल सैनिक शक्तियों को लगा कर अंग्रेज

देशी रियासतों को पृथ्वी पर से मिटा डालने का एक व्यापक प्रयत्न कर रहे थे और भारत के राजे-महाराजे अभी बेख़बर सो रहे थे।

किन्तु मराठे जाग उठे थे। वे बेचैन तो पहले से ही थे, अब सशंक हो गए थे। पेशवा और बरार के राजा ने देखा कि ये जबर्दस्त सैनिक तैयारियाँ केवल पिण्डारियों के दमन के लिए नहीं हैं। स्वयं गवर्नर-जनरल जिस युद्ध का संचालन कर रहा है, उसका प्रकट उद्देश्य चाहे जो बताया जाय—अन्त में यह युद्ध मराठा सामर्थ्य को चकनाचूर करेगा।

बड़े-बड़े अंग्रेज़ अफ़सर गुप्त पत्र व्यवहार कर रहे थे। अंग्रेज़ी छावनियों में इसी विषय के विवाद छिड़ रहे थे। राजनैतिक धुरीण पुरुष, कौंसिल की बैठकों में इसी विषय पर गम्भीर चर्चाएँ चलाते थे, सिपाही लोग अपने हथियार साफ़ करते हुए खुशी-खुशी अपनी अटकलें लगाते और पेशीनगोइयाँ करते थे। अंग्रेज़ शायद यह सोचते थे कि वे जब अपनी तोपों में गोले भर कर—उनके मुँह पर बारूद रख कर जलता हुआ पलीता हाथ में लिए खड़े होंगे तो तमाम दुनिया अपनी तोपें उतार कर अलग रख देगी!

सन् १८१७ की गर्मी और पतझड़ के दिन थे, जब अंग्रेज़ सेनाएँ अपनी-अपनी जगह जमा हुईं। चौतीस हज़ार सवारों की एक ज़बर्दस्त सेना स्वयं लार्ड हेस्टिंग्स के नेतृत्व में संगठित हुई। इस सेना के तीन डिवीज़न किए गए। कुछ सेना बचा कर रिज़र्व में रखी गई। तीनों डिवीज़नों में एक आगरे में, दूसरी काल्पी के निकट जमना के किनारे सिकन्दरे में और तीसरी कलिंजर बुन्देलखण्ड में। शेष रिज़र्व पल्टन दिल्ली के दक्षिण-पश्चिम रिवाड़ी में नियुक्त की गई।

दक्षिण की सेना में सत्तावन हज़ार स्थायी सैनिक थे। इसकी कमान लेफ़्टिनेन्ट-जनरल सर टामस हिसलप के अधीन दी गई। यह सेना पाँच डिवीज़नों और एक रिज़र्व में बाँट दी गई। इस सेना की स्थिति ऐसी रखी गई कि हिंदिया और होशंगाबाद के रास्ते तमाम सेना एक साथ

नर्वदा पार कर बरार और खानदेश के इलाक़े पर कब्जा कर सके। और आवश्यकतानुसार काम आ सके।

गुजरात से एक डिवीज़न सेना दोहद के रास्ते—मालवे में प्रवेश करने के लिए नियुक्त की गई।

इस से प्रथम इतनी विशाल सैनिक तैयरियाँ अंग्रेज़ों ने कभी नहीं की थीं, बाज़ाप्ता इस विशाल सेना के अतिरिक्त तेईस हज़ार अस्थायी सवार थे जिन में तेरह हज़ार दखन की सेना के साथ थे और दस हज़ार बंगाल की सेना के साथ।

इस भारी सैन्य का उद्देश्य समस्त मराठा मण्डल की रियासतों के स्वाधीन अस्तित्व को सदा के लिए उखाड़ फेंकना था।

बस, अब एक चिनगारी गिरने की देर थी।

: १२ :

अंग्रेजी-कूटनीति का जाल

अब अंग्रेज भारत के एक बहुत बड़े भाग को अधिकृत कर चुके थे। अधिकार का जो अंश शेष था, उसकी पूर्ति में रुकावट करने वाली शक्तियां अब मानो नष्ट हो चुकी थीं या इतनी कमजोर हो गई थीं, कि उन्हें शत्रु की श्रेणी में गिना ही नहीं जा सकता था। राजनीतिक दृष्टि से मुग़ल बादशाह एकदम गया बीता हो चुका था। उत्तर दिशा से आने वाले संकटों को लार्ड मिन्टो ने पंजाब-सिन्ध और ईरान से संधि करके रोक दिया था। दो वर्ष लोहा चला कर नैपाल को भी अनुगत बना लिया गया था। अब तो अंग्रेजों के सामने एक ही दीवार खड़ी रह गई थी, वह थी मराठों की संघ शक्ति। जो चोट पर चोट खाकर जर्जर तो हो चुकी थी पर ढही न थी। अंग्रेज अब उसे एक दम ढहा देने पर तुले हुए थे। इस लिए अब अंग्रेज़ मराठा संघ का सर्वनाश करके एकदम भारत के स्वामी होने को उतावले हो रहे थे।

बाजीराव प्रथम ही के काल में मराठा संघ बिखरने लगा था। पहले पेशवा के घर में फूट पड़ी, फिर वह धीरे-धीरे सावन्तों में फैल गई। मराठा संघ के चारों स्तम्भ सिंधिया, होल्कर, गायकवाड़ और भोंसला लगभग स्वतन्त्र शासक बनकर पेशवा का शिकार करने के लिए आपस में लड़ते रहे। इस गृह-फूट का यह परिणाम हुआ कि संघ के सभी सदस्य एक-एक करके अंग्रेजों के चंगुल में फंस गए और अपनी शक्ति और स्वतन्त्रता खो बैठें।

दुर्भाग्य से पेशवा बाजीराव मराठा संघ की सबसे दुर्बल कड़ी थी, जिसके कारण वह महाराष्ट्र शक्ति के लिए एक अभिशाप बन गया। वह आकृति, भव्य में बातचीत में शिष्ट, पूजा-पाठ में श्रद्धावान् और संस्कृत का पंडित था। वह तलवार का धनी भी था, और पक्का शह सवार भी। परन्तु वह वीर न था न उसमें संकल्प की दृढ़ता थी, न इतना साहस कि विपरीत परिस्थितियों में अपने अधिकार में आ रहे। उसकी अधिकार-लिप्सा बहुत बढ़ी हुई थी, वह स्वयं किसी का विश्वास नहीं करता था। और न उसका विश्वास किया जा सकता था। वह बिना सोचे-समझे वायदे कर लेता था और साधारण कारणों से भी वह अत्यन्त नृशंस क्रूर हो बैठता था। बसीन की सन्धि उसकी अयोग्यता और कायरता, का जीता जागता प्रमाण था।

बसीन की सन्धि में उसने यह स्वीकार कर लिया था कि कम्पना की कुछ पैदल और घुड़सवार सेना, तोपखाने के साथ पूना के निकट स्थायी रूप से रहेगी। जिसका कुल खर्चा पेशवा देगा। पेशवा ने इसके खर्चे के लिए सूरत का समृद्ध नगर अंग्रेजों के हवाले कर दिया था। उसने निज़ाम और गायकवाड़पर से अपना स्वामित्व हटा लिया था और अन्य यूरोपियन जातियों व राज्यों से भी सम्बन्ध विच्छेद कर लिया था। और सब महत्वपूर्ण मामलों में अंग्रेजी सरकार को मध्यस्थ निर्णायक स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार बसीन सन्धि, सन्धि न थी, एक प्रकार का आत्म-समर्पण था, जिसने मराठा राज्य संघ को निष्प्राण कर दिया

था और इसका यह परिणाम हुआ कि अंग्रेज़ मराठा शक्तियों को फांसते और संहार करते रहे और पेशवा बाजीराव कम्पनी की सेना की छत्रच्छाया में पड़ा ऐश करता रहा।

यदि पेशवा बाजीराव में तनिक भी साहस और राजनैतिक बुद्धि होती, तो वह अंग्रेज़ों की सहायता से पूना की गद्दी पर बैठकर भी धीरे-धीरे अपने सामन्तों की शक्ति का संगठन कर सकता था और इस प्रकार उभर सकता था। परन्तु वह अपनी सारी शक्ति छोटे-बड़े विरोधी सरदारों से क्रूर बदला लेने में खर्च करता रहा। उसने छोटे-छोटे सरदारों पर इतने अत्याचार किए कि वे सब उसके शत्रु बन गए। उसकी कायरता के कारण उसके सेनापति उससे सन्तुष्ट न थे, न उस पर विश्वास रखते थे। उसके कोष की हालत भी अच्छी न थी, आमदनी के साधन सीमित थे, परन्तु वह अपना सब धन मौज-मज़े में और दान-पुण्य में खर्च कर देता था। जब पूना दर्बार की यह हालत थी तो अंग्रेज़ सरकार को इससे अच्छा सुअवसर महाराष्ट्र संघ को नष्ट करने का और कौन सा मिल सकता था, इसीलिए उसने अपनी सेना की विराट-व्यूह रचना की, जिसका संकेत हमने पिछले परिच्छेद में किया है।

बाजीराव एक सुखार्थी पुरुष था। और वह नहीं चाहता था कि अंग्रेज़ों से कोई झगड़ा हो। क्योंकि वह जानता था कि अब उसकी गद्दी की रक्षा तो अंग्रेज़ी संगीनें ही कर रहीं हैं और उन्हीं की छत्रच्छाया में वह बेफिक्री से मौज-मज़ा कर रहा था। परन्तु अंग्रेज़ों की योजना बिल्कुल दृढ़ थी और उन्होंने निश्चय कर लिया था कि पेशवा की गद्दी का समूल नाश कर देना चाहिए।

उन्हें सबसे अधिक पिण्डारियों से भय था कि जिनकी शक्ति और संगठन अब दुर्दम्य हो चुके थे। उन्हें भय था कि यदि पिण्डारियों की समूची शक्ति का मराठा संघ से संबंध हो गया, तो फिर अंग्रेज़ों को हिन्दुस्तान में सांस लेने को जगह न मिलेगी। ये पिण्डारी भयंकर छापामार थे, वे हवा की तरह एक ही झोंके में विनाश और संहार करके ग़ायब हो

जाते और किसी की आन नहीं मानते थे।

दौलतराव सिंधिया एक धूर्त सरदार था। वह एक अवसरवादी और वीर पुरुष था। वह समय पर लड़ता भी था और तरह भी देता था। उसने मराठा सरदारों से अलग होकर अंग्रेज़ों से सन्धि करली, जिसने मराठा शाही के पतन का द्वार खोल दिया। इसके बाद बड़ौदे के आनंद-राव ने अपने को अंग्रेज़ों के हाथ बेच दिया। इस समय माउन्ट स्टुअर्ट एलफिस्टन पेशवा के दरबार में अंग्रेज़ों का प्रतिनिधि था, जो मार्क्विस आफ हेस्टिंग्ज़ का दाहिना हाथ था, उसने पेशवा को इस तरह अपने शिकंजे में कसा और उसकी गर्दन दबाकर ज़बरदस्ती सिंहगढ़, पुरन्दर और रायगढ़ के प्रसिद्ध क़िले हथिया लिए, जिससे मराठा संघ में उदासी छा गई और अंग्रेज़ी सरकार के घर में घी के चिराग़ जल उठे। और उन्हें आशा हुई कि अब मराठा संघ कुछ ही दिनों का मेहमान है।

अब बाजीराव के चारों ओर एलफिंस्टन के जासूसों का जाल पुरा हुआ था। इन सबसे घबराकर पेशवा एक बार पूना से भाग भी गया, परन्तु सर जान मालकम की सलाह से वह फिर पूना में आकर सेना भर्ती करने लगा। अब वह सावधान हो गया था परन्तु चूंकि वह दृढ़ निश्चयी पुरुष न था, इसलिए उसके प्रत्येक काम ढीले और संदिग्ध रहते थे।

: १३ :

विजया दशमी

१९ अक्टूबर सन् १८१८ का दिन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण था। इस दिन विजया दशमी थी। बहुत दिन बाद, वसई सन्धि के अवसाद की समाप्ति के चिन्ह इस दिन पूना में प्रकट हो रहे थे। पेशवा की आज्ञा से इस वार पूना में विजया दशमी का त्योहार बड़ी धूम-धाम से मनाया गया था। पेशवा ने अपनी सारी सेना की परेड देखने की आज्ञा दी थी। और इस समय सूर्य की प्रातःकालीन धूप में पेशवा के पचास हज़ार योद्धा

नए उत्साह और नई उमंगे लिए—अपने-अपने शस्त्र चमकाते हुए—और घोड़ों का करतब दिखाते हुए पूना के बाहर मैदान में एकत्रित थे। इस अवसर पर पेशवा ने अपने सब सेनापतियों को चारों ओर से बुला भेजा था।

सेना की पूरी परेड देखने के बाद पेशवा ने बापू गोखले को समूची सेना का अधिपति बना दिया। बापू गोखले का शरीर विशाल, आकृति सुन्दर, रंग गोरा और उठान वीरतापूर्ण थी। वह एक साहसी और दृढ़-निश्चयी पुरुष था। इसके साथ ही पेशवा का फर्माबर्दार सेवक और निर्भय योद्धा था। दुर्भाग्य यही था कि उसका स्वामी बाजीराय पेशवा न वीर था, न दूरदर्शी, न बात का धनी।

इस परेड के समय अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट को नहीं बुलाया गया था। इस समय अंग्रेज़ी सेना चारों ओर से पूना में चली आ रहीं थीं। मामला संगीन होता जा रहा था। एलफिंस्टन ने गवर्नर-जनरल को एक ख़रीता भेजा कि पेशवा अंग्रेज़ों के विरुद्ध फौजकशी कर रहा है, तुरन्त अधिक से अधिक अंग्रेज़ी सेना पूना भेज दी जाय।

३० अक्टूबर को बम्बई की आखिरी रेज़ीमेन्ट अंग्रेज़ों की छावनी में पहुँच गई और उसी दिन शाम को अंग्रेज़ी सेनाओं के जनरल स्मिथ और कर्नल बर्थ की कमाण्ड में शहर से चार मील की दूरी पर खिड़की में युद्ध सज्जा से तैनात कर दिया और उपयुक्त स्थानों पर छोटी बड़ी तोपें लगा दीं। पहले जनरल स्मिथ की सेना मैदान में पहुँची और उसके बाद कर्नल बर्थ की सेना उससे आ मिली। उधर सेनापति बापू गोखले अपनी सेनाएँ सन्नद्ध कर रहा था, किन्तु दूसरी ओर बाजीराव कभी एलफिंस्टन को और कभी उसके भेजे हुए दूतों को यह विश्वास दिला रहा था कि मैं अंग्रेज़ों से लड़ना नहीं चाहता हूँ और मैं उन्हें अपना परम हितैषी समझता हूँ।

तीन नवम्बर को एलफिंस्टन ने अपनी लाइट बटैलियन को आज्ञा दी कि वह पूना की ओर आगे बढ़े। जब पेशवा ने यह देखा तो उसने

अपनी सेना सुसज्जित होने की आज्ञा दी। ब्रिटिश रेज़ीमेन्ट के पास बिठोजी नायक को दूत बनाकर यह संदेशा भेजा कि पूना के पास अंग्रेज़ी सेना का जमाव बढ़ता जा रहा है। यह शंकनीय है, और परस्पर समझौते के विरुद्ध भी। इसलिए उचित है कि अंग्रेज बटैलियन की बढ़ी हुई संख्या को कम किया जाय और छावनी का स्थान पेशवा की इच्छानुसार बदल दिया जाय, अन्यथा हमारी दोस्ती समाप्त हो जायगी।

इस अल्टीमेटम का जवाब अंग्रेज़ी रेजीडेन्ट ने दिया कि अंग्रेज़ सरकार छावनी में जी चाहे जितनी सेना रख सकती है, पेशवा को उस पर ऐतराज करने का कोई हक नहीं।

"हम लड़ना नहीं चाहते, परन्तु यदि पेशवा की सेनाएँ आगे बढ़ेंगी, तो हम जवाबी आक्रमण करने के लिए मजबूर होंगे।"

यह खुली युद्ध घोषणा थी। और इस पर बापू गोखले ने घुड़सवारों का एक बड़ा दल ले कर अंग्रेज़ों की छावनी पर आक्रमण कर दिया। यह देख कर अंग्रेज़ रेज़ीडेन्ट छावनी छोड़कर पीछे हट गया, और मराठों ने अंग्रेज़ों की छावनी में आग लगा दी। अब खिड़की के मैदान में अंग्रेज़ों की सेना और मराठे आमने-सामने खड़े थे। पेशवा की सेना में बापू गोखले की कमान में १८,००० घुड़सवार, इतने ही पैदल और चौदह तोपें थीं। अंग्रेज़ों की सेना में पाँच हज़ार हिन्दुस्तानी सिपाही और एक हज़ार यूरोपियन सिपाही थे। अब मराठा राज्य के भाग्य का फैसला इसी क्षेत्र में होने वाला था।

: १४ :

पार्वती शिखर पर

संगम के पास से पूना नगर पर दृष्टि डालने वाले को इस सुन्दर प्रदेश में सब से आकर्षक पार्वती पर्वत शिखर प्रतीत होगा—जहाँ एक मन्दिर पार्वती का बना हुआ है। सम्भवतः पार्वती के इस प्राचीन मन्दिर

ही के कारण इस शिखर को पार्वती का नाम दिया गया हो। पूना नगर की सीमा से कोई छह सौ गज़ के अन्तर पर पूर्वी-दक्षिण दिशा में यह पहाड़ी है। इसकी ऊंचाई भी दो सौ फ़ीट से अधिक नहीं है। इसी के नीचे से सिंहगढ़ को एक सड़क पथरीली टेढ़ी-मेढ़ी बल खाती हुई चली गई है। पहाड़ी के इस शिखर पर से पूना नगर और उसके आसपास का भव्य दृश्य बड़ा आकर्षक प्रतीत होता है। सामने ही सिंहगढ़ और तोरन के दुर्ग भी स्पष्ट दीख पड़ते हैं। जिन के साथ पिछले तीन सौ वर्षों का मराठों के उत्थान-पतन का इतिहास भी है। इन के अतिरिक्त दूर तक के मैदान का भाग भी दीख पड़ता है—जिस का मराठा इतिहास से गहरा सम्बन्ध है।

सूर्य धीरे-धीरे ढल रहा था। नवम्बर की पाँचवीं तारीख थी—जो मराठों की भाग्य रेख अंकित करने वाली थी। पेशवा बाजीराव पहाड़ी के उत्तरी क्षेत्र पर खड़ा—खिड़की से संग्रामस्थल की ओर उत्सुकता-पूर्वक देख रहा था। जहाँ बापू जी गोखले की कमान में उसके पचास हज़ार मराठे उसके संकेत की प्रतीक्षा में तोपों को बत्ती दिखाने खड़े थे। इस समय उसका मुख चिन्ता और उद्वेग से भरा था। अनेक मराठे सरदार उसके आसपास चारों ओर उसी भाँति उत्सुक और अस्थिर खड़े थे। पेशवा कभी अपने चरणों में पड़े पूना नगर को—कभी अंग्रेज़ों की विपुल वाहिनी को और कभी अपनी मराठा सेना की ओर देखा रहा था—जो धीरे-धीरे खिड़की की ओर अग्रसर हो रही थी। नीचे का सारा विस्तृत मैदान सैनिकों से भर रहा था। यह एक कठिन परीक्षा का क्षण था। यदि खिड़की के संग्राम में मराठों की सैना विजयी होती है तो वह एक बार फिर अपने बिखरे हुए मराठा संघ को सुगठित कर सकता है। उस में विवेक था—पर साहस नहीं। वह आराम तलब था। परन्तु यह क्षण उसके कर्मठ होने की परीक्षा का था। वह अभी भी कुछ निर्णय नहीं कर पा रहा था। अनेक बड़े-बड़े सरदार और सैनिक अफ़सर उसे घेर कर चारों ओर खड़े उसकी आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे थे। वाता-

वरण गम्भीर और वर्षोन्मुख बादलों जैसा हो रहा था। वह एक बार दूर तक फैले हुए पूना नगर पर दृष्टि डालता—जहाँ सुख-समृद्धि और जाहोजलाली के भण्डार भरे पड़े थे—जहाँ उसकी बाप-दादों की गद्दी थी—दूसरी ओर वे पहाड़ियाँ थीं, जहाँ सिंहगढ़ और तोरन के अजेय दुर्ग खड़े शिवाजी की कीर्ति का मौन सन्देश दे रहे थे। सामने अंग्रेज़ों की छावनी थी, जिसे मराठों ने हाल ही में जला कर राख कर दिया था। जहाँ से अभी भी धुँआ उठ रहा था। और उसी के पार उत्तर-पूर्व में खिड़की की वह युद्धस्थली दीख रही थी, जहाँ जगह-जगह पर अंग्रेज़ों की तोपें मराठा सत्ता का संहार करने की प्रतीक्षा में तैयार मुँह बाए सज्जित थीं—जिन के पीछे चालीस हज़ार अंग्रेज़ी सुसज्जित सेना खून की होली खेलने को सन्नद्ध खड़ी थी। वह सोच रहा था—क्या मुट्ठी भर अंग्रेज़ों का मुँह हम मराठे मोड़ कर समुद्र की ओर नहीं कर सकते ? क्या हम इन विदेशियों को समुद्र पार इन के देश में नहीं खदेड़ सकते ? क्या यह मराठा मण्डल का पुराना स्वप्न अब चरित्रार्थ नहीं हो सकेगा कि हिमालय से केप कमोरिन तक भगवा झण्डा फहरा दिया जायगा। परन्तु क्या आज ही हमारी भाग्य परीक्षा नहीं है ? क्या आज ही हमारे भाग्य का फ़ैसला होने वाला नहीं है। तब मैं यहाँ खड़ा क्या कर रहा हूँ। क्यों नहीं मैं शिवाजी की भाँति हाथ में तलवार ले कर मैदान में अपने मराठा वीरों के आगे खड़ा होता।

उसने तेज नज़र से अपने शरीर-रक्षक पाँच सहस्र मराठों की ओर देखा, जो इसी पहाड़ी पर उसकी पीठ पर शांत भाव से खड़े थे। उसकी दृष्टि सब ओर से घूम कर शरीर-रक्षक सेना के कप्तान गोविन्दराव गोखले के मुँह पर जम गई। जो एक लोहे के समान ठोस कठोर मुद्रा का तरुण था।

उसने अपना ज़री काम का पटका हवा में लहराया। फिर कहा—"गोखले, हो, हमारी तलवार हमें दे और हमारा घोड़ा मंगा, हम यहाँ क्या कर रहे हैं! हमें अपनी सेना के अग्र-भाग में जाकर उसका नेतृत्व

करना चाहिए ।"

तरुण मराठा अफसर आगे बढ़ा। उसने पेशवा की रत्न जटित तलवार दोनों हाथों में उठा कर नम्रता और उत्साह से कहा—"श्रीमन्त सरकार की जय हो। यह श्रीमन्त की यशस्वी तलवार है।"

तलवार नाजुक और लाखों रुपयों के मूल्य की थी। उसकी मूठ पर बहुमूल्य रत्न जड़े थे, उसे हथियार की अपक्षा एक ज़ेवर कहा जाना अधिक उचित था। पेशवा ने तलवार उठा कर म्यान से निकाल ली। पाँच हज़ार मराठों ने जोर से जयनाद किया। अभी पेशवा के मुँह से एक शब्द भी न निकलने पाया था कि अंग्रेज़ों का गुप्तचर यशवन्त राव घोरपाड़े हाथ जोड़े घुटनों के बल पेशवा के पैरों में गिर गया—उसने गद्गद् कण्ठ से कहा—श्रीमन्त सरकार, यह क्या आज्ञा दे रहे हैं। आप के पुण्य शरीर को यदि बन्दूक की एक गोली ने स्पर्श भी कर लिया तो हम कहीं के न रहेंगे। सारे मराठे बिना सिर के शरीर मात्र रह जाएँगे। जब तक एक भी मराठे के शरीर में एक बूँद खून है—आप श्रीमन्त को अपना जीवन खतरे में डालने की कोई आवश्यकता नहीं है।"

पेशवा सोच में पड़ गया। उसने अपनी तलवार इसी विश्वास घाती सरदार के हाथों में दे दी—और उसने उसे मखमली कोश में सावधानी से बंद कर पेशवा के चरणों में रख दिया।

पेशवा ने दीर्घ श्वास लिया। फिर उसने धीमी आवाज़ में कहा—'गोखले, दौड़ जा और अपने पिता सेनापति से कह—कि चाहे जो हो—वह लड़ाई में पहल न करे। आरम्भ अंग्रेज़ों ही की ओर से हो।

तरुण अफसर ने घोड़े पर सवार हो तुरन्त खिड़की की ओर प्रस्थान किया। पर उसने पेशवा की इस आज्ञा को पसन्द नहीं किया। वह पहाड़ी से उतर कर धीरे-धीरे चलने लगा। वह इस कायर आज्ञा को ले जाना अपमानजनक समझ रहा था। पर ज्योंही उसने पूना का काठ का पुल पार किया, एक विचार तेजी के साथ उसके दिमाग में दौड़ गया। उसने

घोड़े को ऐंड़ लगाई और पानीदार जानवर हवा में उछल कर सरपट दौड़ चला।

इस समय सूर्य की तेजी कम होती जा रही थी। धूप पीली पड़ गई थी। उसने तय किया था कि वह झूठ बोलेगा और अपने पिता को पेशवा का यह संदेश देगा कि वह तुरन्त अंग्रेज़ों पर आक्रमण कर दे, कि अंग्रेज़ों को रात के अन्धेरे में भागने की राह न मिले। उसके तरुण हृदय ने सोचा कि इस छोटे से झूठ को बोल कर वह पेशवा और मराठों की प्रतिष्ठा को सदा के लिए बचा लेगा। वह स्वयं या तो आज इस युद्ध में जूझ मरेगा या युद्ध जय करके मराठा-मण्डल की स्थापना में सुनाम कमाएगा। वह और भी उत्साह से हवा में नंगी तलबार घुमाता हुआ तेजी से मराठा सेना के हैडक्वार्टर की ओर दौड़ा जा रहा था।

उस समय पच्चीस सहस्र मराठे खिड़की समरांगण में सन्नद्ध खड़े थे। अनेक टुकड़ियों अग्रसर होती जा रही थी। और गनेश खण्ड तथा मूला नदी के बीच का सारा मैदान सैनिकों से भरा हुआ था। मराठों की यह सेना ज्वारकाल में समुद्री तूफान की भाँति गर्जन-तर्जन करती चली जा रही थी। घोड़ों की हिन-हिनाहट, तोपों के खींचने वाली गाड़ी के पहियों की घड़घड़ाहट, सैनिकों का शोर और उत्साहवर्धक नारों के अनमेल शब्द वायुमण्डल में भर थे।

कर्नलवर्र सातवीं देशी रेज़ीमेन्ट को लेकर आगे बढ़ा। उसके साथ गोरी बाम्बे रेजीमेन्ट भी थी। गोरी बाम्बे रेजीमेन्ट के सवारों ने आगे बढ़ कर गनेशखण्ड फ्रन्ट के मोर्चे पर अपनी स्थिति ठीक की।

इस सेना के दाहिने पार्श्व में मेजर फोर्ड अपनी बटेलियन के साथ, और वाम पार्श्व में सर एलफिस्टन अपनी रिजर्व सैना के साथ होल्कर-पूल के ठीक सम्मुख मोर्चा जमा कर खड़े हुए।

: १५ :

खिड़की-संग्राम

अभी एक पहर दिन शेष था कि गोविन्दराव गोखले घोड़ा फेंकता हुआ मराठा सेना के सेनापति अपने पिता बापू गोखले के सम्मुख जा पहुँचा। उसने घोड़े से कूद कर सेनापति का सैनिक अभिवादन किया। और पेशवा की यह आज्ञा सुनादी कि तुरन्त आक्रमण कर दिया जाय, जिससे अंग्रेज़ों को अंधेरे में भागने का अवसर न मिले। बापू गोखले भी अधीर हो रहा था। उसे पेशवा से ऐसी आज्ञा की आशा न थी। क्योंकि वह पेशवा की कमजोर तबियत को जानता था। अब इस आदेश से वह तन कर खड़ा हो गया। सब मराठे अफसर उसकी आज्ञा सुनने को उसके निकट आ जुटे। गोविंद गोखले ने कहा—बापू, पहला गोला मैं ही सर करना चाहता हूँ। बापू ने तुरन्त उसे मराठा तोपों का अध्यक्ष बना दिया और क्षण भर बाद अकस्मात ही नौ मराठा तोपें गर्ज उठीं। ये तोपें पूना की दिशा में खिड़ड़ी से दो मील के अन्तर पर जमाई हुई थीं और सब बड़ी तोपें थीं।

अभी तोपों की पहली बाढ़ दगी ही थी, और अंग्रेजी सेना अपनी स्थिति स्थिर न करने पाई थी—कि मराठा सवारों की टुकड़ियों ने दाएँ-बाएँ से एक साथ धावा बोल दिया। क्षण भर के लिए अंग्रेज़ी सेना में आतंक छा गया। परन्तु अंग्रेज़ों के सौभाग्य से शीघ्रता से धावा करने के कारण मराठों की पंक्ति का भंग हो गया। और वे बिखर गए। इस समय केवल मराठों की एक सुदृढ़ बैटालियन स्थिर व्यवस्थित थी जो एक पुर्तगीज सेनानी उ-पिटो की कमान में थी। मराठा योद्धा सूर्य की अस्तंगत धूप में अपनी तलवारें चमकाते और हर-हर महादेव का नारा बुलन्द करते दबादब अंग्रेजी सेना को दबोचते बढ़ते जा रहे थे। और अंग्रेजी सेना सावधानी से पीछे हट रही थी। निश्चय ही इस समय उन पर रण-रंग चढ़ा था, और वे जूझ मरने की भावना से ओत-प्रोत थे।

इस समय वे घरबार की चिन्ता से मुक्त थे।

पहली मार्के की मुठभेड़ उ-पिण्टो की पैदल बटालियन से हुई—जो अंग्रेज़ी सेना के वाम पार्श्व में सातवीं पैदल देशी रेजीमेंट को धकेलती हुई दबादब बढ़ती जा रही थी। शीघ्र ही अंग्रेज़ सेना के सिपाहियों ने अपनी पंक्तियाँ दृढ़ कर लीं और स्थिति को सम्हाला। अब वे दृढ़ता-पूर्वक मराठा-सेना का प्रतिरोध करने लगे। कदाचित उन्हें धोखा देने को—उनको दृढ़ता देख चालाक उ-पिण्टो ने अपनी बैटालियन को तीव्रता से पीछे हटने का आदेश दिया। उन्हें पीछे हटते देख—अंग्रेज़ी सेना ने उन पर धावा बोल दिया। जिस से वे अपने पीछे वाली गोरी रेजीमेंट से बहुत अन्तर पर आगे बढ़ आए। अब उनके और गोरी पल्टन के बीच एक खतरनाक अन्तर था। गोरी पल्टन केन्द्र में जमी थी। अंग्रेज़ों की वह खराब स्थिति तुरन्त ही उ-पिण्टो ने भाँप ली। और उसने तुरन्त बापू गोखले का ध्यान इस ओर आकर्षित किया। जो उस समय अंग्रेज़ों के वाम पार्श्व में अपने चुने हुए घुड़सवारों के साथ सुनहरी ध्वजा फहराता हुआ युद्ध की गतिविधि देख रहा था। उसके हाथ में नंगी तलवार थी। उसने तुरन्त नंगी तलवार को हवा में घुमा कर सिंह की भाँति दहाड़ कर अपने सैनिकों को ललकारा—कि वे शत्रु की पंक्ति को भंग करके उन्हें दो भागों में काट दें और उनके तथा गोरी पल्टनों के बीच के खाली स्थान को अधिकृत कर लें।

अभी वाक्य पूरा नहीं हुआ था कि इसी समय एक गोली उसके घोड़े को लगी, वह उछला और सेनापति को भूमि में पटक दिया—परन्तु उस के मराठा नायकों और उसके पुत्र ने उसका आदेश समझ लिया था—और वे बिजली की भाँति लपक कर शत्रु की सेना को चीरते हुए उन में घुस गए। सम्पूर्ण अंग्रेज़ी सेना में आतंक छा गया था। यह एक आकस्मिक निर्णायक क्षण इतना शीघ्र आ उपस्थित हुआ था कि अंग्रेज़ हक्का-बक्का हो गए। इस समय यदि मराठे सातवीं देशी रेजीमेंट और यूरोपियन रेजीमेंट के मध्यवर्ती स्थान को अधिकृत कर लेते तो अंग्रेज़ी

सेना को बच निकलने का ठिकाना ही न था। परन्तु इस समय कर्नल वर्र ने असाधारण धैर्य का परिचय दिया, और उसकी देशी रेजीमेंट ने भी असम वीरत्व और नमकहलाली का हक़ अदा किया—मराठों के दुर्भाग्य से भूमि भी वहां सम न थी। इसके अतिरिक्त वाम पार्श्व में एक बड़ा दलदली मैदान था। जिसका पता न मराठों को था—न अंग्रेज़ों को। आक्रमण-कारी मराठे इस दलदल में फंस गए। वे आते गए और फंसते गए। इस बीच अंग्रेज़ी सेना को सुरक्षा और जवाबी आक्रमण का सुअवसर मिल गया। पीछे आने वाली मराठी सैन्य को इस दैवी दुर्भाग्य का कुछ भी पता न था। वे बराबर तेज़ी से आगे बढ़े आ रहे थे, बस ज्यों ही वे अंग्रेज़ी तोपों की मार में पहुँचे—अंग्रेज़ी तोपों ने उन पर आग उगलनी आरम्भ कर दी। उधर कर्नल वर्र को अपनी अंग्रेज़ बटालियन को आगे बुला लेने का अवसर मिल गया; उसने बड़ी तत्परता और धैर्य से काम लिया। उसकी बटालियन उ-पिण्टो की सेना से जमकर लोहा ले रही थी। इसमें सुशिक्षित और उत्कृष्ट सैनिक थे। इसके अतिरिक्त अंग्रेज़ रिज़र्व सैन्य के सुशिक्षित माने हुए घुड़सवार उनकी पृष्ठ-रक्षा के लिए दबादब आगे बढ़ते आ रहे थे। इस परिस्थिति में वह कठिन क्षण टल गया। और मराठों का धसारा अवरुद्ध हो गया। एक दो प्रभावशाली चार्ज होने के बाद, जिन में अंग्रेज़ी तोपों ने उन्हे बहुत हानि पहुँचा दी थी, उन्होंने हिम्मत हार दी, और वे पीछे मुड़े। जाते हुओं की सब से पिछली पंक्ति में तरुण गोविन्द-राव गोखले था। जो शीघ्र ही इस भागती हुई सैन्य से पृथक् हो गया। और खिन्न भाव से अपने पिता के पार्श्व में जा खड़ा हुआ। जो इस क्षणिक युद्ध में पासा पलट जाने से दुःखित और क्रुद्ध खड़ा था। मराठा सैनिक अब अव्यवस्थित हो कर भाग रहे थे। और अंग्रेज़ी सेनाएँ व्यव-स्थित रूप से युद्ध-स्थली में महत्वपूर्ण स्थलों को दख़ल करती जा रही थीं। आश्चर्य की बात तो यह थी कि यह महत्वपूर्ण ऐतिहासिक संग्राम एक घण्टे से भी कम समय में समाप्त हो गया। कठिनाई से इस युद्ध में पाँच सौ मराठा वीर खेत रहे। अंग्रेज़ों की हानि तो इससे भी बहुत कम

हुई। मराठा वीरों को 'हम युद्ध में खेत रहे' यह सही अर्थों में नही कह सकते। क्योंकि उन में अधिकांश दलदल में जा फंसे थे, जो जीवित नहीं निकल सके।

आश्चर्य की बात यह थी कि मराठों ने फिर दुबारा आक्रमण का साहस ही नहीं किया। बापू गोखले के पास अभी भी काफी सेना थी। परन्तु एलफिन्सटन की सेना का साहस और नियंत्रण ऊँचे दर्जे का था। अंग्रेज़ तोपची अत्यन्त कुशल और तेज थे। इस युद्ध की महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि किसी भी स्थान पर दस मिनिट से अधिक जम कर लड़ाई नहीं हुई। आगे बढ़ने, पीछे हटने और तोपो के गोले फेंकने ही में रात हो गई। और सूर्यास्त होते-होते उस दिन का युद्ध समाप्त हो गया।

: १६ :

पूना का छत्र भंग

खिड़की संग्राम के बाद कुछ दिन दोनों सेनाएं चुपचाप पड़ी रहीं। युद्ध की दृष्टि से यह चुप्पी अंग्रेज़ों के लिए लाभदायक और मराठों के लिए हानिकर थी। अंग्रेज़ों को इस से दूर-दूर से कुमक़ मंगाने का अवसर मिल गया। १६ नवम्बर को अंग्रेज़ सेना ने नदी पार करके पूना की ओर कदम बढ़ाया। मराठा सेना ने उनका अवरोध किया—पर सफलता नहीं मिली। जब वाजीराव को यह सूचना मिली तो वह अपना शिविर छोड़ कर दक्षिण की ओर भाग निकला। बापू गोखले और दूसरे सरदारों ने दूसरे प्रातः काल तक प्रतीक्षा की। परन्तु पेशवा के भाग जाने पर उन्हें पूना में रहना व्यर्थ प्रतीत हो रहा था। इस लिए वह भी पूना का रण-क्षेत्र अंग्रेज़ों के लिए छोड़ कर पीछे हट गए। अंग्रेज़ों ने बिना खून-खराबी के पूना अधिकृत कर लिया। और इस समय विश्वासघाती वाला जी पन्तनाटू दोसों अंग्रेज़ी घुड़सवारों को लेकर पूना में प्रविष्ट हुआ। और

उसने सबसे आगे बढ़ कर अपने हाथ से पेशवा के महलों पर ब्रिटिश झंडा फहरा दिया।

अब कायर बाजीराव ऐसे भाग रहा था जैसे हिरण शिकारी के आगे भागता है। और अंग्रेज़ उसके पीछे शिकारी की तरह भाग रहे थे, उसे लथेड़ते हुए। बाजीराव अकेला नहीं भाग रहा था। बापू गोखले और उसकी सारी सेना भी उसके साथ ही भाग रही थी। पहले वह कर्नाटक की ओर भागा—पर आगे उसे अंग्रेज़ी सेनाओं द्वारा रास्ता बन्द मिला। वह लौट कर शोलापुर की ओर चला, परन्तु शोलापुर पहुँचने से प्रथम ही अंग्रेज़ सेनापति स्मिथ ने अष्टिगाँव में उसे जा घेरा। एक बार फिर लड़ाई हुई। पर जो मराठे खिड़की से पांव उखाड़ चुके थे—वे यहाँ क्या यश कमाते। वे शीघ्र ही भाग खड़े हुए। भागने वालों में सर्व प्रथम पेशवा था, जो पालकी में सवार हो कर भाग रहा था। उसकी स्त्रियां मर्दाना वेश धारण कर के निकल भागीं। तब तक वीर गोखले बापू अपनी घुड़ सवार सेनाओं से अंग्रेज़ों की राह रोकने की चेष्टा करता रहा। उसने डट कर लोहा लिया और जनरल स्थिम को युद्ध में घायल कर दिया। परन्तु इसी समय नई अंग्रेज़ी सेना पहुँच गई। एक बार खूब घमासान युद्ध हुआ जिसमें मराठों का अंतिम सेनानी बापू गोखले खेत रहा। उस के मरते ही मराठा सेना के जिधर सींग समाए उधर भाग निकले।

अब पेशवा भागा-भागा फिर रहा था और अंग्रेज़ उसका पीछा करते—तथा देश दखल करते जाते थे। जो मराठे सह्याद्रि से अटक तक भगवा झण्डे की स्थापना का स्वप्न देखते रहे थे—वे अब पूना का छत्र-भंग होने पर टूटे नक्षत्र की भाँति बिखरते जा रहे थे।

अप्रैल में सीपीनी स्थान में और एक मुठभेड़ पेशवा के सैनिकों और अंग्रेज़ों में हुई। पर यह युद्ध न था। युद्ध आरम्भ होते ही पेशवा घोड़े पर सवार होकर भाग निकला। इसके बाद मराठे भी भाग खड़े हुए।

अब पेशवा की भागने की हिम्मत भी जवाब दे गई और दस मई को उसने अंग्रेज़ों के कम्प में अपने दूत भेज कर प्रार्थना की—कि अंग्रेज़

उसे एक बार फिर पूना की गद्दी पर बैठा दें तो वह जन्म-जन्मान्तर तक अंग्रेजों का परम मित्र बना रहेगा। परन्तु अंग्रेज़ों के जनरल ने स्पष्ट कह दिया--कि अब पेशवा को गद्दी की आशा त्याग देनी चाहिए और शीघ्र से शीघ्र अंग्रेज़ी कैम्प में आकर बिना शर्त आत्म समर्पण कर देना चाहिए और बन्दी हो जाना चाहिए। बाजीराव ने और कुछ दिन हाथ-पैर मारे—पर अन्त में उसने अंग्रेज़ी सेना के कैम्प में जाकर बन्दी होना स्वीकार कर लिया। और उसने सरजान मालकम को आत्म समर्पण कर दिया। अंग्रेज़ी सरकार ने उसे कानपुर के निकट विठूर में रहने की आज्ञा दे दी और आठ लाख रुपया वार्षिक पेंन्शन नियत कर दी।

आगे उसने अपने जीवन के तीस वर्ष विठूर ही में काटे। यह विठूर का बन्दी यहाँ कुछ तकलीफ में न था। उसे आठ लाख रुपया वार्षिक पेंनशन मिलती थी—वह ऐश में जीवन व्यतीत करता था। यहाँ यहाँ आने से पूर्व वह छह विवाह कर चुका था, अब यहाँ आने पर उसने पाँच विवाह और किए। रंग रलियों का शौकीन था। उसकी पैंशन में हिस्सा बटाने को बहुत से खुशामदी चरित्र-हीन लोग उसके पास आ जुटे थे - और उनकी सोहबत में वह अपने दिन काट रहा था।

: १७ :

मराठा शाही का अन्त

सिंधिया से राजपूताना छीना जा चुका था। और पेशवा की गद्दी का भी खात्मा हो चुका था। गायकवाड़ अंग्रेज़ों की अधीनता स्वीकार कर चुका था। अब केवल दो मराठा राज्य शेष रह गए थे। भोंसले और होल्कर। इस समय केवल नागपुर शहर ही भोंसलों की अधीनता में था। वहाँ भी विश्वासघातियों और रिश्वतखोरों का बाज़ार गर्म था। राघो जी भोंसला जब तक रहे, अंग्रेजों की दाल न गली। पर उनके उत्तराधिकारी अप्पा जी सब-सीडीयरी संधि के जाल में फंस गए। उन्हें अंग्रेज़

हर तरह कसते ही गए। अन्त में भोंसले के ही ख़र्च पर रक्खी गई—सब-सीडीयरी सेना ही से भोंसले का राज्य हड़प लिया गया। इस काम में विश्वासघातकों और रिश्वतख़ोरों ने सेना की अपेक्षा अधिक महत्व का काम किया। भोंसले का राज्य एक प्रकार से अंग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया, और अप्पा साहेब एक नज़रबन्द की भाँति अपने महल में रहने लगे। अभी अप्पा साहेब की आयु केवल २२ वर्ष की ही थी। वह हेस्टिंग्स को अपना बाप और रेजीडेण्ट जेनकिन्स को अपना बड़ा भाई कहा करता था। अप्पा साहेब ने अपने बचे-खुचे अधिकार भी कम्पनी को देकर—कुछ पेन्शन लेने की इच्छा प्रकट की—परन्तु अंग्रेजों ने यह स्वीकार नहीं किया। और उस पर बाला जी की हत्या का इल्जाम लगा कर उसे गिरफ्तार कर के कैद कर लिया। उसे कैद कर के इलाहाबाद के क़िले में भेज दिया गया। और नागपुर की गद्दी पर राघोजी भोंसले का एक दुधमुँहा नाती बैठा दिया गया और राज्य का सारा प्रबन्ध एक अंग्रेज रेजीडेन्ट के हाथों में सौंप दिया गया।

अप्पा साहेब इलाहाबाद जाते हुए रास्ते से भाग निकला और अनेक झगड़े-टंटे करते हुए जोधपुर के एक मन्दिर में शरणापन्न हुआ—वहीं उसका प्राणान्त भी हुआ।

होल्कर का राजवंश वेल्ज़ली की चोट से बच निकला था, इस समय वहाँ का प्रबन्ध मन्त्री गणपतराव कर रहा था, जो मृत राजा की रखैल तुलसीबाई के प्रभाव में था। गद्दी का अधिकारी मल्हारराव अभी बालक था। नमकहराम अमीर खाँ पिण्डारी अभी होल्कर राज्य पर पंजा रखे हुए था। बाजीराव के पतन के एक वर्ष प्रथम ही मन्दसौर की सेना में होल्कर राज्य सही अर्थों में अंग्रेज़ों की दासता में बंध चुका था। यही हाल कोल्हापुर राजवंश का था। सिंधिया तो इससे बहुत पहले परकैंच हो चुका था। इस प्रकार इस समय सम्पूर्ण मराठा मण्डल अंग्रेज़ों की दासता में बंध चुका था। अब अंग्रेज़ों ने मराठा मण्डल तथा पेशवा के सब दुर्ग अधिकृत कर लिए। इनमें अनेक अभेद्य थे, ख़ास कर त्र्यम्बक

का दुर्ग तो उस काल में संसार भर में अद्वितीय था। सन १८१६ में जब असीरगढ़ के दुर्ग का पतन हुआ, जिसने शताब्दियों तक मुस्लिम आक्रान्ताओं के दाँत खट्टे किए थे। तब समझा गया—मराठों की अजेय और विश्व विश्रुत दुर्गावलि अंग्रेज़ों के हाथ में चली गई।

इससे पूर्व दो बार मराठा संघ संकट में पड़ चुका था। पहली बार उस समय, जब शिवाजी का अयोग्य पुत्र सम्भाजी शिवाजी के क्रोध का शिकार बना। सम्भाजी चाहे जैसा भी अयोग्य सरदार था—पर उसके बिना मराठा शक्ति सिर रहित धड़ के समान हो गई थी, फिर भी वह इतनी प्रबल थी कि औरंगज़ेब को उसे दमन करने में और उस परिस्थिति से लाभ उठाने में अपनी समूची सैन्यशक्ति दक्षिण में झोंक देनी पड़ी थी। परन्तु शिवाजी ने जो सुन्दर राज्य संगठन किया था, उसके कारण मराठा राज्य संघ उस संकट को पार कर गया था।

इसके बाद जब पानीपत के खण्ड प्रलय ने मराठा शक्ति को तोड़ डाला, उस समय दिल्ली की गद्दी पर या कहीं भी कोई एक भी महत्वाकांक्षी हिन्दु या मुसलमान शासक होता तो मराठों का उस विपदासे निस्तार न था। परन्तु उस समय दिल्ली का सिंहासन वीरविहीन हो चुका था, इसी से मराठा संघ बच गया। अब यह तीसरी टक्कर थी जो मराठा शक्ति को इंगलैंड की बढ़ती हुई सामर्थ्य से लगी थी। दो टक्करें उसने अपनी सामर्थ्य से सहीं, पर तीसरी ने उसे चकनाचूर कर दिया। जिससे शिवाजी का भारत भर में हिन्दुपत पातशाही स्थापित करने का और पेशवा बाजीराव प्रथम का अटक से कटक तक भगवा ध्वज फहराने का स्वप्न भंग हो गया।

शिवाजी ने अष्ट प्रधानों के रूप में मराठा संघ का संगठन किया था, जो आगे मराठा संघ के रूप में परिवर्तित हो गया। ये मराठा संघ के अधिपति आपस में किसी ऐसे वैधानिक सूत्र में गुथे न थे जिनसे उनका अंततः संगठन कायम रहता। वे कहने को तो मराठा संघ के सदस्य थे, पर सब प्रकार संधि विग्रह करने में स्वतन्त्र थे। पानीपत के खण्ड

प्रलय से प्रथम तक पेशवा का उन पर हाथ रहा, पर पानीपत के बाद वे बिखर गए और अंततः वे स्वतन्त्र शासक हो गए। मराठों का संघर्ष जब तक मुसलमानों से हुआ, उन्हें कोई हानि नहीं पहुँची, क्योंकि मुसलमानों की सामर्थ्य भी सशक्त न थी, परन्तु ज्योंही उन्हें अंग्रेज़ों की बढ़ती हुई शक्ति से टकराना पड़ा, वे ढह गए। अंग्रेज़ों की प्रबल शक्ति से वे टक्कर न ले सके।

एक बात और। शिवाजी ने और उनके बाद बालाजी बाजीराव आदि नेताओं ने मराठा शाही को हिन्दुत्त्व के रक्षक का रूप दिया था, इससे उसे हिन्दु राज्यों से गहरा सम्पर्क और समर्थन प्राप्त हुआ था। परन्तु वह देर तक टिका नहीं। ख़ास कर पानीपत के युद्ध के बाद तो राजपूत और जाट राजाओं के मन में मराठों के प्रति विद्वेष की भावना भर गई। वे क्रुद्ध हो कर लौटे। बाजीराव यदि इन देश के अन्य हिन्दु शासकों के के साथ सक्रिय सहयोग उत्पन्न कर लेता, तो निश्चय ही उसके ऊपर वह संकट न आया होता, जो खिड़की संग्राम के बाद उस पर आया, और वह ऐसा असहाय भी न रह जाता कि उसकी सहायता के लिए किसी राजा ने हाथ न बढ़ाया। इसके अतिरिक्त यदि उसकी राजनीतिक आँखें होतीं तो वह यह देख पाता कि ज़बर्दस्त तोपखाने और नियन्त्रित सेना के बिना अंग्रेज़ों से जीतना सम्भव नहीं है तो उसे राज्य की सम्पूर्ण शक्ति तोपखाने और शिक्षित सेना की तैयारी में लगा दी होती। परन्तु उसने अपनी सारी शक्ति आपसी घरेलू झगड़ों में नष्ट कर दी।

और भी दो बातें थीं, जिन्होंने मराठा शक्ति को जर्जर कर दिया था। एक तो हिन्दुओं के धार्मिक भेदभावों ने लोगों के मनों को छिन्न-भिन्न और एक-दूसरे का विरोधी बना दिया था। जिससे भीतर ही भीतर हिन्दु शक्ति बिखर चुकी थी। बाजीराव जैसा कायर, आरामतलब और अदूरदर्शी आदमी इस त्रुटि को कैसे दूर कर सकता था।

दूसरी बात थी आर्थिक सम्पन्नता की। महाराष्ट्र की पहाड़ियाँ कष्ट सहिष्णु मराठा योद्धाओं के लिए तो उपयुक्त थीं, पर साम्राज्य का

मूलाधार धनागार वहाँ सम्पन्न नहीं हो सकता था। इसी से शिवाजी आदि छापे मार कर पड़ौसी राज्यों से धन अपहरण करते तथा पेशवा चौथ वसूल करते थे। लूट-सरदेशमुखी और चौथ का असल कारण ही यह था कि मराठा शक्ति का आर्थिक ढाँचा उन्हीं पर चल रहा था। अब अंग्रेज़ी सत्ता के प्रताप से यह सब असम्भव हो गया। अब लूट-मार, सरदेशमुखी, चौथ वसूल करने का स्रोत सूख गया। उधर बड़ी २ सेनाओं को रखने, उन्हें सुशिक्षित करने, उन्हें उत्तम शस्त्रास्त्रों के सज्जित करने के लिए जितने धन की आवश्यकता थी, उतना धन पेशवा के पास न था, न वैसी आय का साधन ही था। इसी से पेशवा के पाँव डगमगा गए, और अब अन्तिम नाममात्र के धक्के से वह ढह गया।

: १८ :

शक्ति-सन्तुलन के बीस बरस

सन् १८१३ में जो चार्टर एक्ट ब्रिटिश पार्लमेंट ने भारत के अन्दर ईस्ट इंडिया कम्पनी के अधिकारों को क़ायम रखने के लिए पास किया था, उसके द्वारा भारत के प्राचीन व्यापार और उद्योगों को किस तरह तहस-नहस कर डाला गया, इसका यत्किंचित् उल्लेख हमने पिछले किसी परिच्छेद में किया है। उसके बाद सन् ३३ में जबकि लार्ड विलियम बैंटिक का शासन चक्र घूम रहा था, पास किया गया। इन बीस वर्षों के बीच में जो परिवर्तन भारत और इंग्लिस्तान में हुए, वे ऐसे महत्त्वपूर्ण थे, जिनका आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक प्रभाव समूचे विश्व पर पड़ा। इन बीस वर्षों में खास तौर पर ग्रेट ब्रिटेन विश्व का आर्थिक स्वामी और संसार के सबसे बड़े भारी साम्राज्य का प्रतीक बन गया। और भारत ने अपनी शताब्दियों से संचित सम्पदा, राज्य और उद्योग तथा संस्कारों और उसके सांस्कृतिक प्रभावों को खो दिया। भारतीय साम्राज्य, भारत की लूट और भारत के उद्योग धन्धों के नाश की प्रतिक्रिया स्वरूप

इंगलैंड के उद्योग-धन्धे और व्यापार ने ऐसी उन्नति कर ली-कि वह भारत का सम्राट बनने से पहले ही संसार का अर्थ सम्राट बन गया। देखते ही देखते इन बीस बरसों में इंग्लैंड में बड़े-बड़े समृद्ध नगर आबाद हो गए, और धन की ऐसी बाढ़ इंग्लिस्तान में आई कि लोगों के हौंसले बढ़ गए, परन्तु ज्यों-ज्यों इंग्लैंड की समृद्धि बढ़ी और प्रजा के अधिकारों की वृद्धि हुई, भारत की दरिद्रता और पराधीनता उतनी ही अधिक बढ़ गई। और यह एक निश्चित बात हो गई कि भारत की दरिद्रता में इंग्लिस्तान की समृद्धि और भारत को समृद्धि में इंग्लैंड को ख़तरा। ठीक ऐसे ही समय में सन् ३३ का नया चार्टर एक्ट बना, जिसके द्वारा भारत के ऊपर अंग्रेज़ी शासन का आर्थिक भार बहुत अधिक बढ़ गया। अंग्रेज़ों ने भारत से धन बटोरने के लिए बेहद कर बढ़ा दिए। ये बीस बरस और उसके बाद के भी बीस बरस भारत की अंग्रेज़ी सरकार को निरन्तर युद्धों में व्यतीत करने पड़े। यद्यपि यह युद्ध न तो भारतवासियों की रक्षा के लिए थे, न उनकी भारत को आवश्यकता थी। वास्तव में ये युद्ध उस शासन पद्धति के अनिवार्य परिणाम थे, जो सन् ३३ के चार्टर एक्ट में क़ायम की गई थी। इन युद्धों से इतना ही नहीं कि भारतीय जीवन का विकास रुक गया, अपितु भारत की सुख शान्ति में भी बेहद बाधा पड़ी। इस बीच अंग्रेज़ी सरकार की कुल आमदनी का आधे से भी अधिक भाग युद्ध और सेना पर ख़र्च होता रहा। जबकि इस काल में अंग्रेज़ी सरकार ने सार्वजनिक हित के कामों पर केवल दो प्रतिशत ख़र्चा किया।

इस समय समूचे ब्रिटिश भारत में साधारण प्रजा की अवस्था अत्यन्त दयनीय हो गई थी। किसानों का लगभग सर्वनाश हो गया और पुराने ख़ानदान ग़ारत हो गए। बड़े-बड़े और महंगे क़ानून प्रचलित किए—गए, अदालतों की कार्यवाही पेचीदा कर दी गई और खर्च बढ़ाकर असह्य कर दिए गए। कम्पनी की उस समय की समस्त भारतीय प्रजा के लिए जो न्याय के लिए सरकार को टैक्स नहीं दे सकते थे, अदालतों के दरवाज़े बन्द थे। उनके लिए न क़ानून था, न इन्साफ़। उस काल की पुलिस अत्या-

चार का एक नमूना थी। गांवों की पंचायतों का नाश कर डाला गया था, और वहाँ के स्कूल तोड़ डाले गए थे। उनकी जगह कोई नए स्कूल क़ायम नहीं किए गए थे। तत्कालीन कम्पनी की सरकार दो करोड़ बीस लाख की आबादी में से सिर्फ़ डेढ़ सौ विद्यार्थियों को ही शिक्षा देती थी, जबकि भारत की टैक्सों की वसूली में से कम्पनी के डायरेक्ट इन दिनों में ५०००० पाऊंड से भी अधिक रक़म केवल दावतों पर खर्च कर देते थे। सब बड़ी-बड़ी नौकरियां अब अंग्रेज़ों के लिए सुरक्षित रख लीं गईं थीं, और शासन में विश्वास और ज़िम्मेदारी के काम पर किसी हिन्दुस्तानी को नहीं रखा जाता था। हक़ीकत तो यह थी कि भारतीय जो उस समय सुसभ्य जीवन के सब धन्धों में कुशल थे, अयोग्य, असहाय और नालायक कह कर सदा के लिए उसी देश में नीच बना दिए गए थे, कि जहाँ उनके पूर्वजों ने जगत प्रसिद्ध और अमर सांस्कृतिक जीवन व्यतीत किए थे, उन्हें ज़बर्दस्ती शराबी और दुराचारी बनाया जा रहा था। सन् ३३ के इस चार्टर एक्ट के पास होने के बाद अंग्रेज़ बड़ी तेज़ी से रही सही देसी रियासतों को अंग्रेज़ी राज्य में मिलाने में व्यस्त थे।

मराठा संघ टूट चुका था। उसका केन्द्र पूना अंग्रेज़ों के अधिकार में आ गया था। पूना के महलों पर अंग्रेज़ों का झण्डा फहरा रहा था। पेशवा बिठूर में क़ैदी था। सिंधिया और होल्कर के दम-ख़म ख़त्म हो चुके थे। राजपूत राजा अंग्रेज़ों की छत्र छाया में आ चुके थे। इस प्रकार भारत की प्राय: सब राजनैतिक शक्तियाँ या तो अंग्रेज़ों की प्रभुता को मान चुकीं थीं—या उनकी मित्र हो चुकी थीं। रामेश्वरम् से लेकर दिल्ली तक के सभी मुख्य केन्द्रों में अंग्रेज़ी सेना की छावनियाँ छाई हुई थीं। और अब ब्रिटिश हुकूमत को हिलाना आसान न था। राजपूताने पर आँख जमाए रखने के लिए अजमेर अलग प्रदेश बना दिया गया था। जिस पर सीधा अंग्रेज अफ़सर शासन करता था। लार्ड हेस्टिंग्स की विजय-वैजयन्ती अब भारत के इस छोर से उस छोर तक फहरा रही थी। पूना का छत्र-भंग करने के उपलक्ष्य में उसे कम्पनी के डायरेक्टरों ने साठ लाख पौण्ड

नक़द इनाम दिया था। सौभाग्य से हेस्टिंग्स को स्टुअर्ट एलफिन्स्टन जैसे कूटनीतिज्ञ और इतिहास मर्मज्ञ, सर चार्ल्स मैटकाफ जैसे राजनीति और व्यवस्था-शास्त्र के आचार्य, सर जानमालकम और सर टामस मनरो जैसे योग्य सहायक मिले थे। जिन की सहायता से हेस्टिंग्स ने बंगाल-मद्रास और दिल्ली में अपना शासन और दबदबा कायम कर लिया था।

पूना का छत्र-भंग होते ही पिण्डारी अपने आप ही तितर-बितर हो गए। कुछ घेर कर मार डाले गए। अमीर ख़ाँ को अंग्रेज़ों ने टोंक का नवाब बना दिया। अमीर खाँ ने भी अंग्रेज़ों की अधीनता स्वीकार कर ली। चीतू जंगल में मारा गया, जहाँ उसे कोई बाघ खा गया। शेष पिण्डारी—जहाँ जिसे जगह मिली चुपचाप बस गए और शान्त शिष्ट कृषक बन गए। इस प्रकार शक्ति का सन्तुलन करके प्रत्यक्ष रूप में अंग्रेज़ शान्ति की चोटी पर ब्रिटिश झण्डा फ़हरा कर अपनी विजय पर गर्व कर रहे थे, परन्तु अभी कम्पनी के राज्य की भीतरी दशा अत्यन्त शोचनीय थी। भारतवासियों की उस समय की नैतिक निर्बलता और अंग्रेज़ों की धूर्तता मिश्रित संगठन शक्ति के परस्पर सम्पर्क से जो परिस्थिति उत्पन्न हो गई थी, वह इतनी अस्वाभाविक थी कि उस पर कुछ भी भरोसा नहीं किया जा सकता था। अंग्रेज़ों की संख्या भारत में बहुत कम थी। उसकी पूर्ति अंग्रेज़ पड़ोसियों की उस मैत्री भावना से पूरा कर सकते थे, जो उनकी न्याय बुद्धि और नर्म व्यवहार से प्राप्त होती। परन्तु वह मैत्री भावना भारत में अंग्रेज़ों के प्रति कहीं थी ही नहीं। युद्धों में चाहे भी जिस तरह उन्होंने सफलताएँ प्राप्त की थीं परन्तु पराजित लोगों के दिल शत्रुता से भरे हुए थे। और षड्यन्त्र और विरोध का वातावरण उनके विरुद्ध चाहे जब उठ खड़ा हो सकता था।

परन्तु अंग्रेज़ों को इसकी परवाह न थी। वे अपनी शक्ति का सन्तुलन करते जा रहे थे, भूत-भविष्य की ओर उनकी दृष्टि न थी। पूना का छत्र भंग करके—रणजीतसिंह और काबुल से साठ-गाँठ करके, दिल्ली के तख़्त की जड़ें खोखली करके, नेपाल को दूर धकेल कर अब उन्होंने

होशियारी से अपने चारों ओर देखा कि अब यह हमारा मारा हुआ शिकार हिन्दुस्तान हमारे खाने के लिए सुरक्षित है भी। कहीं से कोई खटका तो नहीं है, तो उन्हें एक दरार दिखाई दी।

जिस समय अंग्रेज़ पूना में उलझ रहे थे, बर्मा के तरुण राजा ने उकस कर मनीपुर और आसाम को जीत कर अपने राज्य में मिला लिया था। जिस से बर्मा राज्य की सीमाएँ अब बंगाल को छू रही थीं। और बर्मा का राजा जो अंग्रेज़ों के शक्ति सन्तुलन से बेखबर था—बंगाल पर ललचाई नज़र डाल रहा था। बंगाल अधिकृत करने के बाद से ही अंग्रेज़ आसाम और मनीपुर पर नज़र रख रहे थे। और अब बर्मा के राजा ने मानो उनके मुँह का ग्रास छीन लिया था। परन्तु अभी वे दक्खिन में उलझ रहे थे। फिर भी उन्होंने कुछ बदमाश पेशेवर डाकुओं को इस काम पर नियत कर दिया था कि वे बर्मा की सीमाओं में घुस कर लूट-मार करके अंग्रेज़ी राज्य में आश्रय लें। इस पर बर्मा के राजा ने अंग्रेज़ों को विरोध-पत्र लिखा—अपराधियों को माँगा, और जब अंग्रेज़ों ने कोई सन्तोषजनक जवाब नहीं दिया तो बर्मा के राजा ने कहा—चूँकि अंग्रेज़ सरकार बंगाल की सीमा से बर्मा पर आक्रमण करने वाले अपराधियों को नहीं रोक सकती, तो वह चटगाँव—ढाका, मुर्शिदाबाद और क़ासिम बाज़ार बर्मा सरकार को दे दे।

बस, यही लड़ाई का बहाना हो गया। दक्षिण से अंग्रेज निबट चुके थे, और अब उन्होंने बर्मा से लोहा लेने की ठान ली। बहुत संघर्ष हुआ। अन्त में सन् १८२६ में बर्मा सरकार ने घुटने टेक दिए—आसाम और मनीपुर अंग्रेजों को दे दिए गए तथा अराकान पर भी अंग्रेजों का अधिकार हो गया। इस प्रकार अंग्रेजों ने बर्मा के राजा को बर्मा की सीमा में परिमित करके साँस ली। परन्तु इस युद्ध में अंग्रेजों को अपरिमित धन खर्च करना पड़ा।

इसी समय अंग्रेजों ने भरतपुर का क़िला दखल करके अपना आखिरी काँटा भी निकाल डाला।

: १९ :

लार्ड मैकाले के विचार

कलकत्ते की कौंसिल भवन में दो बड़े आदमी आराम से बैठे हुए गप्पें मार रहे थे। मौसम बहुत अच्छा था। आषाढ़ का पहला मेह बरस चुका था। हवा में गीली मिट्टी की सोंधी महक आम की अमराइयों में होकर तबीयत खुश कर रही थी। बंगाल के मौसम का यह वातावरण बड़ा ही लुभावना होता है। ठंडी हवा चल रही थी, और आम के सघन पत्तों में गिरते हुए सूरज की सुनहरी धूप छन कर समूचे वातावरण को रंगीन बना रही थी।

दोनों आदमी अंग्रेज़-कुल-शिरोमणि, लार्ड खानदान के बड़े आदमी थे। इस समय वे सब कामों से फारिग़ होकर शाम को चाय पीने के बाद बंगले के बाहर लान में आराम कुर्सियों पर बैठे हुए इत्मीनान और बेफिक्री से दिल खोल कर बातें कर रहे थे। दोनों के हाथों में कीमती विलायती चुरुट थीं और वे बातें करते हुए उसका आनन्द ले रहे थे। इनमें से एक का नाम सर चार्ल्स मैटकाफ़ था, जो गवर्नर-जनरल की कौंसिल का अण्डर सेक्रेटरी भी था। यह चालीस साल की उम्र का एक लम्बा, तगड़ा और मज़बूत शरीर का आदमी था। इसकी खोपड़ी गंजी थी और लाल रंग की मूँछें बारीक कटी हुई थीं। उसकी नीली आँखों में तेज़ चमक थी, और यह स्पष्ट प्रतीत होता था कि वह एक निर्भीक और स्पष्टवक्ता पुरुष है। हरेक बात को तोल कर विचार पूर्वक बोलता था। दूसरा आदमी लार्ड मैकाले था, जो कि गवर्नर-जनरल की कौंसिल का नया लॉ मेम्बर था। यह पद कौंसिल में इसी साल बढ़ाया गया था और इस तरुण अंग्रेज़ को कम्पनी के डाइरेक्टरों ने खासतौर से इस पद पर नियुक्त करके भेजा था। इसके संबंध में प्रसिद्ध था कि वह एक विद्वान् और क़ानून का प्रसिद्ध पंडित है। इसके सुपुर्द यह काम किया गया था कि वह भारतीय दंड विधान की रचना करे। यह एक

निधन घराने का व्यक्ति था, जो अपनी योग्यता से लार्ड के पद तक पहुँचा था। यद्यपि अभी उसकी आयु केवल ३२ ही वर्ष की थी, परन्तु वह मुस्तैद, विचारशील, उत्साही और बुद्धिमान् पुरुष था। उसके बोलने का ढंग बहुत आकर्षक और प्रभावशाली था और इंग्लैंड में वह इसी उमर में अच्छा लेखक प्रसिद्ध हो गया था।

चार्ल्स मैटकाफ ने कहा—"कहिए, यहाँ का जलवायु आपको कैसा लगा ? यहाँ के आदमी और रस्मोरिवाज़ आपको पसंद आए कि नहीं ?"

"अभी तो मैं नया ही हिन्दुस्तान में आया हूँ। न तो मैं यहाँ के लोगों की बोली समझता हूँ, न भाषा जानता हूँ, और न भारतवासियों के रीति-रिवाजों से परिचित हूँ। फिर भी इतना तो कह सकता हूँ कि यहाँ की धूलि-धूसरित संध्याएँ एकदम बेहूदा हैं। और यहाँ के निवासियों की धार्मिक और सामाजिक मान्यताएँ, उनके रहन-सहन अत्यन्त घृणास्पद और गंदे हैं। परन्तु सबसे अधिक तो मैं यहाँ की गर्मी से परेशान हूँ।"

सर चार्ल्स मैटकाफ ने हँसकर कहा—"लेकिन यहाँ की गर्मी अभी आपने देखी कहाँ है ? आप तो उस वक्त आए हैं, जबकि गर्मियाँ बीत चुकीं, मौसम बदल गया और यह तो बंगाल का सबसे बढ़िया मौसम है। हाँ, आगे आपको मक्खी और मच्छरों का आनन्द जरूर प्राप्त होगा।"

"हाँ, मैंने सुना है कि हिन्दुस्तान मलेरिया का दुनिया भर में सबसे बड़ा घर है।"

"और हिन्दुस्तान भर में बंगाल इस मामले में सबसे आगे है।"

"तौबा, तौबा। देखता हूँ कि सही सलामत अपनी तन्दरुस्ती और ज़िन्दगी को लेकर इंग्लिस्तान लौट भी सकूँगा कि नहीं।"

"इसमें क्या दिक्क़त है, फिर हम लोग तो भारत में धन कमाने के लिए आए हैं। कुछ न कुछ खतरा तो उठाना ही पड़ेगा। मैं समझता हूँ कि यहाँ जो अति उच्चपद और मान आपको अनायास ही प्राप्त हो गया, इंगलैण्ड में शायद ज़िन्दगी-भर में प्राप्त न होता।"

"आपकी इस बात को मैं कुबूल करता हूँ। मैं आप से यह छिपाना नहीं चाहता कि अपनी कलम से इंग्लिस्तान में मैं केवल दो सौ पौंड सालाना कमा सकता था। वह भी बहुत रो-पीट कर और बहुत मेहनत के बाद।"

"लेकिन लार्ड महोदय, यहाँ तो मज़ा ही मज़ा है। तनख्वाह दस हज़ार पौंड सालाना कुछ छोटी रक़म नहीं है। इसके अलावा अत्यन्त मान और आमदनी का ठीया है। यहाँ कलकत्ते से जो लोग अच्छी तरह परिचित हैं, वे जानते हैं कि ऊँचे से ऊँचे लोगों की श्रेणी में रहने के लिए आप पाँच हज़ार पौंड सालाना ख़र्च करके बड़ी शान से रह सकते हैं। और अपनी बाकी तनख्वाह मय सूद के बचा सकते हैं। फिर इसके अलावा आपको गवर्नर-जनरल बहादुर ने लॉ कमिश्नर भी तो बना दिया है, जिसके लिए पाँच हज़ार पौंड सालाना मुफ़्त ही में आपकी जेब में पड़ जाएँगे और इसके लिए वास्तव में आपको एक मक्खी भी न मारनी पड़ेगी।"

लार्ड मैकाले ज़ोर से ही-ही करके हँस पड़े और बोले—'सर मैटकाफ, आप ठीक कहते हैं कि यह लॉ कमिश्नर का पद ऐसा है कि जिसके लिए एक आदमी को इतनी बड़ी तनख्वाह देना मुनासिब नहीं था। क्योंकि मैं भी यह देखता हूँ कि कोई कार्य तो इस पद का है ही नहीं।"

"तो इससे आपको क्या? रुपए आपको काटते थोड़े हैं? निखर्च

दस हज़ार पौंड सालाना बचाते चले जाइए।"

"निस्संदेह, मैं आशा करता हूँ कि केवल ३९ साल की उम्र में जबकि मेरे जीवन की शक्तियाँ अपने शिखर पर होंगी, तीस हज़ार पौंड की रक़म लेकर मैं इंगलिस्तान वापिस जा सकूँगा। सच तो यह है कि इससे अधिक धन कमाने की मैंने कभी कामना भी नहीं की थी।"

"मेरे प्यारे लार्ड, मैं तो यह समझता हूँ कि आप ५० हजार पौंड की रक़म लेकर स्वदेश को लौटेंगे।"

"धन्यवाद सर मैटकाफ, लेकिन इन काले, घिनौने और अंधविश्वासी भारतीयों के बीच में रहना तो अत्यन्त ही असह्य है।"

"बेशक, ख़ास कर उस हालत में जब कि आप न तो उनके देश की कोई भाषा जानते हैं, न रीति-रस्म जानते हैं, न उनसे कोई सहानुभूति रखते हैं।"

"राइट यू आर सर; हक़ीकत तो यही है। लेकिन मुझे दो काम करने हैं—पहला यह, कि मैं उनके लिए क़ानून बनाऊँ, उसमें मुझे एक ही बात को नजर में रखना पड़ेगा कि उसके द्वारा अंग्रेजी सरकार के हाथ मजबूत हों और सर्वसाधारण असहाय रह जाएँ।"

"तो माई लार्ड, शायद यह उसी ढंग का क़ानून आप बनाने जा रहे हैं, कि जैसा हमारा बनाया हुआ आयरिश पिनल कोड है कि जिसके बाबत बर्क ने कहा था, कि वह एक ऐसा पेचीदा यन्त्र है जो किसी कौम पर अत्याचार करने, उसे दरिद्र बनाने और उसे आचार-भ्रष्ट करने और उसके अंदर से मनुष्यत्व तक का नाश करने में अद्वितीय है।"

"आप बड़ी सख्त राय रखते हैं सर मैटकाफ, परन्तु हम जानते हैं कि भारतवर्ष को कभी स्वतन्त्र नहीं किया जा सकता। लेकिन कभी न कभी एक मज़बूत और निश्पक्ष स्वेच्छा शासन उसे मिल सकता है।"

"माई लार्ड, मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि लॉ मेम्बर का काम है, हिन्दुस्तानियों को क़ानून की सुनहरी जंजीरों में जकड़ देना, और मैं आशा

करता हूँ कि आप यह काम बड़ी खूबी से पूरा करेंगे। खैर, दूसरा काम भी फर्माइए।"

"मेरा दूसरा काम यह होगा कि मैं कम्पनी की सरकार को यह सलाह दूँ, और उसके सामने शिक्षा की एक ऐसी योजना उपस्थित करूँ कि जिससे भारतवासियों को अंग्रेजी सिखा कर उनकी सहायता से अंग्रेज हिन्दुस्तान पर हुकूमत करें।"

"मैं समझ गया। आपका उद्देश्य यह है कि हिन्दुस्तानियों में राष्ट्रीय भावना पैदा ही न होने पाए।"

"निस्संदेह, यह एक बड़ा खतरा है। मेरा दृष्टिकोण यह है कि अंग्रेजी शासन भारतवर्ष में चिरस्थायी रहे।"

"क्या आपने ऐसी कोई योजना सोची है ?"

"मैंने बहुत कुछ सोच-विचार लिया है सर मैटकाफ। यदि मेरी बताई हुई शिक्षा योजना को काम में लाया गया तो आज से ३० बरस बाद कम से कम बंगाल के इज्जतदार लोगों में एक भी मूर्तिपूजक न रहेगा।"

"माई लार्ड, मैं आपकी बात की तह तक पहुँच गया हूँ, और मैं कह सकता हूँ कि आप भारतवासियों के धार्मिक और सामाजिक जीवन को नष्ट करने का संकल्प कर चुके हैं।"

"यह आपका ख्याल है, मैं तो इतना ही कह सकता हूँ कि ब्रिटिश सरकार को इस समय अपने विशाल साम्राज्य के लिए अनेक वफ़ादार और कुशल नौकरों की ज़रूरत है, उसकी यह ज़रूरत पूरी हो जाय।"

"किंतु आपको ज्ञात होना चाहिए कि इस समय भी भारत शिक्षा प्रचार में यूरोप के सब देशों से आगे है। और प्रतिशत आबादी के हिसाब से पढ़े-लिखों की संख्या यहाँ अब भी यूरोप से अधिक है। यहाँ असंख्य ब्राह्मण अध्यापक अपने घरों पर लाखों विद्यार्थियों को मुफ़्त शिक्षा देते हैं। इसके अतिरिक्त सभी बड़े-बड़े नगरों में उच्च संस्कृत साहित्य की शिक्षा के लिए विद्यापीठ क़ायम है, इसी तरह उर्दू

ग्रौर फारसी की शिक्षा के लिए जगह-जगह मक़तब ग्रौर मदरसे हैं। जहाँ लाखों हिंदू ग्रौर मुसलमान बालक शिक्षा पा रहे हैं । फिर छोटे से छोटे गाँव में भी पाठशालाएँ हैं, जिनका संचालन पंचायतों द्वारा होता है। ग्रापको यह जानकर शायद कदाचित ग्राश्चर्य हो कि इस समय भी ग्रकेले बंगाल में ४० हज़ार देशी पाठशालाएँ हैं। ग्रौर जहाँ तक मैं जानता हूँ प्रत्येक हिंदू गाँव में ग्रामतौर पर सब बच्चे लिखना-पढ़ना ग्रौर हिसाब करना जानते हैं। मैं तो यहाँ तक कहने का साहस कर सकता हूँ कि शिक्षा की दृष्टि से संसार के किसी भी ग्रन्य देश में किसानों की ग्रवस्था इतनी ऊँची नहीं है, जितनी भारत के ग्रनेक भागों में। ग्रापने प्रसिद्ध मिश्नरी डा-वेल का नाम तो सुना होगा कि जो मद्रास में पादरी रह चुके हैं, ग्रब उन्होंने इंग्लिस्तान जाकर भारतीय प्रणाली के ग्रनुसार शिक्षा देना प्रारंभ किया है।

"लेकिन मैं तो यह देखता हूँ कि इस हिन्दुस्तान में करोड़ों नन्हें-नन्हें बच्चे, जिन्हें पाठशालाग्रों में शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए, मां बाप का पेट भरने के लिए उनके साथ मेहनत-मज़दूरी करते हैं।"

"लेकिन यह सब हमारी ही करतूत से। मुझे कहते हुए दुःख होता है कि सारा हिन्दुस्तान बड़ी तेज़ी से निर्धन होता जा रहा है। खासकर जब से यहाँ इंग्लिस्तान के बने कपड़ों का प्रचार किया गया है। यहाँ के कारीगरों की जीविका-निर्वाह के साधन खत्म हो गए हैं। देश का धन पुराने देशी दर्बारों ग्रौर देशी कर्मचारियों के हाथों से निकल कर हमारे हाथ में चला ग्राया है, ग्रौर हम उस धन को भारत में खर्च न करके इंग्लिस्तान भेज रहे हैं, सरकारी लगान जिस कड़ाई से वसूल किया जाता है उससे भी प्रजा को कष्ट होता है। इस कारण नीच ग्रौर मध्यम श्रेणी के लोग मजबूर हो गए हैं कि उनके बच्चों के कोमल ग्रंग थोड़ी-बहुत मेहनत कर सकने के योग्य हो जाएँ तो माता-पिता उन्हें जिन्दगी की ग्रावश्यकता के लिए मेहनत मजदूरी में धकेल देते हैं। इसी से देश की पुरानी शिक्षा संस्थाएं कम होती जा रही हैं। खासकर इसलिए भी कि

हिन्दुओं के शासन काल में विद्या प्रचार की सहायता के लिए बड़ी-बड़ी रक़में राज्य की ओर से बंधी हुई थीं, वे अब बन्द हो गई हैं, और हमारी अंग्रेज़ी सरकार उन्हें किसी प्रकार की कोई आर्थिक सहायता नहीं देती।"

"लेकिन सबसे अधिक विचारणीय बात तो यह है कि क्या भारत-वासियों को शिक्षा देना अंग्रेज़ों के लिए हितकर है अथवा अहितकर। आप अच्छी तरह जानते हैं कि हम लोगों ने अपनी इसी मूर्खता के कारण अमेरिका को हाथ से खो दिया, क्योंकि हमने कालेज और स्कूल वहाँ क़ायम हो जाने दिए। अब भारत के विषय में हम अपनी मूर्खता दोह-राना नहीं चाहते।"

"लेकिन हमें अपने सरकारी महकमों और नयी अदालतों के लिए योग्य हिन्दू और मुसलमान कर्मचारी चाहिए, जिनके बिना इन महकमों और अदालतों का चलना संभव नहीं है। इसके अतिरिक्त हमें भारतीय जनता के हार्दिक भावों का पता भी लगता रहना चाहिए जिससे जनता के भावों को हम अपनी ओर मोड़ सकें।

"आप ठीक फर्माते हैं। कलकत्ते का मुसलमानों का मदरसा और बनारस का हिन्दू कालिज और पूना का डक्कन कालेज इसी दृष्टिकोण से बनाया गया है। और अब मैं सुनता हूँ कि कलकत्ते में एक मेडिकल कालेल की स्थापना होने वाली है। परन्तु मेरा उद्देश्य तो सर्वथा ही दूसरा है।

"आपका उद्देश्य क्या है ?

"यह कि उच्च व मध्यम श्रेणी के उन्हीं भारतवासियों की शिक्षा पर ध्यान दिया जाय जिनसे कि हमें अच्छे शासन केलिए देशी एजेन्ट मिल सके और जिनका देशवासियों पर भी प्रभाव हो।"

"तो आपका मतलब यह है कि बिना योग्य भारतवासियों की सहा-यता के ब्रिटिश राज्य का चल सकना सर्वथा असंभव है।"

"निस्संदेह मेरा दृष्टिकोण यही है। और इसीलिए मेरा यह दृढ़

निश्चय है कि भारतवासियों को प्राचीन भारतीय साहित्य की शिक्षा से विमुख करके उन्हें अंग्रेज़ी भाषा, अंग्रेज़ी साहित्य और अंग्रेज़ी विज्ञान सिखाया जाय।"

"क्या ऐसा करना भारतीयों के लिए हितकर होगा ?"

"इस बात पर विचार करना मेरा काम नहीं है। मेरा दृष्टिकोण यह है कि उच्चश्रेणी के भारतवासियों में राष्ट्रीयता के भावों को उत्पन्न होने से रोका जाय, और उन्हें अंग्रेज़ी सत्ता चलाने के लिए उपयोगी यंत्र बनाया जाय। हक़ीकत यह है कि हमें भारत में इस तरह की एक श्रेणी पैदा करने का भरसक प्रयत्न करना चाहिए, जो हमारे और करोड़ों भारतवासियों के बीच, जिन पर हम शासन करते हैं, समझाने-बुझाने का काम करे। ये लोग ऐसे होने चाहिए जो कि केवल रक्त और रंग की दृष्टि से हिन्दुस्तानी हों, किंतु जो अपनी रुचि, भाषा, भावों और विचारों की दृष्टि से अंग्रेज़ हों।"

"आपकी रिपोर्ट मैंने पढ़ी है और आपको यह जान कर खुशी होगी कि गवर्नर-जनरल ने आपका समर्थन किया है, और हुक्म दिया है कि जितना धन शिक्षा के लिए मंजूर किया जाय उसका सबसे अच्छा उपयोग यही है कि उसे केवल अंग्रेज़ी शिक्षा के ऊपर खर्च किया जाय।"

"इस सूचना के लिए मैं आपको धन्यवाद देता हूँ। वास्तव में हमें हिन्दुस्तान में अंग्रेज़ी पढ़े-लिखे ऊँचे दर्जे के हिन्दुस्तानियों की एक ऐसी श्रेणी बना देनी है जिन्हें अपने देशवासियों के साथ या तो बिल्कुल ही सहानुभूति न हो और हो तो बहुत कम।"

"मैं समझ गया, और आशा करता हूँ कि आप अपने मिशन में सफल होंगे और कल कौंसिल की मीटिंग में जो आपकी रिपोर्ट पर विचार होगा, उसमें बहुमत आप ही का होगा।"

शाम हो चली थी और अंधेरा बढ़ गया था, जबकि बैरे ने लैंप लेकर वहाँ प्रवेश किया। दोनों लार्ड उठ खड़े हुए और हाथ में हाथ दिए, टहलते हुए अपने-अपने बंगलों की ओर रवाना हुए।

: २० :

हिज़मैजस्टी

सन् १८२७ में अवध के प्रथम बादशाह ग़ाजीउद्दीन हैदर ने अपना तख्तोताज सूना छोड़ इस असार संसार से कूच किया। वे जब पिता के सिंहासन पर बैठे थे तब चौदह करोड़ रुपया शाही ख़जाने में जमा था, और अवध का राज्य जाहोजलाली से भरपूर था। परन्तु मरते समय अवध का शाही खजाना खाली था। राज्य में अंधेरगर्दी मच रही थी। अंग्रेजों ने ज़ोरोजुल्म करके बादशाह से खूब रुपया ऐंठा था—और बादशाह के कर्मचारियों ने प्रजा को लूटने में सितम ढाया था। इससे बहुत लोग खेती-बाड़ी, घर-बार छोड़ भाग गए थे। खेत सूखे-उजाड़ पड़े थे, गाँव वीरान थे, भले घर के समर्थ साहसी लोग जमींदार डाकू बन गए थे। बुद्धिमान और चरित्रहीन जन ठग बन गए थे। बाकी सब चोर हो गए थे। अतः राज्य भर में चोरों, ठगों, उठाईगीरों का बोलबाला था। कहीं किसी की सुनवाई न थी।

पिता ग़ाजीउद्दीन के मरने पर उनके तथा-कथित पुत्र नसीरुद्दीन हैदर गद्दी पर बैठे। गाज़ी उद्दीननसीर को अपना औरस पुत्र नहीं मानते थे—न उन्हें उत्तराधिकारी बनाना चाहते थे। कहा तो जाता है कि उन्होंने नसीर को मरवा डालने की भी चेष्टा की थी। परन्तु इसी बीच उनकी मृत्यु हो गई। तब नसीर ने दो करोड़ रुपए अंग्रेजों की नज़र कर के अपने लिए हिजमैजस्टी का गौरव युक्त पद क्रय किया। कहने की आवश्यकता नहीं—कि ये दो करोड़ रुपए राजकोश से नहीं—प्रजा से लूट खसोट कर के दिए गए थे, क्योंकि इस समय राजकोष में फूटी कौड़ी भी न थी।

अपनी प्रजा पर और परिवार के लोगों पर नसीर मनमाना अत्याचार कर सकते थे—इसकी उन्हें छूट थी। अंग्रेजी रेज़ीडेन्ट उनके किसी काम में दखल नहीं दे सकता था। वह केवल अवध राज्य में अंग्रेजों का

हित देखता तथा अंग्रेजी प्रभुत्त्व का ध्यान रखता था।

नसीरुद्दीन हैदर ने दो करोड़ रुपए खर्च करके जो अंग्रेजों से 'हिज-मैजस्टी' की उपाधि ख़रीदी थी—उसका भलां भाँति उपयोग करने के लिए वे सिर से पैर तक अंग्रेज़ी लिबास में रहते थे। उनके पिता ग़ाज़ी-उद्दीन सच्चे मुसलमान थे—हमेशा तस्वीह हाथ में रखते और कुरान शरीफ़ की आयतें पढ़ते रहते थे। परन्तु नसीरुद्दीन को अंग्रेज़ों की सोहबत और अंग्रेज़ी लिबास ही पसन्द था। जब कोई अंग्रेज़ उसे 'योर-मैजस्टी' कह कर सम्बोधन करता था—तो नसीर आनन्द के साथ बहुत सा गर्वभी अनुभव करते थे। इस आनन्द की अभिवृद्धि के लिए उन्होंने पाँच अंग्रेज़ मुसाहिब रखे हुए थे। इन में एक हज्जाम था, जो एक आँख से काना था। पर वह इस समय बादशाह की मूँछ का बाल हो रहा था। यह एक जारज और आवारा लड़का था, जिसने बचपन ही से हज्जाम का काम सीख कर लंदन में एक सैलून खोला था। पीछे वह धन कमाने की लालसा से भारत चला आया था। लंदन में ही उसने सुना था कि ईस्ट-

इण्डिया कम्पनी की राजधानी कलकत्ते में कोई अंग्रेज़ नाई नहीं है। बस वह इस सुयोग से लाभ उठाने भारत चला आया। जहाज पर उसने केबिन-बॉय की हैसियत से यात्रा की। कलकत्ते पहुँच हज्जाम का काम करके कुछ रुपया जोड़ा—फिर वह काम छोड़ कुछ विलायती सौदागरी का सामान खरीद उत्तर पश्चिम में गाँव-गाँव—क़स्बे-क़स्बे फेरी लगाता—कन्धे पर बुकची रखे—माल बेचता लखनऊ आ पहुँचा। लखनऊ पहुँच कर उसने रेजीडेन्ट मेजर बेली के बाल बना कर उन्हें खुश कर लिया। हिजमैजस्टी नसीर के बाल सूअर के समान कड़े और खड़े थे। एक दिन रेजीडेन्ट ने इस काने नाई को उनकी सेवा में ला उपस्थित किया—उसने उनके बाल घुंघराले बना दिए। बादशाह बहुत खुश हुए। हज्जाम को पहले नौकर रखा—फिर उसकी वाक्चातुरी और मज़ाकिया प्रकृति से प्रसन्न हो उसे अपना मुसाहिब बना लिया। अब वह बादशाह की नाक का बाल बना हुआ था। ठाठ से शाही दस्तरख़ान पर शाही खाना खाता और बढ़िया शराब पीता था।

दूसरा मुसाहिब एक दर्जी था, जो इटली का निवासी था। वह विलायती गाना गाने में उस्ताद था। तीसरा एक मास्टर था, जिस से बादशाह ने शुरू में ए. बी. सी. डी. पढ़ी थी,—पर अब उसे पढ़ने की फ़ुर्सत ही नहीं मिलती थी। चौथा आदमी एक लाइब्रेरियन था। उसके द्वारा भाँति-भाँति की पुस्तकें मंगा कर इकट्ठा करने का नसीर को शौक था। पाँचवाँ एक थोड़ी ही आयु का कर्नल था, जो आयर्लेण्ड का निवासी था।

हज्जाम को बादशाह ने सरफ़राज़ खाँ का ख़िताब दिया हुआ था। हज्जाम उसे हिजमैजस्टी कह कर पुकारता था और बादशाह उसे खाँ साहब कह कर सम्बोधन करता था। शाही ख़जाने से इन पाँचों मुसाहिबों को हर महीने पन्द्रह सौ रुपया मुशाहरा मिलता था। इसके अतिरिक्त दरबार के दिनों में या ईद मुहर्रम पर चार छह हज़ार रुपया और भी इनाम इक़राम मिल जाता था। ये मुसाहिब सब बादशाह के साथ शाही दस्तरख़ान पर खाना खाते और बढ़िया शराब पीते थे।

हिज़मैजस्टी नसीरुद्दीन हैदर के महल में बहुत-सी बेगमात और ग्यारह सौ आसामियाँ, जल्सेवालियाँ और डोलेवालियाँ थीं। प्रधान बेगम दिल्ली के बादशाह अहमदशाह की पुत्री थी। इसका विवाह नसीर से बहुत पहले हुआ था। और हिज़मैजस्टी होने के पहले से ही उसका इस बेगम के पास आना-जाना लगभग बंद हो गया था। रंगमहल में वह बादशाह-बेगम के नाम से प्रसिद्ध थी। उसका रुआब दबदबा बहुत था, तथा वह पृथक् महल में रहती थी। उसकी सेवा में सैकड़ों दास-दासियाँ लौंडी-बाँदियाँ रहती थीं। महल की कोई बेगम या कोई स्त्री चाहे वह बादशाह की कितनी ही चहेती हो, बादशाह-बेगम के साथ नहीं बैठ सकती थी। सामने आने पर प्रत्येक स्त्री को बादशाह-बेगम के प्रति सम्मान प्रकट करना पड़ता था।

नसीरुद्दीन औरतों का खास तौर पर शौक़ीन था। उसके महल में अनेक नीच जाति की स्त्रियाँ भी थीं। जिन्हें उसने उपपत्नी या रखेल बना कर रखा हुआ था। एक बेगम अत्तारमहल थी, जिसकी इस समय तूती बोलती थी। दूसरी ताजमहल और तीसरी नूरमहल, जो बहुत दिन तक रखेलिन की भाँति रही थीं, और अब नवाब ने निकाह पढ़ा कर उन्हें बेगम बना दिया था। किसी मुसलमान अमीर-ग़रीब की सुन्दरी कन्या पर बादशाह की नज़र पड़ते ही वह उसे अपनी रखेलिन बना लेने को तैयार हो जाता था। बहुत से अमीर मुसलमान इस ताक में रहते थे कि उनकी लड़कियों पर बादशाह की नजर पड़े और बादशाह उसे रखेलिन बना कर रख ले। ऐसे अनुरोध बादशाह तुरन्त मान लेते थे, परन्तु उनमें से बहुतों को बादशाह के सामने जाने का भी अवसर नहीं मिलता था। किन्तु हाँ, यदि ऐसी कोई स्त्री गर्भवती हो जाती थी तो उसे अलग रखा जाता था और उसे मासिक वृत्ति दी जाती थी। ये स्त्रियाँ एक बारक जैसे मकान में एक-एक कोठरी में रहती थीं। उनमें से बहुतों को बादशाह पहचानते भी न थे।

नसीरुद्दीन हैदर की माता रंगमहल में जनाबे-आलिया बेगम के

नाम से प्रसिद्ध थीं। नसीर का इनसे भी मनमुटाव था और वह अनपी माता के महल में नहीं आता-जाता था। प्रसिद्ध था कि जनाबे-आलिया बेगम कोई बड़े खानदान की लड़की न थीं तथा नसीरुद्दीन की उत्पत्ति पर ग़ाजीउद्दीन को संदेह भी था। ग़ाजीउद्दीन जब नसीर को मरवा डालना चाहता था, तब आलिया-बेगम ने ही उसकी प्राणरक्षा की थी, परन्तु अब नसीर अपनी माँ से कभी मिलता तक न था।

रंगमहल की हिफाजत के लिए एक अच्छी-खासी स्त्री सैन्य रहती थी। इस सेना में बहुधा नीच जाति की स्त्रियाँ भरती होती थीं। जो शराब पीतीं और दुराचारिणी भी होती थीं। ये स्त्रियाँ सिपाहियों का पहनावा पहनतीं, हथियार बाँधतीं तथा सिर पर पगड़ी बाँधती थीं। इनके दर्जे भी सेना के अफसरों की भाँति होते थे। सभी बेगमात के महल में स्त्री-सिपाही रक्षा पर तैनात रहती थीं। बादशाह बेगम के महल पर पचास स्त्री-सैनिक रहते थे, परन्तु जनाबे-आलिया के महल पर डेढ़ सौ स्त्री-सैनिकों का पहरा रहता था।

हिजमैजस्टी बनने के बाद नसीरुद्दीन हैदर को दिल्ली के बादशाह ने बुलाया था। और नसीरुद्दीन ठाठबाट से दिल्ली के लालक़िले में मेहमान होकर गए थे।

: २१ :

दिल्ली की गंडेरियाँ

दिल्ली के हज़रत निज़ामुद्दीन के मज़ार पर उस दिन बड़ी भीड़-भाड़ थी। बेशुमार हिंदू और मुसलमान स्त्री-पुरुष वहाँ आए थे। बहुत आ रहे थे—बहुत जा रहे थे। मज़ार का विस्तृत सहन स्त्री-पुरुषों से भरा था। हाजतमंद लोग मज़ार पर आकर दुआ मुराद मांग रहे थे। प्रसिद्ध था, कि कोई ज़रूरत मंद इस औलिया की दरगाह से बिना मुराद पूरी किए वापस नहीं लौटता। उर्स का जुलूस था। बहलियों—रथों पालकियों और सवारियों का तांता लग रहा था। शानदार मजलिस

दरगाह पर जम रही थी। शागिर्द लोग और दूर-दूर के क़व्वाल आए थे। दिल्ली और आस-पास के अक़ीदे वाले लोग हाज़िर थे। बहुत लोग फातिहा पढ़ रहे थे। बहुत लोग मज़ार के चारों ओर घेरा डालकर बैठे कुरान की आयतें—और दूसरे पवित्र पाठों का मन्द स्वर मे उच्चारण कर रहे थे।

दो स्त्रियाँ बुर्क़ा ओढ़े हुए डोली से उतर कर धीरे-धीरे मज़ार की तरफ़ को चलीं। दरगाह की ड्योढ़ियों पर पहुँच कर दोनों ने बुर्क़ा उठा दिया। उनमें एक अधेड़ उम्र की मोटी-ताज़ी औरत थी। दूसरी असाधारण रूप लावण्यवती बाला थी। अभी उसकी आयु चौदह बरस ही की होगी। वह फिरोज़ी रंग की ओढ़नी और ज़री के काम का सुथना पहने थी। उसकी बड़ी-बड़ी कटोरी-सी आँखें, मोती-सा रंग और ताज़ा सेब के समान चेहरा ऐसा लुभावना और अद्भुत था कि उसे देखकर उस पर से आँखें वापस खींच लेना असम्भव था।

दोनों ने दरगाह की ड्योढ़ियों पर जाकर घुटने टेक दिए। फूल और मिठाई चढ़ाई। मुजाविर ने दो फूल मज़ार से उठा कर बालिका को दिए। बालिका ने उन्हें आँखों से लगाया। वृद्धा ने कहा—या हज़रत, मेरी बेटी को फ़रहत बख्शना।

दोनों स्त्रियाँ वापस लौट चलीं। उन्हें उस बात का कुछ भी भान न था—कि कोई उन्हें छिपी हुई नज़रों से देख रहा है।

परन्तु दो आदमी चुपचाप उन्हें देख रहे थे। एक की आयु पच्चीस वर्ष के लगभग थी। रंग गोरा, बड़े-बड़े नेत्र, विशाल छाती और नोकदार नाक। स्पष्ट था कि कोई बड़ा आदमी छद्म वेश में है। इस व्यक्ति के शरीर पर साधारण वस्त्र थे। और वह खूब चौकन्ना होकर दरगाह में घूम रहा था। उसके पीछे उससे सटा हुआ दूसरा पुरुष था। यह पुरुष प्रौढ़ और कद्दावर था। वह परछाईं की भाँति उसके साथ था। और उसकी प्रत्येक बात अदब से सुनता और जवाब देता था।

आगे वाले पुरुष ने कहा—

"ज़मीर, देखा तूने उस गुलरू को।"

ज़मीर ने दबी ज़बान से कहा—"खुदावन्द, हुक्म हो तो पता लगाऊँ।"

"जा डोली वाले कहारों से पूँछ।"

ज़मीर ने एक चमचमाती अशर्फी कहार की हथेली पर रख दी। कहार आँखें फाड़-फाड़ कर ज़मीर के मुँह की ओर देखने लगा। उसने कहा—"हुज़ूर क्या चाहते हैं।"

"खामोश," ज़मीर ने होठों पर उंगली रख कर कहा—"यह कहो, सवारियाँ कहाँ से लाए हो।"

कहार ने झुक कर ज़मीर के कान में कुछ कहा। ज़मीर सिर हिलाता हुआ लौट कर अपने स्वामी के पास आया। उसने हाथ बाँध कर कहा—"सब मालूम हो गया हुज़ूर।"

"उसे हासिल करना होगा।"

"जो हुक्म खुदावन्द।"

"चाहे भी जिस कीमत पर।"

"जो हुक्म।"

दोनों भीड़ में मिल गए। डोली आँखों से ओझल हो गई।

उसी रात को दोनों आदमी एक अंधेरा गली में खड़े थे। सर्दी कड़ाकेकी थी और रात अंधेरी थी। गली में सन्नाटा था। ज़मीर ने कहा—"आलीजाह, कोठा तो यही है।"

"लेकिन खबरदार, मेरा नाम ज़ाहिर न हो।"

दोनों ऊपर चढ़ गए।

वेश्या का कोठा था। वही अधेड़ औरत रज़ाई लपेटे बैठी छालियां कतर रही थी। नवागन्तुकों को उसने अपनी सांप की सी आँखों से घूर कर देखा। एक ने आँख ही आँख में संकेत किया। वृद्धा गम्भीर हो गई। दूसरे आगन्तुक ने कहा—

"बडी बी, सलाम।"

बुढ़िया ने खड़ी हो कर अदब से उस पुरुष को मसनद पर बैठाया। इत्र और पान पेश किया। आगन्तुक ने कहा—"बड़ी बी, हम लोगों के आने से आप को कुछ तरद्दुद तो नहीं हुआ।"

"नहीं मेरे सरकार, यह तो आप ही की लौंडी का घर है। आराम से तशरीफ रखिए। और कहिए, बन्दी आपकी क्या खिदमत बजा लाए।"

इसी बीच दूसरे व्यक्ति ने कहा—"बड़ी बी, हुक्म हो तो जीने की कुण्डी बन्द कर दूँ।" और उसने वृद्धा का संकेत पा कर द्वार बन्द कर दिया। अब वापस वृद्धा के निकट बैठ कर उसने कहा—"बड़ी बी, हमारे सरकार तुम्हारी लड़की पर जी-जान से फ़िदा हैं। अगर तुम नाराज़ न हो तो इस बाबत कुछ बात करूँ।"

नायिका ने तन्त की बात उठती देख कर ज़रा तुनुक मिज़ाजी से कहा—"यह तो सरकार की इनायत है, मगर आप जानते हैं, ये गंडेरियां नहीं हैं, कि चार पैसे की खरीदीं और चूस लीं।"

वह व्यक्ति भी पूरा घाघ था। उसने कहा—गंडेरियों की बात क्या है बड़ी बी, हर चीज़ के दाम हैं। और हर एक आदमी के बात करने का ढंग जुदा है। अगर तुम्हें नागवार गुज़रा हो तो हम लोग चले जांय।"

बुढ़िया नर्म पड़ गई। उसने ज़रा दब कर कहा—"आप इतने ही में नाराज़ हो गए, मैंने यही तो कहा था—कि सरकार को हम जानते नहीं हैं। कौन हैं, क्या रुतबा है। सारा शहर जानता है यह ठिकाने का घराना है। मैं कुछ ऐसी रज़ील नहीं हूँ, आप के तुफैल से बड़े-बड़े रईसों-नवाबों और रईसज़ादों ने बन्दी की जूतियाँ सीधी की हैं।"

उस आदमी ने कड़े हो कर कहा—

"खैर, तो तुम्हारा जवाब क्या है ?"

"बन्दी को क्या उज्र है। पर यह भी तो मालूम हो कि हुज़ूरे आली का इरादा क्या है।"

"वे चाहते हैं, कि तुम्हारी लड़की को बेगम बनाएं, वह खूब आराम से रहेगी। सरकार एक आला रईस हैं।"

बुढ़िया ने तपाक से कहा—"क्यों नहीं। बड़े बड़े रईस यहाँ आए और यही सवाल किया। मगर मैंने अभी मंजूर नहीं किया। क्योंकि मेरा बे-अन्दाज़ रुपया इसकी तालीम और परवरिश में ख़र्च हुआ है।"

अब अधीर हो कर दूसरे पुरुष ने मुँह खोला। उन्होंने कहा—"आखिर कितना, कुछ कहोगी भी।"

वेश्या ने चुन्धी आँखें उस प्रभावशाली पुरुष के मुख पर डाल कर कहा—आलीजाह, पचास हज़ार रुपया तो मेरा उसकी तालीम और परवरिश पर खर्च हो चुका है।"

दूसरे व्यक्ति ने कहा—"बड़ी बी, इतना अन्धेर क्यों करती हो।"

परन्तु बड़ी बी को बीच ही में जबाब देने से रोक कर प्रथम पुरुष ने कहा—"सौदे की ज़रूरत नहीं, यह लो।" उसने अपने वस्त्रों में छिपी हुई एक माला गले से उतार कर बुढ़िया के ऊपर फेंक दी। वह उठ खड़ा हुआ। और बोला—"ज़मीर, उस परी पैकर को अपने हमराह ले आओ।"

वह चल दिया। बुढ़िया ने आश्चर्य चकित होकर माला उठा ली। वह आँखें फाड़-फाड़ कर उसके अंगूर के बराबर बड़े-बड़े मोतियों को मोमबत्ती के धुंधले प्रकाश में देखने लगी।

ज़मीर ने कहा—"देखती क्या हो, दो लाख का माल है। अब तो पांचों घी में और सिर कढ़ाई में। लखनऊ के बादशाह नसीरुद्दीन हैदर हैं। सफाई से चंडूल को फांस लाया हूँ। अब इस में से पचास हज़ार बन्दे को इनायत करो।"

बूढ़ी ने माला को चोली में छिपा लिया। वह आनन्द से विह्वल हो कर बेटी-बेटी, पुकारने लगी। लड़की के आते ही वह उस के गले लिपट गई। उसने कहा—"मेरी बेटी, मलिका, अब तेरा इस बुढ़िया से बिछुड़ने का समय आ गया। जा ग़रीब माँ को भूल न जाना।" दोनों गले मिल कर रोईं। सलाह मश्विरे किए। पट्टियां पढ़ाई गईं। जमीर उसे डोली में बैठा कर वहां से चल दिया।

: २२ :

नवाब कुदसिया बेगम

बादशाह ने उसका नाम रखा कुदसिया बेगम। उसे नवाब का खिताब दिया, जो किसी दूसरी बेगम को प्राप्त न था। और उसे ताज पहनने का भी अधिकार दे दिया। अपने सौन्दर्य, प्रतिभा और खुशअख़लाक के कारण वह उस विशाल महल-सरा में सब बेगमों की सरताज बन गई। नसीरुद्दीन हैदर उसके गुलाम बने हुए थे। सम्पत्ति उसकी ठोकरों में थी। वह खुले हाथों ख़र्च करती थी। रुपए-अशर्फियाँ उसके लिए कंकड़-पत्थरों का ढेर थीं। उसका केवल पानों का ख़र्च रोज़ाना आठ सौ रुपया था। सेरों मोती चूने के लिए रोज पीसे जाते थे। रोज सौ रुपयों के फूलों के हार उसके लिए मोल लिए जाते थे। सात सौ रुपए माहवार उसकी चूड़ियों का खर्च था, जो उसकी दासियाँ पहनती थीं। उसके बावर्चीख़ाने में छह सौ रुपया रोज़ ख़र्च होता था। सोने के थाल में सब प्रकार के रत्नों का सतनजा प्रति संध्या को अपने सिरहाने रख कर सोती थी। और प्रातःकाल होते ही वह ग़रीबों को खैरात कर दिया जाता था। उसकी पोशाक के लिए हज़ार रुपए रोज़ ख़र्च किए जाते थे, जिसे वह सिर्फ एक बार पहन कर शैदानियों को दे देती थी।

गर्मियों में जो खस की टट्टियाँ उसके लिए लगाई जाती थीं, वह केवड़ा और गुलाब से छिड़की जाती थीं। सर्दियों में ऊनी कपड़ों के गट्ठे के गट्ठे उसके अमलों में बाँटे जाते थे। दस-दस हज़ार रुपयों की लागत की उसकी रज़ाइयाँ बनती थीं। और एक बार ओढ़ लेने के बाद जिसके भाग्य में होती थीं, उसे बख्श दी जाती थीं। वह एक-एक लाख रुपए जल्सेवालियों को दे डालती थी। उसे नवाब का ख़िताब दिया गया था और वह रत्न जटित ताज सिर पर पहनती थी।

वसन्त की ऋतु थी। बेगम महल में हर कोई वसन्ती बाना पहने था। बादशाह का खास बाग़ सजाया गया था। मैदान में अपने-अपने

डेरे तम्बू डाल कर दरबारी अमीर-उमरा और राज कर्मचारी जश्न मना रहे थे।

बादशाह को बड़ी लालसा थी कि इस बेगम के गर्भ से पुत्र उत्पन्न हो और उसे वह अपना वारिस बनाए। इस काम के लिए बड़े-बड़े उपचार किए गए थे। बड़े-बड़े हकीम-तबीब, वैद्य, स्याने-दिवाने बुलाए गए थे। बड़े-बड़े पीर, फ़क़ीर, शाह और औलिया वहाँ पहुँचे थे। उनकी अच्छी बन पड़ी थी। सब ने अच्छी लूट मचाई थी। बहुत से निर्धन धनी हो गए। राज्य-भर के फ़क़ीरों को निमन्त्रण दिया, क्योंकि बेगम को गर्भ रह गया था। रियाया में जश्न मनाने का हुक्म जारी हो गया था।

चारों तरफ़ फव्वारे चल रहे थे। खवासनियाँ दौड़-धूप कर रही थीं। बादशाह एक मसनद पर अधलेटे पड़े थे। कुदसिया बेगम उनके पहलू में थी। खवासें शराब के प्याले बादशाह को देतीं और बादशाह उन्हें कुदसिया बेगम के होठों से लगा कर और आँखें बंद करके पी जाते थे। नाचने वालियाँ नाच रही थीं। एक नाचने वाली की अदा पर फ़िदा होकर बेगम ने अपने गले का जड़ाऊ हार उसकी ओर फेंक कर सब को वहाँ से भाग जाने का संकेत किया। सब के चले जाने पर हँस कर उसने बादशाह के गले में हाथ डाल दिया। और कहा—"मेरे मालिक, तुम्हारी इनायत से मैं नाचीज़ क्या से क्या हो गई। तुम ने मुझ को इस क़दर

निहाल कर दिया, कि अब मैं दुनिया को आनन-फ़ानन में निहाल कर सकती हूँ।"

बादशाह ने उसका मधुर चुम्बन लिया। एक आह भरी और कहा—"प्यारी बेगम, तुम से मुझे जो राहत मिली है, उसके सामने यह बादशाहत भी हेच है। लाओ, अपने हाथ से एक प्याला दो। अपने होंठों से छू कर, उसमें अमृत डाल कर।"

बेगम ने हँस कर दो प्याले शराब से लबालब भरे और बादशाह को दिए। बादशाह उन्हें पी कर बेगम की गोद में झुक कर दीनो-दुनिया को भूल गए।

: २३ :

क़ासिम अलीशाह क़लन्दर

गोमती के उस पार एक बड़ा मैदान है। इस मैदान में खेती नहीं होती, न कोई बस्ती ही नजदीक है। यह मैदान चराई के लिए छोड़ दिया गया है। कुछ फ़ासले पर कंजरों की बस्ती थी। मैदान के बीचो-बीच एक टेकरी थी। टेकरी पर कच्ची दीवार का अहाता बनाकर शहनशाह कासिम अलीशाह क़लंदर रहते थे। तकिये में एक नीम का पुराना पेड़ था जिस पर कुछ फूल-पौदे लगा लिए गए थे। एक चबूतरा था, जिसके एक कोने में एक मृगछाला पर क़ासिम अलीशाह क़लंदर बैठते थे। दो चार चटाइयाँ वहाँ पड़ी रहतीं थीं, उन पर आने जाने वाले विश्वासी जन और शागिर्द लोग बैठते थे। शाह क़ासिम अली का रंग एकदम स्याह आबनूस के समान था। दाढ़ी उनकी घनी काली थी—अभी उनकी उम्र चालीस के भीतर ही थी, एकाध बाल पक गया था। बहुत अधिक पान खाने से उनके दाँत और ओंठ काले पड़ गए थे। उनके हाथ में हज़ार दानों की जैतून की माला हर वक्त रहती थी। हर वक्त उनके ओंठ फड़कते और माला सरकती रहती थी। हाथ के नीचे लकड़ी का एक तकिया रहता

था। उनकी सूरत डरावनी थी। ओंठ मोटे थे। मुख से तम्बाकू की तेज बू आती तथा बोलते तो थूक की बौछार पड़ती थी। बीच-बीच में अनलहक़ के नारे लगाते थे। बहुधा ध्यानस्थ बैठे रहते थे। कभी किसी ने उन्हें खाते-पीते नहीं देखा था।

गर्जमंद दुनियादार वाले उनके सामने चटाई पर अदब से बैठे रहते। शाह साहेब वज़ीफा पढ़ते रहते, जब कभी गर्जमंदों की तरफ मुतवज्जह होते, तब वे हाथ बाँध कर उनका हुक्म सुनते थे।

मशहूर था कि शाहे-जिन आपके दोस्त हैं। और उनकी बदौलत वे बड़ी-बड़ी करामात दुनिया को दिखा सकते हैं। यह भी प्रसिद्ध था—कि नवाब कुदसिया बेगम को लड़का उन्हीं की बदौलत हुआ था।

तक़िए में दो आदमी बैठे धीरे-धीरे बातें कर रहे थे—एक ने कहा—"इन्हीं की दया से बादशाह की मुरादें बर आईं।"

"फिर भी किस क़दर सादगी और सफाई से रहते हैं।"

"खुदा परस्त बेलौस फ़कीर हैं।"

"आदमी पहुँचे हुए मालूम देते हैं।"

"इसमें क्या शक है, एकदम बेलौस, निर्लोभ।"

"किसी से कौड़ी नहीं लेते।"

"लंगोटे के भी सच्चे मालूम देते हैं।"

"बारह वर्ष तो यहीं बैठे हो गए। शहर के हिंदू-मुसलमान सभी आकर ज़ियारत करते हैं। सुबह दरबार लगता है। कितनी बेऔलाद औरतों को इनके हुक्म से बेटा हुआ है। कभी किसी से पैसा नहीं लेते। (धीरे से) कीमिया बनाते हैं।"

"अच्छा, यह भेद तो अब खुला।"

"अमा, छुप कर ग़रीबों को सोना बाँटते हैं। आधी रात को दरिया में नहा कर खुदा की इबादत में बैठते हैं। सो सुबह तक बैठे रहते हैं।"

"भूत प्रेत जिन सब काबू में हैं।"

"तभी तो यह करामात है।"

"अजी अक्सीर और तस्वीर खुदा के राज़ हैं। सीने-ब-सीने चलते हैं। जिसकी तकदीर में होता है, उस पर मेहरबान होते हैं तो उसे इल्म-ग़ैब बता भी देते हैं।"

: २४ :

नाज़ुक ठोकर

बांदी ने दस्तबस्ता अर्ज़ की, "आलीजाह, हुज़ूर शहनशाह क़ासिम अलीशाह तशरीफ ला रहे हैं। वे कहते हैं, हम खुद बादशाह और बेगम को दुआ देंगे।

बादशाह और बेगम हड़बड़ा कर खड़े हो गए। चांदी के हवादान पर सवार जिनों के बादशाह शहनशाह क़ासिम अलीशाह क़लन्दर आए। हवादान फ़र्श पर रखा गया, बादशाह और कुदसिया बेगम ने झुक कर पल्ला चूमा। जड़ाऊ कुर्सी पर बैठाया। उन्होंने हाथ उठाकर होंठों ही में बड़बड़ा कर आशीर्वाद दिया फिर वे एकदम उठ खड़े हुए। उन्होंने कहा—"बेगम अपने हाथ से ख़ैरात करें।"

वे चल दिए।

बेगम ने हँस कर बादशाह से कहा—"सुना आपने, शाह साहेब का हुक्म?"

"सुना, खैरात करो।"

"फिर?"

"कितना?"

"एक करोड़ तो करो।"

बादशाह ने हुक्म किया—अभी एक करोड़ रुपए का चबूतरा रूबरू चुना जाय। देखते ही देखते एक करोड़ का चबूतरा चुना गया। बादशाह

बेगम ने पास जाकर देखा और कहा—'बस, एक करोड़ इतना ही होता है ?"

उसने एक नाज़ुक ठोकर चबूतरे पर लगाई। और हुक्म दिया—"लूट लो।"

देखते ही देखते वह एक करोड़ रुपया आज़ादों, मजबूबों, और साकियों को लुटा दिया गया।

इसके बाद चौदह दिन जश्न मनाने का हुक्म हुआ, जिस में असंख्य धन-रत्न स्वाहा हो गया।

: २५ :

बाज़ार का रुख़

आज लखनऊ के बाज़ार में बड़ी उत्तेजना फैली हुई थी। पहर दिन चढ़ गया, परन्तु अभी तक आधी से अधिक दूकानें बन्द थीं। बकरू नानबाई ने दूकान में तंदूर को गरमाने के बाद पाव-रोटी सजाते हुए पड़ौस के लाला मटरू मल से कहा—

"चचा मटरू, अभी तक दूकान नहीं खोली, इस तरह गुमसुम कैसे बैठे हो, दो पहर दिन चढ़ गया।"

मटरू लाला सिकुड़े हुए दूकान के आगे हाथ में चाबियों का गुच्छा लिए बैठे थे। उन्होंने नाक-भौं सिकोड़ कर कहा—"क्या करूँ दूकान खोल कर, अभी सरकारी हाथी आएँगे—और सब जिन्स चबा जाएँगे। कौन लड़ेगा भला इन काली बलाओं से।"

"सचमुच चचा यह तो बड़ा अन्धेर है। कल ही की लो, पाँच सेर आटा गूँद कर रखा था, एक ही चपेट में सफ़ा कर गया। तंदूर तोड़ गया घाते में। खुदा ग़ारत करे। नवाब आसफुद्दौला के ज़माने से दूकानदारी करता हूँ—पर ऐसा अन्धेर तो देखा नहीं।"

"तुम अपने तंदूर और पाँच सेर आटे की गाते हो म्याँ। मेरी तो

मन भर मक्का साफ कर गया। महावत साथ था। महावत को मैंने डाँटा तो वह शेर हो गया। और उल्टा मुझी को आँख दिखाने लगा—कहने लगा—"मैं क्या करूँ? सरकार से पीलखाने के खर्च का रूपया मिलता ही नहीं; इसलिए एक-एक महावत अपने हाथी के साथ तीसरे दिन बाज़ार आता है। जो हाथ लगा—उससे पेट भरता है।

इतने में नसीबन कूंजड़िन वहाँ आ गई। उसने कहा—

"अधेले की रोटी और अधेले का सालन दो म्या बकरू, ज़री बोटियाँ ज्यादा डालना।"

"अधेले में क्या तुम्हें सारी देग उलट दूं?"

"तो मरे क्यों जाते हो, सालन के नाम तो नीला पानी ही है।"

"लखनऊ भर में कोई साला मेरे जैसा सालन बना तो दे, टाँगों तले निकल जाऊँ। ला, प्याला दे। कल हाथी ने तेरा भी तो नुकसान किया था?"

"ए खुदा की मार इस हाथी पर, मुआ टोकरे भर खरबूज़े खा गया। घेले तक की बोहनी न हुई थी, बस ला कर रखे ही थे। मैंने डराया तो मुआ सूंड उठा कर झपटा मेरे ऊपर। मैं भागी गिरती-पड़ती। पर किस से कहें, यहाँ नखलऊ में तो बस इन डाढ़ीज़ार फ़िरंगियों की चलती है। और किसी की दाद-फ़रियाद कोई नहीं सुनता।"

इसी समय मियाँ नियामत हुसैन चकलादार हाथ में ऐनक लिए आ बरामद हुए। फटा पायजामा, फिड्डक जूतियाँ और पुरानी शेरवानी, दुबले-पतले फूँस से आदमी। आते ही बोले—"म्याँ बकरू, झपाके से दमड़ी का रोग़नजोश, दमड़ी की रोटी और अधेले की कलेजी दे दो।"

"खूब हैं आप, पैसे के तीन अधेले भुनाते हैं। लाइए पैसा नक़द।"

"म्याँ अजब अहमक़ हो, चकलेदार हैं हम, कोई उठाईगीर नहीं।"

"माना आप चकलेदार हैं, इज्जतवाले हैं; मगर सुबह-सुबह उधार के क्या मानी? फिर पिछला भी बक़ाया है। अब आप को उधार भी दें और अहमक़ भी बनें।"

"अगले-पिछले सभी देंगे, तनख्वाह मिलने पर।"

"यह तो मैं साल भर से सुनता आ रहा हूँ।"

"तो भई, मैं क्या करूँ, तीन बरस से तलब नहीं मिली।"

"तो छोड़ दो नौकरी।"

"नौकरी छोड़ कर क्या करूँ ?"

"घास खोदो।"

"कमज़र्फ़ आदमी, हमें घास छीलने को कहता है—हम चकलादार हैं, नहीं जानता।"

"तो हज़रत, पैसा नक़द दीजिए—और सौदा लीजिए। क्या ज़रूरी है कि हम अपना माल दें और गालियाँ खाएँ।"

"अजब ज़माना आ गया है, रज़ील लोग शरीफ़ों का मुँह फेरते हैं, सरकारी अफ़सरों को आँखें दिखाते हैं।"

"तो साहब, हम तो अपना पैसा माँगते हैं। उधार बेचें तो खाएँ क्या ?"

"तुफ़ है उस पर जो इस बार तनख्वाह मिलने पर तुम्हारा चुकता न करे। लो लोगो हम चले।"

"ख़ैर, तो इस वक्त तो लेते जाइए चकलादार साहब, हम रज़ील लोग हैं, मुल दूकान के आगे खाली गाहक भेज नहीं सकते।"

चकलादार साहब नर्म हुए। कहने लगे—"भई, हम क्या करें, मुल्के-ज़मानिया साहब लोगों को लाखों रुपये रोज़ देते हैं, पर नौकरों को तलब नहीं मिलती। हाथी आवारा हो कर बाज़ारों में फिरते हैं, उन्हें राशन नहीं दिया जाता।"

इसी वक्त मौलाबक्स खानसामा आ गया। पिछली बात सुन कर कहा—"भई, अब तो दो साल और तलब नहीं मिलेगी। नवाब कुदसिया बेगम को लड़का हुआ है। उसके जश्न का हुक्म है। करोड़ों रुपया ख़र्च होगा। सुना नहीं तुम ने, बेगम ने करोड़ रुपये का चबूतरा लुटवा दिया।"

"हाँ भाई, बादशाह हैं। पर रियाया का भी तो ख़्याल रखना लाज़िम है।"

सामने की दूकान पर करीमा फुल्कियाँ वाला गर्मागर्म फुल्कियाँ उतार रहा था। मियाँ अमजद तहमद कड़काते आए—एक पैसा झन्नाटे से थाल में फेंक कर कहा—"म्या दे तो एक पैसे की गर्मागर्म।"

'एक पैसे की क्या लेते हो, कल्ला भी गर्म न होगा। दो पैसे की तो लो।"

"दो ही पैसे की दे दो यार, मगर चटनी ज़रा ज़्यादा देना।"

फुल्की वाले ने बीस फुल्कियाँ दोने में भर कर अमजद के हाथ में दीं। और चटनी की हाँडी, आगे सरका कर कहा—'ले लो, जितना जी चाहे।"

"अमजद ने चटनी दोने में भरी और कहा—"यार, चटनी तो बासी मालूम पड़ती है।"

"लो और हुई। म्या, अभी तो पाव भर खटाई की चटनी बनाई है। आप चटनी पहचानने में खूब मश्शाक हैं।"

"तो तेज क्यों होते हो म्या। मैंने बात ही तो कही।"

"और मैंने क्या तमाचा मारा, क्या जमाना आ गया, लखनऊ शहर में अब तमीजदारों की गुज़र नहीं।"

"आक्खाह, तो आप तमीज़दार हैं।"

ये बातें हो ही रही थीं कि हुसेन खां जमादार रक़ाबी लिए लपकते आए। बोले—"म्या क़रीम, ज़रा दो पैसे की फुल्कियां तो देना यार, घान ज़रा खरा करके निकालो, खूब फुल्कियां बनाते हो यार। इस कदर मुँह लग गई हैं कि ख़ुदा की पनाह। नख़ास से आना पड़ता है तुम्हारी दूकान पर।"

"तो पैसे निकालिए साहब।"

"इसके क्या माने ! शरीफों से ऐसी बात ?"

"तो हुज़ूर, मैं उधार कहाँ से दूँ। ग़रीब दूकानदार हूँ। पेट भरने को सुबह-सुबह यहाँ पर खून जलाता हूँ। आप हैं कि सुबह-सुबह हाज़िर। एक दिन, दो दिन, तिन दिन, आखिर कबतक ? पूरे नौ आने उधार हो गए।"

"इसे कहते हैं कमीनपना। न किसी की इज्ज़त का ख्याल, न रुतबे का। मुँह में आया, बक़ गए। अबे हम सरकारी जमादार हैं, चरकटे नहीं।"

"तो जमादार साहब पैसे नक़द दीजिए, उधार की सनद नहीं।"

जमादार ने दो पैसे टेंट से निकाल कर फेंक दिए। तैश में आकर बोले—"अब कौन तुम से मुँह लगे। अब से जो तुम्हारी दूकान पर आए उस पर सात हर्फ़।"

दूकानदार ने पैसे उठाए। और ज़रा नर्म हो कर कहा—"नाराज़ न हों, हम टके के आदमी, इतनी गुंजाइश कहाँ कि उधार सौदा दें जमादार साहब। लीजिए चटनी चखिए, क्या नफीस बनाई है। ये मिया कहते हैं—बासी है।"

उसने रकाबी में गर्मागर्म फुल्कियाँ और चटनी रख दी। जमादार साहब ने खुश हो कर कहा—"यह फुल्कियाँ चटनी तो तुम लखनऊ भर में बनाने वाले एक ही हो।"

"हुज़ूर, यह आंच का खेल है, निगाह चूकी कि बिगड़ा।"

"भाई बड़ी कारीगरी का काम है, बस तुम्हारा ही दम है। पैसों का खयाल न करना हाँ, बस तनख्वाह मिली कि तुम्हारे पैसे खरे। अजी बरसों से हम तुम्हारी दूकान से फुल्कियाँ लेते हैं। अब चलता हूँ। हसनू की दूकान से धेले का तम्बाकू और रज्जब कूँजड़े से धेले की अरावियां लेनी हैं। मगर यार हसनू का जंगी हुक्का हर वक्त तैयार। उधर से जाने वाले पर लाजिम है, एक कश जरूर लगाए। सौदा ले या न ले। ओफ्फो दो पैसे की अफीम की पुड़िया भी लेनी है। लो भई, अब तो सदर तक दौड़ना पड़ा।" जमादार तेजी से चल दिए।

: २६ :

शरीफज़ादे

गर्मी की सुबह। अभी सूरज उठा नहीं—हवा ठण्डी चल रही थी। लोग रात भर गर्मी के मारे करवटें बदलते रहे और तड़पते रहे। उनकी आँख में नींद का खुमार भरा था। मगर बिस्तर छोड़ कर उठ बैठे थे। कोई हुक्का भरने की फिक्र में, और कोई हाथ मुँह धोने की जुगत में। कोई कपड़े पहन रहा था। परन्तु कुछ लोग इस वक्त की ठंडी हवाके झोंकों में मीठी नींद के मज़े ले रहे थे। मीर आग़ा अपने छोटे से कमरे के आगे चबूतरे पर मोढ़े पर बैठे हुक्का पी रहे थे। अभी एक दो क़श लिए होंगे कि पड़ौस के मिर्जा डेढ़ख़ुम्मा हुक्का—खूब सुलगा हुआ—हाथ में लिए बराबर मोढ़े आ बैठे। मीर साहब ने कहा—"मिर्जा साहब, वल्लाह आप का हुक्का तो इस वक्त कयामत कर रहा है।"

मिर्जा ने हुक्का मीर साहेब के आगे रख कर कहा—"लीजिए, शौक कीजिए। मुलाहिज़ा फर्माइए।"

"खुदा जाने करीम खां किस तरह हुक्का भरता है। पहर भर हो गया, सुलगने का नाम नहीं।"

"उसे मुझे इनायत कीजिए।"

करीमा से बदनामी चुपचाप बर्दाश्त नहीं हुई। उसने कहा—"हुजूर, भारी तवा है, सुलगते-सुलगते ही सुलगेगा। लाइए फूंक दूं।" उसने चिलम की ओर हाथ बढ़ाया। मिर्जा ने हुक्का अपनी ओर खींचते हुए कहा—"अमा क्या हुक्के को ग़ारत करोगे, ठहरो मैं दुरुस्त किए लेता हूँ।"

मीर साहब ने मिर्जा के हुक्के पर दखल कर के मुस्कुराते हुए कहा—"भई मिर्जा, वाकई आप हुक्के की नब्ज पहचानते हैं। बस मसीहा हैं आप हुक्के के। लीजिए, पान शौक फर्माइए।" उन्होंने पानदान मिर्जा के आगे सरका दिया।

मिर्जा साहब ने दो गिलौरियां मुंह में ठूंसते हुए कहा—"कहिए, साहब

शहर के क्या हालचाल हैं। आज तो बाजार में कुछ रौनक ही नज़र नहीं आ रही।"

"जी हाँ, ज़माना टेढ़ा है। शरीफजादों की मुसीबत है।" मीर साहब ने एक गहरी सांस ली।

धूप काफ़ी चढ़ आई थी। आग़ामीर और मिर्ज़ा जी भर कर हुक्का पी कर ताज़ादम हो गए थे। आग़ामीर मार्के के आदमी थे। छोटे-बड़े सभी के काम आते थे। रहते थे ठस्से से। क़रीमा उनका पुराना ख़िदमतगार था। सब तरह का काम वह करता था। मगर सौदा-सुलफ लेने जाता तो सुबह का गया शाम ही को लौटता था। मीर साहब के मकान के आगे कहारों का अड्डा था। लोग समझते थे, ये मीर साहब के नौकर हैं। फीनस आपके दरवाज़े पर रहती थी, जब ज़रूरत हुई सवार हो लिए। कहार हाज़िर। आप रईसों के बड़े-बड़े मुक़दमे क़जिए सुलझाते। उनकी पैरवी करते। लखनऊ भर के जालिए, मुक़दमेबाज, झूठी गवाही देने वाले, जाली दस्तावेज बनाने वाले आपको घेरे रहते थे। उनकी आमदरफ्त रेजीडेन्सी तक भी थी। और वे अंग्रेज़ों के खुफिया नवीस थे। पर मुँह पर कोई नहीं कहता था।

दो आदमी आग़ामीर के हत्थे चढ़े थे, एक मियाँ करीम खाँ; जो शाही महल के खास ड्योढ़ीदार थे; दूसरी बी इमामन, जो शाही महलसराय महरी थी।

दोनों से आग़ामीर के बहुत काम निकलते थे। महल का राई-रत्ती हाल उन्हें मिलता रहता था। मियाँ करीम खाँ सूखे मिजाज़ के आदमी थे। किसी से ज़्यादा दोस्ताना नहीं रखते थे। पर बी इमामन से उसकी आश्नाई थी। रात को दोनों साथ खाना खाते। आठ बजे उनकी ड्योढ़ी से छुट्टी हो जाती। वे हाथ-मुँह धो, बन-ठन कर तैयार बैठे, इमामन की इन्तजार करते। बस नौ की तोप छूटी कि बी इमामन की छुट्टी हुई। शाही दस्तरख़ान से कोई सेर भर चपातियाँ और दो-चार मीठे टुकड़े, प्याली में सालन लिया, इसके अलावा बेगमे आलिया के दस्तरख़ान का

बचा हुआ खाना । सफ़ेद रूमाल में बाँधा, दीनू हलवाई से तीन पैसे की पाव भर मलाई ली । धेले की शक्कर, पैसे की अफीम, धेले का तमाखू और पहुँच गई । मजे से खाना खाया, घुल-घुल कर बातें कीं, और मिल-जुल कर रात काटी । बस इसी तरह उनके दिन-रात कटते जाते थे ।

जिस दिन की सुबह का हम जिक्र खैर कर रहे हैं, उससे पहली शाम को आग़ा मीर के हाथों पाँच रुपया नक़द करीम ख़ाँ की मुट्ठी में पहुँचे थे । और करीम ख़ाँ इस वक्त अपने को रईस समझ रहे थे । उन्होंने बी इमामन के लिए नौ आने का साढ़े तीन गज़ चिकन और डेढ़ गज़ जाली विजनवेग़ के कटरे से ख़रीदी थी । कपड़ा देख कर इमामन ने तुनककर पूछा—

"कहाँ से रुपया मार लाए ?"

"कहीं से मार लाए, तुम्हें आम खाने या पेड़ गिनने······?"

"जरूर कहीं मूँठ चलाई है, लो हम कहे देते हैं ।"

"तुम्हारे सिर की क़सम है जो हम ने यह काम किया हो ।"

"तो फिर ?"

"मिल गई एक आसामी, अब तुम चाहो तो पौ बारह हो जाय ।"

"कुछ कहोगे भी या पहेलियाँ बुझाओगे ?"

"लो कहे देते हैं, बस आग़ामीर वाली बात है ।"

"अए हए, मुआ आग़ा हमें तोप से उड़वाना चाहता है ।"

"अजब बेतुकी हो । तोप से उड़ाने की क्या बात है ?"

"ख़ैर तो कहो, क्या चाहता है वह ?"

"वह नहीं, छोटा फिरंगी । रेजीडेन्सी वाला ।"

"हाँ हाँ, वही मुआ बन्दर मुआ, वह क्या चाहता है ?"

"बस इतना ही कि बादशाह-बेगम और बादशाह सलामत के ख्तजाप्त के हालचाल और नई बेगम के हालात उन्हें मालूम होते रहें ।"

"तो यह तो सातों विलायत में रोशन है कि नई बेगम के जो लड़का हुआ है वही तख्त का वारिस होगा।"

"लेकिन यह कौन जानता है कि बादशाह-बेगम इस बात को पसन्द करेंगी भी या नहीं।"

"उई रे, यह बात ये फ़िरंगी जान कर क्या करेंगे। बादशाह-बेगम भी इस फ़िक्र में हैं—कि जादू-टोना करके बादशाह को क़ाबू करें, वह उनके महल में आयें—और उनके पेट से भी बच्चा हो जो लखनऊ की गद्दी का सच्चा वारिस हो।"

"मुल्के जमानिया तो नई बेगम के लड़के को वारिस मानते नहीं ?"

"कैसे बनाएँगे, कोई हंसी-ठठ्ठा है। बेस्वा का लड़का अवध का बादशाह बनेगा, तो बादशाह-बेगम का लड़का क्या भिश्ती का काम करेगा ?"

"तो पहले उनके लड़का हो भी तो ले।"

"उन्होंने हज़रत अब्बास की दरगाह की जियारत की है और मानता मानी है। उनके लड़का होगा। मैं कहे देती हूँ। हज़रत अब्बास भी जागती जोत हैं।"

"और नई बेगम जो क़ासिम अलीशाह की मुरीद हैं ?"

"कौन क़ासिम अलीशाह ?"

"कोई शाह साहब हैं, पहुँचे हुए।"

"शाह साहब हैं या कोई जालिए हैं।"

"क़ासिम अलीशाह को नहीं जानतीं, सातों विलायत में उन की धूम है। बड़े करामाती हैं।"

"अल्ला रे अल्ला, ये कौन औलिया नखलऊ में पैदा हुए, कहीं छथन का लौंडा क़ासिम तो नहीं। जो मिर्जा के यहाँ चार आना माहवार और खाने पर नौकर था ?"

"हाँ-हाँ, वही है। अब तो ग़ैबी ताक़तें और जिन्नात उसके बस में हैं। चाहे तो फूंक से पहाड़ को उड़ा दे।"

"मुँह झोंस दूँ उस मुए चोट्टे का। जिसे उसकी असलियत न मालूम हो उसे कहो। मैं तो उसकी सात पुश्तों को जानती हूँ।"

"लेकिन लखनऊ में उसके बहुत मौतकिद है। सबकी मुरादें वह पूरी करता है।"

"खाक पत्थर करता है। कोई उनसे यह नहीं कहता कि यह मुआ उठाईगीर है।"

"तोबा कहो बी इमामन। वह अब जब शाही महल में आता है तो मुल्के जमानिया उसके जूते सीधे करते हैं। और नई बेगम खड़ी होकर आदाब बजाती हैं।"

"खूब, तो तुम अब यही खबरें बेचने का धंधा करते हो? जड़ो एक-एक की दो-दो, इन फिरंगियों से और वसूलो रुपये मुट्ठी भर कर। पर इन मुए बन्दरमुँहों को पराए फटे में पैर डालने से क्या मिलता है। शाही महल में कहाँ क्या होता है, इससे उन्हें क्या लेना-देना है?"

"हमें इससे क्या, सिर्फ इधर की खबर उधर देने से हमारी मुट्ठी गर्म हो तो हमारा क्या बिगड़ता है, अपना-अपना शौक ही तो है। जरी तुम भी बेगम महल के हालचाल देती रहो।"

"तो आधी रक़म मैं लूँगी।"

"सब तुम्हारा ही है बीबी जान, इस क़दर खुदगर्ज न बनो।"

"खैर अब सो रहो खैर सल्ला से। अच्छा सीग़ा निकाला तुमने आमदनी का। मगर ज़रा हाथ पैर बचा कर काम करना।"

बेफिक्र रहो। मैं कच्ची गोली नहीं खेलने का।"

इसके बाद दोनों दोस्त इत्मीनान से एक ही चारपाई पर सो रहे।

: २७ :

शाह अब्बास की दरगाह में

प्रत्येक मास के हर प्रथम जुमे को बादशाह-बेगम हज़रत शाह

अब्बास की दरगाह में जाकर नमाज़ पढ़तीं और पुत्र उत्पन्न होने की दुआ माँगती थीं। उनकी नेक ख़सलत, पतिव्रत धर्म, पवित्र विचार, दया-लुता और धर्म की लखनऊ में धूम मची थी। बादशाह-बेगम पुत्र-कामना से प्रत्येक मास के हर प्रथम जुमे को दरगाह में नमाज पढ़ने आतीं हैं, और वहाँ से लौटने के समय कंगालों और फकीरों को दस हज़ार रुपया खैरात बांटती हैं। यह बात प्रसिद्ध हो गई थी। उस दिन दूर-दूर के कंगले, भिखारी दरवेश फकीर दरगाह और बेगम-महल की राह के दोनों ओर खड़े होकर दान ग्रहण करते और बेगम को पुत्र होने की दुआ देते थे।

जिस सुबह की बात हम पिछले अध्याय में कह आए हैं, उसी सुबह बादशाह-बेगम की सवारी दरगाह आ रही थी। सबसे आगे जंगी विला-यती बाजा बज रहा था। इसके बाद गंगा-जमनी काम की पालकी में बादशाह बेगम बैठी थीं। पालकी पर जरबफ्त और जरदोजी काम केपर्दे पड़े हुए थे तथा पालकी पर रत्न-जड़ित छत्र था। यह छत्र बादशाह-बेगम के अतिरिक्त कोई दूसरा नहीं धारण कर सकता था। यह पालकी असाधारण दोतल्ला थी। जर्क वर्क पोशाकें पहने बीस कहार पालकी को कन्धों पर उठाए हुए थे। पालकी के पीछे स्त्री सेना की पचास स्त्रियां सैनिक वर्दी डाटे, कन्धे पर धनुष वाण और हाथ में नंगी तलवार लिए चल रही थीं। इन स्त्रियों के पीछे आसा वर्दार और चोपदार निशान लिए चल रहे थे। सब के पीछे सिर से पैर तक सुनहरी पोशाक से लदा हुआ सोने के हौदे में रत्न-जड़ित मुकुट रखे बेगम महल का प्रधान खोजा अकड़ कर बैठा हुआ था।

बादशाह-बेगम की सवारी धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी, पर बाज़ार में उदासी और सन्नाटा था। लोगों के कारोबार बन्द थे। सरकारी आद-मियों के अत्याचारों और लूट-खसोट से तंग आकर लोगों ने हड़ताल की हुई थी पर इन बातों की ओर किसका ध्यान था।

दरगाह में जाकर बेगम ने नमाज़ पढ़ी, दुआ मांगी। और बड़ी देर तक बैठी रहीं। बदनसीब बेगम नहीं जानती थी--कि पुत्र की प्राप्ति

न दरगाह में मानता मानने से होती है, न दान पुण्य से, न रोज़ा-नमाज़ से। उसका आवारा-गर्द पति—जो अपने को बादशाह कहता था—आवारा स्त्री पुरुषों में गन्दी ज़िन्दगी व्यतीत कर रहा था। और बेचारी बेगम इस प्रकार पुत्र की भीख मांगती फिर रही थी। प्रजा भूखी-नंगी-बेबस पीड़ित थी। महल में रुपया पानी की तरह बहाया जा रहा था। और सारी रियाया लूट—अकाल—बदइन्तज़ामी और अन्धेरगर्दी के फन्दे में फंसी थी। ऐसे ही दिन लखनऊ में बीत रहे थे।

: २८ :

इशरत-मंजिल का जश्न

इशरत-मंजिल में बड़ी बहार थी। बादशाह की चहेती बेगम नवाब कुदसिया बेगम ने पुत्र-रत्न को जन्म दिया था। बादशाह नसीरुद्दीन हैदर अपने अंग्रेज़ मुसाहिबों के साथ अंग्रेज़ी लिबास पहने विलायती शराब के प्याले पर प्याले उड़ा रहे थे। इस वक्त लखनऊ में हिन्दुस्तान भर की तवायफें, भाँड, नक्काल, गवैये तथा कलावन्त इकट्ठे हो गए थे। वे सब बादशाह को अपने करतब दिखा कर उन्हें प्रसन्न करना चाहते थे। पर बादशाह की बोलती उस काने हज्जाम के हाथ थी।

खाने का वक्त हो गया था। ख़वास और बावर्ची शाही दस्तरखान चुन रहे थे, जिस पर ये लफंगे अंग्रेज़ बढ़-बढ़ कर हाथ साफ़ करने वाले थे। भाँति-भाँति के देशी और विलायती पकवान और भुने माँस परसे जा रहे थे, जिनकी सुगन्ध से कमरा महक रहा था। फ्रान्सीसी बावर्ची ने धीरे से हज्जाम के कान में कहा कि शाही दस्तरख़ान तैयार है।

हज्जाम ने ज़मीन तक झुक कर बादशाह से कहा—"योर मेजेस्टी, खाना आपकी इन्तज़ार कर रहा है।"

बादशाह खिलखिला कर हँस पड़े। उन्होंने कहा—"क्या खूब, खूब

फिकरा निकाला। खाना हमारी इन्तज़ार कर रहा है। जैसे कि हम उसकी इन्तज़ारी कर रहे थे।"

बादशाह जा कर अपने मुसाहिबों के साथ दस्तरखान पर जा बैठे। बादशाह ने सुगन्धित पुलाव पर हाथ बढ़ाते हुए कहा—"हाँ मिस्टर विलियम, तुम्हारे यहाँ क्या पुलाव इसी क़िस्म का बनता है ? मेरा यह फ्रान्सीसी खानसामा तो इसे वैसा अच्छा नहीं बना सकता, जैसा मजहर अली बनाता है, क्यों मि० सफदरजंग ?"

बादशाह दर्जी को मज़ाक में सफदरजंग कहते थे। उसने कुर्सी पर खड़े हो कर और अदब से झुक कर कहा—"यस, योर मेजेस्टी आप सही फर्मा रहे हैं। इस समय नाई ने बात काट कर कहा—"मगर नहीं, खुदा की क़सम, अगर मजहर अली जैसा बेवकूफ खानसामा इंगलैण्ड में पहुँच जाय तो वहाँ इसे खड़ा-खड़ा निकाल दिया जाय।"

"सच ? यह क्यों ? क्या वह दुनिया में सबसे ज़्यादा बेहतर पुलाव बनाना नहीं जानता ?" बादशाह ने एक निवाला मुँह में डालते हुए कहा।

"यह मैं नहीं कहता योर मेजेस्टी, लेकिन वहाँ एक से बढ़ कर एक खानसामा है।"

बादशाह की त्योरियों में बल पड़ गए। वे नाखुश हो कर खाना खाने लगे। इसी समय बादशाह के चचा मुर्तिज़ाबेग़ आ कर बादशाह से कोई बीस क़दम के फ़ासले पर खड़े हो कर आदाब बजाने लगे।

नवाब मुर्तिज़ाबेग़ बूढ़े आदमी थे। उनकी उम्र अस्सी को पार कर गई थी। इनकी गोल गुच्छेदार डाढ़ी, छोटी-छोटी आँखें, झुकी हुई कमर, बदन पर आबेरवाँ का अंगरखा, ढीला लखनवी पायजामा। बूढ़े नवाब की गर्दन रह-रह कर हिल रही थी।

उसे खड़े-खड़े कोर्निश करते देख हज्जाम ने कहा—"योर मेजेस्टी, देखिए यह बूढ़ा खूसट किस तरह गर्दन हिला-हिला कर हुजूर वाला की तौहीन कर रहा है।"

बादशाह का इस वक्त मिजाज गर्म हो रहा था। उस पर विलायती शराब का रंग भी चढ़ा था। उनकी आँखें लाल हो रही थीं, उन्होंने अध पिया पैग होंठों से हटा कर गुर्रा कर कहा—"क्या कहा तौहीन, खुदा की क़सम, तौहीन ? कैसी ?"

"योर मेजेस्टी, यह बूढ़ा बारबार गर्दन हिला कर कह रहा है कि आप बादशाह नहीं हैं।"

बादशाह को याद आ गया। तख्तनशीन के वक्त बादशाह के इस चचा ने नसीर का विरोध किया था और अपना हक़ ज़ाहिर किया था—उसी बात को याद कर बादशाह गुस्से में उछल कर कुर्सी से उठ खड़ा हुआ।

बदनसीब बूढ़ा नवाब बहरा भी था और उसे आँखों से भी कम दीखता था। वह बादशाह और नाई की कुछ भी बात नहीं समझ सका। उसकी गर्दन उसी तरह हिल रही थी।

नाई ने कहा—"योर मेजेस्टी देखते रहें, मैं अभी इसे ठीक कर देता हूँ।" इतना कह कर नाई अपनी जगह से उठा। उसने एक पतली-सी डोरी जेब से निकाली। उसमें एक फंदा लगा कर काँटा फाँस लिया। फिर उसने बूढ़े नवाब के पीछे जा कर वह काँटा उसके गलमुच्छों में फंसा दिया। इसके बाद वह उसे एक झटका देकर हँसने लगा। झटके के साथ बूढ़े नवाब की गर्दन भी डगमग हिलने लगी, परन्तु वह बारबार झुक कर बादशाह को सलाम करता रहा। यह देख नवाब और उसके अंग्रेज़ मुसाहिब खिलखिला कर हँस पड़े।

बूढ़े नवाब किसी तरह नाई के झमेले से जान बचा कर भागे। नाई फिर बादशाह की बग़ल में बैठ कर मुर्ग़-मुसल्लम पर हाथ साफ करने लगा।

इस वक्त बादशाह खूब गहरे उतरे हुए थे। नाई ने उन्हें अन्धाधुन्ध खूब पिलाई थी। इस समय चार खवास बादशाह सलामत की खिदमत में हाजिर थीं। दो बादशाह पर मोर्छल ढल रहीं थीं, तीसरी पानदान

और चौथी हुक्का लिए खड़ी थी। चारों ख़वास कमसिन—सुन्दरी और बहुमूल्य वस्त्राभूषणों से सज्जित थीं। कायदे के मुताबिक मुसाहिबों को इन की ओर आँख उठा कर देखने का नियम न था। क्यों कि इस बात का कुछ ठीक ठिकाना न था—कि उनमें से कोई एक कब बादशाह की बेगम बन जाय। परन्तु ये अंग्रेज़ शैतान यह बात भी भली भाँति जानते थे कि जहाँ दो चार पैग क्लारेट बादशाह के पेट में गए कि फिर किसी सावधानी की आवश्यकता नहीं है। इस समय तो बादशाह खूब गड़गप हो रहे थे। अतः काना नाई एक ख़वास से बड़ी देर से आँखें लड़ा रहा था। और अब उसने अवसर देख कर ख़वास से बातें भी करनी शुरू कर दीं थी। बातें बहुत धीरे-धीरे हो रहीं थीं, पर बादशाह ने एक शब्द सुन लिया—'बेगम,' उन्होंने चौक कर कहा—"क्या कहा ? तुम लोग बेगम की बावत गुफ्तगू कर रहे हो।"

ख़वास की रूह फ़ना हो गई। पर हज्जाम ने कुर्सी से उठ कर कहा—"नहीं योर मैजेस्टी, कोई बात नहीं थी।"

"झूठ बोलते हो खाँ साहब, हमने अपने कानों से सुना—तुम ने बेगम का नाम लिया था।"

हकीकत यह थी कि हज्जाम ने बेगम के लिए कई लाख का विलायती माल मंगाया था, जिसमें उसने खूब लूट खसोट की थी। ख़वास उसमें हिस्सा मांग रही थी और बेगम से कह देने की धमकी दे रही थी।

बादशाह कुर्सी से उछल कर खड़े हो गए। उन्होंने आपे से बाहर हो कर कहा—"बोल, क्या बात है।"

नाई बड़ा प्रत्युत्पन्नमति था। उसने कहा—"आलीजाह खाना खाकर आरामगाह में तशरीफ ले चलें, वह बात जो दरहकीकत बहुत बुरी है। और तखलिए में कहने योग्य है। मैं हिजमेजेस्टी की सेवा में अर्ज कर दूंगा।

बादशाह ने कसी हुई मुट्ठी में हज्जाम का हाथ पकड़ लिया। उसने

कहा—"अभी चल।"

एकान्त में पहुँच कर धूर्त हज्जाम ने कहा, "योर मैजेस्टी, रहम, रहम।"

"लेकिन वह बात कह।"

"योर मैजेस्टी, खवास को कई बार बेगम महल में किसी मर्द के आने का खटका हुआ है। इस वक्त भी वह कुछ ऐसा ही इशारा कर रही थी। वह आलीजाह से अर्ज करना चाहती थी पर मैंने कहा—"जब तक हिज-मैजेस्टी खाना खा रहे हैं, वह चुप रहे।"

"उफ़ फाइशा।" बादशाह आग बबूला हो गए। फिर बोले—"याद रखना खान, अगर झूठ बात साबित हुई तो तुझे और उस औरत को जमीन में गड़वा कर कुत्तों से नुचवा डालूँगा।"

नाई ने सिर झुका लिया। उसने कहा—'योर मैजेस्टी यह खादिम हुजूर का जांनिसार गुलाम है।"

बादशाह का अंग-प्रत्यंग कांप रहा था। वह बड़े-बड़े डग भरते हुए बेगम महल की ओर चल दिए।

: २६ :

हीरे की कनी

कुदसिया बेगम एक महीन ओढ़नी ओढ़े मसनद पर लुढ़की पड़ी थी। कोई बांदी उसका दिल बहलाने को दिलरुबा के तार छेड़ रही थी। अभी उसके चेहरे पर पीलापन छाया हुआ था—प्रसव की दुर्बलता से वह अभी मुर्झाई कली के समान हो रही थी। उसका नन्हा सा बालक सुनहरी पालने में पड़ा अंगूठा चूस रहा था। कुदसिया बेगम देख रही थी—उस की आँखें हंस रही थीं—आज उसके बराबर भाग्यवती स्त्री कौन थी।

एकाएक महल में हड़बड़ी मच गई। बादशाह बिना इत्तलाह गैरदस्तूर महल में धंसे चले आए। बाँदियाँ-मुग़लानिया पासवानें हड़-बड़ा कर भाग खड़ी हुईं। बेगम ने खड़े हो कर हंस कर बादशाह की कोर्निस की।

परन्तु नसीरुउद्दीन क्रोध से लाल हो रहे थे। क्रोध और शराब ने उनकी बुद्धि पर परदा डाल दिया था। उन्होंने बेगम और बच्चे की तरफ आँख उठा कर भी नहीं देखा। बेबारीक नज़रों से इधर उधर देखते पर्दों मसनदों, मसहरियों को उलट-पुलट करने लगे।

बेगम का मुँह सूख गया। अपमान का घूँट पी कर उसने अपने होंठ काट कर कहा—"जहाँ-पनाह, यहाँ किसे ढूँढ रहे हैं। और इस बे-वक्त हुज़ूर के बिना इत्तला आने की वजह क्या है।"

"मैं तुम्हारे यार को ढूँढ रहा हूँ, जिसे तुम महल में बुलाती और मेरी आँखों में धूल झोंकती रही हो। इसके अलावा मुझे अपने ही महल में आने के लिए किसी के हुक्म की ज़रूरत नहीं है।"

बेगम ने जवाब नहीं दिया। कलेजा थाम कर वह भीतर चली गई। बादशाह देख भाल कर उल्टे पैर लौट आए। अपनी आरामगाह में आकर वे चुपचाप बैठ गए। उनके अंग्रेज मुसाहिब और हज्जाम इस वक्त

वहाँ से खसक चुके थे। ख़वास ने मुश्की तमाखू भर कर रख दिया, बादशाह चुपचाप कश खींचने लगे।

इसी वक्त प्रधान खोजा बदहवास दौड़ा हुआ आया, और बादशाह के कदमों में गिर कर बोला—मुल्के-ज़मानिया, गजब हो गया, नवाब बेगम हीरे की कनी खा गईं। और अब वे मर रही हैं।"

बादशाह झपटते हुए महल में गए। बेगम चुपचाप ज़मीन पर पड़ी थी, उसके शरीर पर कोई अलंकार न था। एक बहुत मामूली ओढ़नी से उसका शरीर ढका था। धीरे-धीरे उसका रंग काला पड़ता जाता था—और शरीर ऐंठता जाता था। बादशाह ने उसके पास ज़मीन पर बैठ कर कहा—

"यह तुम ने क्या कर डाला बेगम!"

कुदसिया बेगम हंस दी। उसके दाँत और ओंठ काले पड़ गए थे। उसने कहा—मुल्के-ज़मानिया, एक वफादार बीवी, अपने शौहर की शक्की नज़र नहीं बर्दाश्त कर सकती। दुनिया में आपके जैसा प्यार करने वाला, सखी और नेकदिल-दरियादिल खाविन्द कौन हो सकता है, लेकिन एक रज़ील खानदान की ज़र-खरीद लौंडी पर शक करना आप जैसे बादशाह के लिए कुछ ज्यादा ऐब की बात नहीं। बादशाह को हमेशा इसी तरह चौकन्ना रहना चाहिए।

वह फिर हंसी और एक हिचकी ली, उसीके साथ उसके प्राण पखेरू उड़ गए।

: ३० :

नया माल

नवाब कुदसिया बेगम के इस प्रकार अकस्मात् ही मर जाने से बादशाह नसीरुद्दीन को आघात लगा। वह उससे प्रेम करते थे। अभी उसकी आयु बीस बरस की भी न हुई थी। वह सुन्दरी तो थी ही, उसमें अनेक गुण भी

थे। वह वेश्या-पुत्री अवश्य थी, पर बड़ी ही कोमल, भावुक और नाजुक-मिज़ाज स्त्री थी। इसी से उसने इतनी सी ही बात पर जान दे दी। बादशाह को भारी रंज हुआ। वे अर्धविक्षिप्त से हो गए। मुसाहिबों द्वारा उन्हें प्रसन्न करने के सब प्रयत्न विफल गए। तब हज्जाम ने नया बन्दोबस्त किया। कलकत्ते से नया माल मंगाया। उसने चार यूरोपियन लड़कियाँ जुटा कर उन्हें बादशाह की नज़र कर दिया। अंग्रेज़ी ड्रेस पहन कर अंग्रेज़ी नाच नाच कर वे बादशाह का दिल बहलाने लगीं, फिर भी बादशाह खुश न हुआ। बेगम के मरने का तो उसे ग़म था ही, उसके चरित्र पर जो उसे संदेह हो गया था उसने भी उसका चित्त बिगाड़ दिया था। नाई को अवसर मिल गया था। उसने अवसर पा कर संकेत से बादशाह पर बेगम के चरित्र को संदिग्ध बताने में कोताही नहीं की थी। इसी समय राजा दर्शनसिंह को भी अपनी अभिसंधि पूरा करने का सुयोग मिल गया। कहने को राजा दर्शनसिंह दीवान थे, पर हक़ीक़त में बादशाह को सुन्दरियाँ जुटाना उनका काम था। न जाने कितनी भाग्य-हीना, अनाथा स्त्रियाँ उसने बादशाह के महल में धकेल दी थीं। अब उसने अवसर पाकर अपनी बहुत अधिक राजभक्ति जता कर कहा—"मुल्के जमा-निया, हुक्म हो तो काश्मीर जा कर वहाँ से हुजूर के लिए वह ताज़ा नया तोहफ़ा लाऊँ कि आलीजाह मृतबेगम को भूल जायँ। राजा दर्शनसिंह का प्रस्ताव बादशाह ने सहर्ष स्वीकार किया और एक लाख रुपया दे कर राजा दर्शनसिंह को काश्मीर भेज दिया। और हिदायत कर दी कि काश्मीर से जो लौंडी खरीद लाई जाय वह काश्मीर भर में एक होनी चाहिए; वरनासिर धड़ पर नहीं रहेगा।

मतलब साध कर दर्शनसिंह चलते बने। काश्मीर जाने की उन्हें जरूरत न थी। हाँ, दर्बार की हाज़िरी से छह माह के लिए मुक्त हो चुके थे। हज्जाम अभी आँखों में खटकता था, अब जो उसने अंग्रेज़ छोकरियों को बादशाह के हुजूर में पेश किया तो राजा दर्शनसिंह ने यह चाल खेली। और अब वह कानपुर अपने घर में बैठ कर किसी सुन्दर लड़की की तलाश

और साँठ-गाँठ में लगा।

जब अचानक ही बादशाह का ध्यान कुदसिया बेगम के नवजात शिशु की ओर गया उसे रह-रह कर यही विश्वास होने लगा कि वह उसका औरस पुत्र नहीं है। कुछ स्वार्थी लोगों ने उसे यह विश्वास दृढ़ कराने की चेष्टा भी की। अन्त में वह उस निर्दोष शिशु को मार डालने पर आमादा हो गया। परन्तु ये सारी ही सूचनाएँ बादशाह की माता जनाबे आलिया बेगम को पहुँच रही थीं, जो बड़े ही पवित्र विचार की महिला थीं। उन्होंने जब यह सुना कि नसीर उस बालक को मार डालना चाहता है तो उसने उस बालक को अपने संरक्षण में ले लिया और उसका नाम मन्नाजान रखा।

नसीर ने जब यह सुना तो वह आगबबूला हो गया। उसने जनाबे आलिया बेगम से बालक को माँगा, परन्तु उन्होंने देने से इन्कार कर दिया। एक बार नसीर के पिता ने भी जब नसीर की हत्या करनी चाही थी, तब इसी महिला ने उसके प्राण बचाए थे। अब वह इस अबोध शिशु की रक्षा कर रही थी। उसने नसीर की बहुत लानत मलामत की।

ये सब घटनाएँ हो ही रही थीं कि उसे सूचना मिली कि कलकत्ते में कम्पनी सरकार के नए गवर्नर-जनरल लार्ड बैंटिक आए हैं, और वे अवध के बादशाह से मुलाक़ात करने और अवध की रियासत का प्रबन्ध देखने लखनऊ तशरीफ़ ला रहे हैं। इस सूचना से नसीर के हाथ-पैर फूल गए। क्योंकि इस समय राजकोष खाली था। बदअमनी और बदइन्तज़ामी से सारे राज्य में अराजकता और भुखमरी फैल रही थी। राजमहल षड्यन्त्रों और उलझनों का अड्डा बना हुआ था। राज्य की यह दुरवस्था नए गवर्नर-जनरल के कानों तक पहुँची थी और वह अवध की दशा अपनी आँखों से देखने आ रहे थे। अब इस बालक की समस्या और भी गम्भीर हो गई थी। क़ायदे के अनुसार मन्नाजान बादशाह का बेटा था। पर स्वार्थियों ने उसके हृदय में यह संदेह भर दिया था कि वह कदाचित् उसका औरस पुत्र है ही नहीं। यह अधिक सम्भव था कि गवर्नर-जनरल

बादशाह के उत्तराधिकारी का प्रश्न उठाएँ। अब यदि मन्नाजान को बादशाह का पुत्र कह कर गवर्नर-जनरल के सामने उपस्थित किया गया तो निश्चय ही वही नसीर के बाद अवध का बादशाह बनेगा। पर यह बात नसीर नहीं चाहता था। इसलिए अब वह मन्नाजान को मार डालने या उसे कहीं दूर भेज देने पर तुल गया। परन्तु जनाबे आलिया बेगम भी दृढ़ता से हठ ठान बैठीं कि बच्चे को उसके हवाले नहीं करेंगी। अब बादशाह ने प्रथम तो सेना भेज कर माता को गिरफ्तार करना चाहा। पर फिर उसने विचार बदल दिया और उसने चार सौ स्त्री-सैनिकों को जनाबे आलिया बेगम के महल पर धावा करने को भेज दिया। आलिया बेगम भी मुक़ाबिले को तैयार हो गईं। उनके पास काफ़ी स्त्री-सैन्य थी। उसने नसीर की स्त्री-सेना को मार भगाया। पर इस स्त्री-सेना के युद्ध में काफ़ी मार-काट हुई। अनेक स्त्री-सिपाही मारी गईं। वज़ीरे-आज़म ने तुरन्त इस घटना की ख़बर रेजीडेन्ट को दे दी। रेजीडेन्ट ने आ कर बादशाह की बहुत लानत मलामत की। डराया-धमकाया और जनाबे आलिया बेगम को अपने संरक्षण में ले लिया।

बादशाह इन सब बातों से बहुत झल्लाया। वह अर्धविक्षिप्त की भाँति रहने लगा। बादशाह के अंग्रेज़ मुसाहिबों को बड़ी चिन्ता हुई। ख़ास कर हज्जाम बहुत डर गया था। क्योंकि इतनी बड़ी दुर्घटना की उसने आशा नहीं की थी। उसका लाभ इसी में था कि बादशाह का मिज़ाज ठीक रहे। अतः उसने बादशाह के मनोरंजन के अनेक उपाय किए, पर बादशाह का मन किसी में न लगा। तब यह तय किया कि बादशाह को लखनऊ से बाहर ले जाकर शिकार खिलाया जाय। बादशाह ने इस बात को पसन्द कर लिया। लखनऊ से दस कोस के अन्तर पर शिकार का बन्दोबस्त हुआ। बहुत से खेमें और छोलदारियाँ लगाई गईं। एक छोटा-सा बाज़ार भी वहाँ लगाया गया। बादशाह अपने दरबारियों और वज़ीरों के अतिरिक्त दो-तीन बेगमों, बीस-पच्चीस रखेलियों, सैकड़ों दासियों और सैकड़ों नौकरों को साथ ले गया। एक छोटी-सी फौज

भी बादशाह की रक्षा के लिए गई। शिकार की योजना पर बीस हज़ार रुपया खर्च किया गया।

बादशाह ने डेरे में पहुँच कर तीन दिन आराम किया। इन तीन दिनों तक वह विलायती शराब पीता और उम्दा विलायती खाने खाता तथा अपने विलायती मुसाहिबों से विलायती शिकारों के झूठे-सच्चे क़िस्से सुनता रहा।

चौथे दिन बादशाह का मूड ठीक हुआ तो शिकार को निकला। उसके फिरंगी मुसाहिबों ने चिड़ियों का शिकार किया। बादशाह को भी बन्दूक दी गई। उसने आंख बन्द करके बन्दूक चला दी। थोड़ी ही देर बाद अहमद ख्वाजा दस पन्द्रह पक्षियों को लिए हंसते हुए आया और बोला—"सुभान अल्लाह, मुल्के-जमानिया की बन्दूक से इतने जानवर मरे हैं।"

एक ही बन्दूक़ से इतने जानवरों को मरा देख बादशाह खुश हो गया। उस दिन बस और शिकार नहीं हुआ। आधी रात तक बादशाह के तम्बू में नाच-गाना मुजरा होता रहा। बादशाह की प्रसन्न मुद्रा देख हज्जाम खुश हो गया।

आधी रात के बाद मजलिस बर्खास्त हुई। बादशाह सलामत अपनी ख्वाबगाह में सोने चले गए। पर इसी समय बड़ा ही हल्ला मचा। वहाँ क्या हो रहा है—तथा शोर का कारण क्या है—यह कोई न जान सका। रात अन्धेरी थी, अतः कौन किस पर गोली चला रहा है—इस बात का पता बादशाह को बिल्कुल न लगा।

आधे घण्टे के बाद गोली चलना बन्द हो गया। और जनाने डेरों से रोने-पीटने की आवाज़ें आने लगीं। बाँदियों ने आ कर अर्ज़ की, जहाँपनाह, सारा जनाना लुट गया। डाकुओं ने धाड़ मारी और सब के जेवर-नक़दी माल-मता छीन ले गए। साथ में एक बेगम और तीन कमसिन लौंडियों को भी चोर ले गए।

बादशाह ने बौखला कर उसी समय पालकियों और हाथियों को

तलब किया और तत्काल ही वहाँ से कूच बोल दिया। अपनी-अपनी सवारियों पर बैठ कर बाँदियाँ, बेगमें, रखेलियाँ, दासियाँ लखनऊ को लौट चलीं। बादशाह हाथी पर बैठ कर चले। शिकार का मजा किरकिरा हो गया।

: ३१ :

शाही मेहमान

लखनऊ में धूम मच गई। घर-घर चर्चा होने लगा कि नए हुज़ूर गवर्नर-जनरल बहादुर अवध के बादशाह को सलामी देने लखनऊ तशरीफ़ ला रहे हैं। हज़ारों आदमी घाट-बग़ीचे, महलात-सड़कें सजाने और सफाई के काम पर रात-दिन लग रहे थे। फ़रीद बख़्शमहल, शाहे-नजफ़ का इमामबाड़ा, मोती महल, ख़ास तौर पर सजाए जा रहे थे—तथा वहाँ रोशनी का इन्तज़ाम बड़े ठाठ का हो रहा था। हज़ारों फ़ानूस और लाखों काफ़ूरी मोमबत्तियाँ—दीवारों और कंगूरों पर लगाई जा रही थीं। बादशाहे-अवध ने अपने शाही मेहमान की तवाज़ा के लिए तीस लाख रुपया ख़र्च करने की मंजूरी दी थी। नायब दीवान साहब को शहर सजाने का भार दिया गया था। उनके सलाहकार तीन अंग्रेज़ इंजीनियर थे। राजभवन की सजावट तथा शाही दस्तरख़ान का सारा भार बादशाह के अंग्रेज़ हज्जाम और मुँह लगे मुसाहिब सरफराज़ ख़ाँ को दिया गया था। हुज़ूर गवर्नर-जनरल बहादुर के लिए खाने-पीने की उम्दा चीजें और तरह-तरह की शराबें मंगाने की फिहरिस्त सर-फराज ख़ाँ ने तैयार की थी।

बादशाह अपने अंग्रेज़ मुसाहिबों के साथ छोटी हाजरी खा कर अपने ख़ास कमरे में बैठे मजे में क्लेरेट पी रहे थे। चारों अंग्रेज़ मुसाहिब शाही टेबल पर खाया हुआ गरिष्ठ भोजन पचाने घोड़ों पर सवार हो हवा खाने चले गए थे। सुबह का मनोरम समय था। फूलों की महक लिए ठण्डी

हवा चारों ओर मस्ती बखेर रही थी। बादशाह नवाब बहुत खुश थे।

इसी समय बादशाह का ख़ास खोजा यूसुफ़ आ हाज़िर हुआ। उसने दस्तबस्ता अर्ज़ की कि खुदावन्द रेज़ीडेण्ट साहब बहादुर मुलाक़ात के लिए हाजिर आए हैं। उनके साथ उनकी औरत भी हैं।

"औरत ?"

"जी हाँ, उन की जोरू।"

"तो उनकी जोरू का यहाँ मेरे पास आने का क्या काम है ?"

"कह नहीं सकता, शायद उनका इरादा हुज़ूर के हाथ उस औरत को बेचने का हो।"

"क्या वह कमसिन और खूबसूरत है ?"

"बुड्ढी-ठड्ढी है। हाँ, गोरी-चिट्टी खूब है।"

"तो मैं उसे क्यों ख़रीदने लगा ?"

"मुल्के जमानिया, इसकी उम्र का सही पता लगना मुश्किल है। विलायती मेम लोग चालीस की होने पर भी पच्चीस की लगती हैं। दाँत झड़ जाने पर बनावटी दाँत लगा लेती हैं। गाल पिचक जाने पर कपड़े की पोटली मुँह में ठूँस लेती हैं।"

इसी समय अंग्रेज नाई ने कमरे में प्रवेश किया। उसे देखते ही बादशाह ने कहा—"तुम कुछ कह सकते हो खाँ, कि रेजीडेण्ट साहब अपनी औरत को मेरे पास किस मक़सद से लेकर आए हैं। क्या उनका इरादा उसे बेचने का है ?"

"शायद नहीं, योर मेजस्टी, मेम साहब को महज़ आप से मुलाक़ात कराने के लिए एजेन्ट साहब बहादुर ले आए हैं। वे अभी इंगलैण्ड से आई हैं।"

"मगर किस लिए ?"

"योर मेजस्टी, ऐसा तो हमारे इंगलिस्तान के बादशाह भी करते हैं।"

"लोग अपनी औरतों को उनसे मिलाने लाते हैं ?"

"जी हाँ, योर मेजस्टी, यह तो एक रिवाज है।"

"तो इंगलिस्तान के बादशाह उनके साथ कैसा सलूक करते हैं?"

"दस्तूर तो यह है, योर मेजस्टी, कि जब कोई लेडी बादशाह के रूबरू पहुंचती है, तब वह अदब से झुक कर अपना हाथ बादशाह के आगे बढ़ाती है, और बादशाह झुक कर उसे चूम लेता है" इतना कह कर नाई ने बड़ी अदा से झुक कर अपना हाथ बादशाह की ओर बढ़ाया और बादशाह ने उसकी बताई हुई रीति पर कोमल पंजों से उसका हाथ उठा कर झुक कर चूम लिया। इसके बाद खिलखिला कर कहा—"क्या यह सचमुच मज़ाक नहीं है?"

"नहीं, योर मेजस्टी, यह एटीकेट है।"

"और तुम कहते हो कि मुझे रेजीडेण्ट की इस औरत के साथ ऐसा ही करना चाहिए?"

"यक़ीनन योर मेजस्टी।"

"बड़ा बददिमाग़ है मेजर वेली, कहीं वह पिस्तौल ले कर मुझ से न भिड़ जाय।"

"ऐसा नहीं हो सकता योर मेजस्टी, वह यक़ीनन खुश होंगे।"

"तो शर्त बदते हो खान?"

"पाँच सौ अशर्फियों की योर मेजस्टी।"

"ख़ैर, बुलाओ, अलसुबह अच्छी बोहनी हुई, खुदा खैर करे।"

मिसेज वेली की उम्र पचास को छू रही थी। चेहरे पर उसके झुर्रियाँ थीं और बदन दुबला-पतला और लम्बा था। दाँत नकली थे। उन्हीं दाँतों की बहार दिखाते हुए उन्होंने बड़ी नजाकत से अपना हाथ बादशाह की ओर बढ़ा दिया। बादशाह ने कनखियों से मेजर और नाई को देखा और नाई की बताई विधि से हाथ चूम लिया।

मेम साहब ने बड़े अंदाज़ और नखरे से ज़रा झुक कर अपनी नक़ली बत्तीसी की बहार दिखाते हुए कहा—"हिज मेजस्टी से मिल कर हमें खुशी हुई है। मुझे आप बहुत पसन्द हैं योर मेजस्टी।" मेजर वेली ने मेम साहब का अभिप्राय बादशाह को समझा दिया। बादशाह ने विरक्त हो

कर हज्जाम की ओर देखा और आहिस्ता से उसके कान में कहा—"बहुत हुआ, हटाओ इस औरत को।"

लेकिन अंग्रेज़ नाई पूरा घाघ था। बादशाह का मतलब वह समझ गया। और जमीन तक सिर झुका कर बोला—मेजर वेली शायद किसी खास मसले पर हिजमेजेस्टी से गुफ्तगू करने आए हैं। हुक्म हो तो मैं ज़रा देखूं कि उस पाजी फ्रेन्च खानसामा ने शाही दस्तरखान चुनने में इतनी देर कैसे कर दी।"

उसने एक बार और बादशाह के आगे सिर झुकाया और बाहर चला गया।

बादशाह ने मेजर वेली की ओर रुख किया और पूछा—"इस बेवक्त आपके आने का मक़सद क्या है?"

मेजर वेली ने टेढ़ी नज़रों से जाते हुए नाई की ओर देखा, फिर बादशाह की ओर देख कर ज़रा रूखे स्वर में कहा—"हिज मेजस्टी यह जान कर खुश होंगे कि अब जनाब गवर्नर-जनरल बहादुर के तशरीफ लाने में सिर्फ एक माह का अर्सा रह गया है। मुझे उम्मीद है कि ऐसी कोई कार्रवाई न होने पाएगी जिस से हिज एक्सिलेन्सी नाराज हो कर लौटें। यदि ऐसा हुआ तो यक़ीनन वह आप के हक़ में अच्छा न होगा। और मैं भी, जो आपका सच्चा दोस्त और खैरखाह हूँ, आप की कोई मदद न कर सकूँगा। यही कहने के लिए मैं हाजिर हुआ हूँ।"

"मैंने तीस लाख रुपया गवर्नर-जनरल बहादुर के इस्तक़बाल और तवाज़ा में खर्च करने का फैसला किया है। आप चाहें तो इसमें इज़ाफ़ा कर सकते हैं। यकीन कीजिए—कि दूर-दूर के कलावन्त, गाने और नाचने वालियाँ, नट बाजीगर, भाँड़ और जंगली जानवर गवर्नर-जनरल बहादुर के मनोरंजन को मुहैया किए जा रहे हैं। दावत के सामान का सब इंतज़ाम सरफराजखाँ खुद कर रहे हैं।"

रेजीडेण्ट ने कहा—"इस के सम्बन्ध में मैं कुछ अर्ज नहीं करता और मैजस्टी। हिज एक्सिलेन्सी के पास शिकायतें पहुँची हैं—कि आपकी

रियासत में अंधेरगर्दी मची हुई है। मालगुजारी ठीक-ठीक अदा नहीं की जाती—मुल्क में ठगों-डाकुओं और चोरों की भरमार है। किसी रियाया की जानोमाल की ख़ैरियत नहीं है।"

"कहाँ ? मुझे तो कुछ भी नहीं मालूम। अभी मैं आग़ामीर से कैफियत तलब करता हूँ।"

"ख़ैर, तो इतना तो मैं भी कह सकता हूँ कि शिकायतें झूठी नहीं हैं। और हिज एक्सिलेन्सी ने मुझ से रिपोर्ट भी की है कि वजह बताई जाय—कि क्यों नहीं अवध का राज्य कम्पनी बहादुर के अमल में ले आया जाय और आप को पैंशन दे दी जाय।"

"खुदा की क़सम, यह तो सरासर जुल्म होगा, मैं तो हर तरह अंग्रेज़ों से दोस्ती का दम भरता हूँ।"

"तो मेरी दोस्ताना राय यह है कि आप रियासत के हालचाल सम्हाल लें, ऐसा न हो कि यहां आकर गवर्नर-जनरल बहादुर को ऐसी खबरें मिले कि उनकी राय आपके खिलाफ हो जाय।"

"इन्शाअल्लाताला, मैं हर तरह गवर्नर-जनरल बहादुर को खुश करूँगा। लेकिन मुझे भरोसा महज़ आपकी ही दोस्ती का है।"

मेजरवेली ने कहा—मैं हिज मेजस्टी की सेवा में हर तरह उपस्थित हूँ। और हिज मेजस्टी ने मेरी पत्नी का जो सम्मान किया है उसके लिए आभार मानता हूँ। उम्मीद है, आपने मेरा संदेश गांठ बाँध लिया होगा। अब रुख़सत अर्ज।" उसने बादशाह की ओर मिलाने को हाथ बढ़ाया।

"खुदा हाफिज, कह कर बादशाह ने मेजर वेली से हाथ मिलाया। लेकिन जब लेडीवेली ने हंस कर बादशाह की ओर हाथ बढ़ाया—तो बादशाह ने नाई की बताई विधि से फिर उसे चूम लिया। इस के बाद गले से पन्ने का कीमती कण्ठा निकाल कर मेम साहब को देते हुए कहा—"यह हकीर कण्ठा कबूल कीजिए।" मेम साहब ने हंस कर कण्ठा गले में पहन लिया। और नकली बत्तीसी की बहार दिखाते हुए कहा—"धन्यवाद योर मेजस्टी," और चल दी। मेजर वेली भी चले गए।

बादशाह कुर्सी पर गिर कर हांफने लगे। इसी समय काने हज्जाम ने फिर कमरे में प्रवेश किया। बादशाह ने कहा--"उफ कोफ्त कर दिया, तौबा-तौबा।"

"तो योर मेजस्टी, उसका यह इलाज है," उसने क्लेरेट का एक गिलास लबालब भर कर बादशाह के होंठों से लगा दिया। बादशाह गटा-गट पी गए। शराब पीकर होंठ चाटते हुए बादशाह ने कहा—"चलो बला टली। बुड्ढी ठड्ढी पचास हजार के कण्ठे पर हाथ मार ले गई। लाम्रो और एक गिलास शराब दो, गला सूख कर कांटा हो गया।"

"अभी लीजिए, योर मेजस्टी", नाई ने दूसरा पैग बादशाह के हाथ में थमा दिया। और एक कागज़ का बड़ा सा मुट्ठा जेब से निकाला। बादशाह ने कहा—"यह क्या है ?"

"योर मेजस्टी, हिज एक्सिलेन्सी गवर्नर-जनरल बहादुर की दावत के लिए जो शराब और दीगर सामान कलकत्ते से मंगाया गया है उसी का हिसाब है।" इतना कह कर कागज़ का वह मुठा खोलकर उसने मेज पर फैला दिया। मेज पर फैल कर कागज जमीन पर आ गिरे।

सारा हिसाब अंग्रेज़ी में लिखा हुआ था। बादशाह का मिज़ाज जाम पी कर तर हो गया था। उन्होंने मुस्करा कर कहा—"ज़रा नापो तो के हाथ है ?"

नाई ने नाप कर कहा—"योर मेजस्टी', आठ हाथ है।"

"कुल कितने रुपए हुए ?"

"सिर्फ़ एक लाख चालीस हज़ार, योर मेजस्टी।"

"बहुत हुए।"

"योर मेजस्टी मेहमान क्या मामूली हस्ती है। नए गवर्नर-जनरल बहादुर शाही खानदान के रईस हैं। वे इंग्लिस्तान के बादशाह के साथ बैठ कर उनके दस्तरखान पर खाना खाते हैं।"

"तो खां साहब हमारा दस्तरखान किसी हालत में इंग्लिस्तान के बादशाह के दस्तरखान से कम न हो।"

"ऐसा ही होगा योर मेजस्टी, मैंने पूरा इन्तज़ाम किया है।"

"ठीक है नवाब आग़ा से रुपये ले लो।" बादशाह ने काग़ज पर दस्तखत कर दिए।

नाई काग़ज समेटता हुआ बादशाह को लम्बी सलाम कर वहाँ से चला गया। बादशाह फिर क्लेरेट पीने लगे। शाही लंच में अभी देर थी।

: ३२ :

शाही नज़र

आग़ामीर हिसाब देखते ही जल गए। उन्होंने काग़ज दूर फेंक कर कहा—"लूट है लूट, इतना रुपया नहीं दिया जा सकता।"

"लेकिन बादशाह के दस्तखत हैं। रुपया अभी इसी वक्त देना होगा।"

"कहाँ से देना होगा। खजाने में एक पाई भी नहीं है।"

"तो क्या तुम बादशाह की हुक्म-उदूली करते हो?"

नसीर के वज़ीर आज़म का नाम मोतमिद्उद्दौला था। पर वे सर्वसाधारण में आग़ामीर के नाम से प्रसिद्ध थे। अयोध्या के राजा रामदयाल दीवान थे। पिछले साल जो कम्पनी बहादुर को करोड़ रुपया कर्ज़ दिया गया था और दूसरे शाही खर्चे पूरे किए गए थे—उस से शाही खजाने का सब रुपया खर्च हो चुका था। रियासत के दूसरे ज़रूरी खर्चे पूरे करने के लिए प्रजा पर घोर अत्याचार करके आग़ामीर और राजा रामदयाल को राज-कर वसूल करना पड़ा था—पर साल खत्म होने ही से पहले वह रुपया भी खत्म हो गया था। अत्याचार से तंग आकर बहुत सी प्रजा अपने गाँव, खेत छोड़ नेपाल की तराई में जा बसी थी। सैंकड़ों सद्गृहस्थ और किसान अपना काम-धन्धा छोड़ कर ठगी और चोरी—या डाके की वृत्ति धारण कर चुके थे।

फागन का महीना था। साल ख़त्म हो रहा था। दूकानदार, ठेकेदार, राज कर्मचारी अपना-अपना पावना लेने के लिए राजा रामदयाल के यहाँ दरबार लगा रहे थे—राजा रामदयाल उनके हिसाब की जाँच-पड़ताल करके आग़ामीर के पास भेज रहे थे। आग़ामीर बड़े जोड़-तोड़ और हौसले के आदमी थे—पर इस समय उनके हौसले पस्त हो रहे थे। ख़जाने में तो एक पाई भी न थी, फिर सब को रुपया कहाँ से चुकाया जा सकता था। कैसे और कहाँ से वह रुपया इकट्ठा करें, वे इसी उधेड़-बुन में थे। बादशाह तो सिर्फ़ खर्च करने का हुक्म देते थे। रुपया कहाँ से आए, यह सोचने का काम आग़ामीर का था। इस वक्त उनका मिजाज भी गर्म हो रहा था। इस अंग्रेज नाई को वे एक आँख नहीं देख सकते थे, यह नाई भी भरे दरबार बादशाह के सामने उनकी हिजो कर बैठता था। इसके अतिरिक्त निरर्थक लान-तान में वह हर माह पचास-साठ हजार रुपया मार ले जाता था। बादशाह को उसके हिसाब-किताब देखने की आवश्यकता ही नहीं रहती थी—फ़ुर्सत भी नहीं रहती थी। इसी से आग़ामीर उससे जलते थे। उन्होंने क्रुद्ध हो कर कहा—"हुक्म-उदूली नहीं, इन्तजाम की बात है, रुपया तहवील में होगा तभी मिलेगा।"

"मुझे इस बात से कुछ मतलब नहीं। मुझे रुपया अभी मिलना चाहिए।"

"अभी हमें और काम हैं।"

नाई फिर अपना लम्बा चिट्ठा हाथ में लटकाए बादशाह के हुज़ूर में पहुँचा। क्लेरेट के पीने से बादशाह का मिज़ाज और भी गर्मा रहा था। बार-बार अपने आराम में ख़लल पड़ने से उन्होंने त्योरियों में बल डाल कर कहा—"अब यह क्या है?"

"आग़ामीर रुपये नहीं देता, योर मेजस्टी।"

बादशाह ने गुस्सा हो कर—"इसका क्या मतलब ?"

"मैंने कहा था कि हिज मेजस्टी का हुक्म है। लेकिन उसे दीवान

रामदयाल ने वरग़ला रखा है योर मेजस्टी। ये दोनों ग़द्दार हमेशा ही शाही अहकाम की तौहीन करते और हमेशा ही रुपया देने में आनाकानी करते रहते हैं। पता नहीं लगता कि शाही खजाने का सब रुपया कहाँ जाता है ?"

बादशाह एकदम आपे से बाहर हो गए। उन्होंने इधर-उधर देखा, नवाब रौशनउद्दौला आते नजर पड़े। उन्हें देखते ही बादशाह ने हुक्म दिया—"इन दोनों ग़द्दारों को गिरफ्तार कर के अभी कैद कर लो रौशन।"

रौशनुद्दौला हक्का-बक्का हो कर बादशाह का और नाई का मुँह देखने लगे। बादशाह ने किन दोनों आदमियों को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया है, यह उनकी समझ में ही नहीं आया।

नाई ने कहा—"हिज मेजस्टी का हुक्म है कि वजीर आग़ामीर और दीवान रामदयाल को गिरफ्तार करके कैद कर लो।"

रौशनुद्दौला नीची गर्दन करके चले गए। दोनों व्यक्ति असाधारण पद मर्यादा वाले थे। वे इस समय भी अपनी-अपनी कचहरियों में राज-काज कर रहे थे। वहीं उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और हथकड़ी-बेड़ी पहना कर कैदखाने में डाल दिया गया।

बादशाह के हुक्म से उनका घर-बार और धन-सम्पत्ति भी कुर्क कर ली गई। और उनका पूरा कुटुम्ब कैदखाने में डाल दिया गया। सारे शहर में यह खबर आग की तरह फैल गई और शहर में तहलका मच गया।

इसके बाद फ़र्रुखाबाद से नवाब मुन्तजिमुद्दौला को बुला कर वजीरे-आजम बनाया गया। आगे ये हकीम महदी अली खाँ के नाम से प्रसिद्ध हुए। विलायती नाई से इनकी पटरी बैठ गई। दोनों मजे से अपनी गठरी सीधी करने लगे।

: ३३ :

दो राजपुरुष

हकीय महदी अली खाँ ने अवध की सल्तनत का इन्तजाम अपने हाथ में लिया। सब से पहला काम गवर्नर-जनरल महोदय के स्वागत खर्च के तीस लाख रुपये जुटाने का था, फिर बादशाह के व्यक्तिगत और भी खर्चे थे। बादशाह ने एक नई औरत को रखैली बना कर रखा था। यह एक नाचने वाली औरत थी। उसका भाई एक सितारिया था, जो अब एक उमराव का पद पा चुका था। और अब उसका नाम अमीरुद्दौला था। बादशाह ने उसे चौबीस हजार रुपये साल की जागीर दे दी थी। उधर सरफराजखाँ का भी खर्चा अस्सी-नव्वे हजार प्रति मास था। इसके अतिरिक्त और भी अखराजात थे। इसलिए महदी अली ने सब चकलादारों को यह सख्त ताकीद कर दी कि यदि चैत्र की तीस तारीख तक तमाम लगान और भूमि-कर न अदा कर लिया गया तो सब को नौकरी से बर्खास्त कर जेल में डाल दिया जायगा। इसलिए चकलादार लोगों के घरों में घुस-घुस कर एक-एक गाँव की सफाई करने लगे। जमींदार और प्रजा में कोई भेद न रहा। पुरुष घर-बार छोड़ कर भाग गए तो उन्होंने स्त्रियों को पकड़ कर कैद कर लिया, उन्हें भाँति-भाँति से बेइज्जत किया। छिपा धन बताने के लिए उन्हें बड़ी-बड़ी यातनाएँ दी जाने लगीं। जिन जमींदारों के घर मजबूत गढ़ी के रूप में थे, वे अपने आदमी एकत्र कर चकलेदारों और उनके सिर्की वाले बरकन्दाजों से लड़ बैठे। कहीं-कहीं तो खासा हँगामा उठ खड़ा हुआ। इस पर चकलेदारों के अफ़सर फौजदार साहब ने गाँवों में आग लगवा दी। फौजदार बादशाह के मुँह लगे राजा दर्शनसिंह थे। अब तक उनका काम इधर-उधर से स्त्रियाँ बटोर कर बादशाह की सेवा में उपस्थित करना था। उनके भय से किसी भी भले घर की बहू-बेटी की इज्जत सुरक्षित न थी। अभी वे एक लाख रुपया काश्मीर से एक लड़की लाने के लिए वसूल कर चुके थे। अब इस काम में भी

वे पूरी बहादुरी दिखाने लगे। बहुत से परिवार उनके अत्याचार से बचने को नेपाल राज्य की सरहद में जा बसे, खेत सूखने लगे, गाँव उजड़ गए, पर महदी अली खाँ की नजर तो रुपया एकत्र करने पर थी। उसके कड़े आदेश जाते थे, और रुपया भेजो, और रुपया भेजो। इस पर राजा दर्शनसिंह को और भी जुल्म करने पड़ते थे, फिर भी रुपया पूरा जमा नहीं हुआ। महदी अली ने राजा दर्शनसिंह को अपनी कचहरी में बुला कर उससे जवाब तलब किया।

"राजा साहब, मुल्के जमानिया आप से सख्त नाराज हैं, फरमाइए, क्यों न आपको बर्खास्त कर दिया जाय।"

"मुल्के जमानिया की बात छोड़िए, आप खुद यदि नाराज हैं तो मुझे बर्खास्त कर दीजिए।"

"यह आप से किसने कहा ? मैं तो नाराज नहीं हूँ।"

"तो मुल्के जमानिया के नाराज होने का क्या बाइस है ?"

"उनके पास मुक़दमात पहुँचे हैं, बड़े संगीन मुक़दमे हैं।"

"आखिर कैसे ?"

"यह कि लगान—कर वसूल करने के लिए आपने सब जमीदारों और तालुकेदारों की औरतों तक को अपनी माल कचहरी में नंगा करके रक्खा। आप तो जानते ही हैं, कि औरतों को नंगा करना और उन से मार-पीट करना ये फिरंगी बिलकुल नहीं पासन्द करते। इसलिए जब रेजीडेन्ट मेजर वेली के पास ये शिकायतें पहुँचीं तो उन्होंने मुल्के जमानिया को डांट-फटकार की। वह बदमाश अंग्रेज वैसे भी बिगड़े दिल हैं। मुल्के जमानिया उससे वहुत डरते हैं—उस दिन उसने अपनी औरत को बादशाह से ला भिड़ाया और पचास हजार का कण्ठा वह ठड्ढो मार ले गई। फिर भी मेजर ने बादशाह की जरा भी मुरव्वत नहीं की। और उसके तथा दूसरे नौकरों के सामने मुल्के जमानिया को लालत मलामत दी। मुल्के जमानिया तभी से सख्त नाराज हो रहे हैं। आप जानते ही हैं—उन्होंने नवाब आगामीर और दीवान राजा रामदयाल को कैद कर लिया है।"

"तो अब मेरी बारी है ? लेकिन आप अच्छी तरह जानते हैं कि मेरा इसमें कुछ भी कुसूर नहीं हैं।"

"तो क्या ये सब मुक़दमात ग़लत हैं ?"

"जनाबे आली, इन साले जमीदारों और तालुकेदारों की औरतों को पकड़ कर लाए बिना मालगुजारी का एक धेला भी वसूल न होता। आग़ा-मीर के और अब आप के दबादब हुक्म मेरे पास पहुँचते रहे कि रुपया भेजो। मालगुजारी पूरी वसूल करो। पर कैसे करूँ? यह भी तो सोचिए। पिछली बार की वसूली से सब गाँव खेत उजाड़ हो गए। लोग घर बार छोड़ नेपाली इलाकों में भाग गए। इस साल खेती हुई ही नहीं। फिर अकाल पड़ गया। तालुकेदारों व जमीदारों का भी क्या कसूर भला ? रियाया से उन्हें एक पैसा भी वसूल नहीं हो रहा। और लोग दें कहाँ से, उनके पास खाने तक को नहीं है। उधर आपके तक़ाजे। मैं क्या करता ? मुझे सख्तियाँ करनी करनी पड़ीं। टेटुआ कस कर दबाने ही से जमीदार और तालुकेदारों ने औरतों के जेवर बेच कर या क़र्जा लेकर मालगुजारी

अदा की है। बिना औरतों की बेइज्जती किये वे ऐसा करते भला ?"

"लेकिन राजा साहब, इलाके पर इलाके सारे उजड़ गए। सब गाँव सूने पड़े हैं। अवध इस वक्त एकदम वीरान हो गया है, जो हिन्दुस्तान का सब से फला-फूला राज्य था।"

"तो मैं क्या करूँ ? मैंने किसी की जानोमाल पर डाका नहीं डाला। कुछ आली ख़ानदान के तालुकेदारों की औरतों को माल कचहरी में पकड़ बुलाया था। इसी से शरम के मारे वे लोग देश छोड़ कर भाग गए। मानता हूँ—मार पीट भी करनी पड़ी। पर इस में भी मेरा दोष नहीं है। ये लोग बिना मार पड़े मालगुजारी देते ही न थे।"

'लेकिन कुछ लोग मरे भी तो हैं।"

'बहुत कम। सौ दो सौ बस।"

"ख़ैर तो अब इन बीती बातों पर बहस करना फ़िजूल है। रुपया तो पूरा अभी नहीं आया है।"

"जीजान से कोशिश कर रहा हूँ नवाब साहब, फिर आपका नज़राना तो पेशगी ही भेज चुका हूँ।"

"शुक्र गुजार हूँ, लेकिन मालगुजारी पूरी अदा होनी चाहिए। चैत की तीसरी तारीख़ तक ख़जाने में पचास लाख रुपया पहुँचे बिना काम नहीं चलेगा।"

"तो वादा करता हूँ—यह रक़म पूरी कर दूँगा। लेकिन आप भी वादा कीजिए कि आप कभी मेरी कोई हानि न करेंगे।"

"आप मुतमय्यन रहें राजा साहब, जब आप हमेशा ही मेरा नज़राना पेशगी भरते रहे हैं, और उम्मीद है—आगे भी ऐसा ही करते रहेंगे, तो मेरे नाराज होने का कोई सवाल नहीं उठता है। लेकिन दोस्त-मन मेजर वेली से होशियार रहना। वह हमेशा मुल्के जमानिया के कान मलता रहता है। और अब तो उसने नया जाल फैलाया है।"

"अपनी बीबी का सौदा न ?"

"जी हाँ, वह पट्ठा उस बुड्ढी-ठड्ढी को मुल्के-ज़मानिया के हाथों

बेच कर एक बड़ी रक़म वसूल कर विलायत में दूसरी शादी करने की फिक्र में है।"

"खुदा की पनाह, सुना कि इस ख़ाला जान का मुल्के-जमानिया ने सरेआम बोसा लिया।"

"लाहौल बलाकू···, तो शायद उसी की कीमत पचास हज़ार का पन्ने का कण्ठा उसे इनायत किया गया है।"

"उस कण्ठे ही पर क्या मुनहसर है।"

"राजा साहब, इसी माह में मेजरवेली ने पचहत्तर लाख का कम्पनी का काग़ज ख़रीदा है। यह रुपया क्या उस दोज़खी ने कीमिया से बनाया है। सब लूट ही का तो माल है।"

"तो हजरत आप हमें नाहक गुनहगार बनाते हैं। मुल्क को तो ये सफ़ैद डाकू लूट रहे हैं। उस हरामजादे हज्जाम ही को लो, पचास लाख रुपया नक़द उसके पास है।"

"और अब वह इन सब का सरताज आ रहा है। खुदा ख़ैर करे।"

"तो नवाब साहब अच्छे और बुरे में हम एक हैं।"

'यकीनन, खुदाहाफिज।" दोनों ने हाथ मिलाए—आँखें मिलाईं और राजा साहब विदा होकर चल दिए।

: ३४ :

लार्ड विलियम बैंटिक

लार्ड विलियम बैंटिक लखनऊ की रेजीडेन्सी में एक ईजी चेअर पर शाम की हल्की पोशाक पहने आराम फ़र्मा रहे थे। उनके हाथ में फ्रांस का क़ीमती चुरुट था, जिस की सुगन्ध बहुत ही खुशगवार थी। अभी उनका कोई प्रोग्राम नहीं बना था। लखनऊ आए यद्यपि तीन दिन बीत चुके थे—परन्तु उन्होंने अभी न तो किसी रईस से मुलाक़ात की थी—न किसी सार्वजनिक जलसे में शरीक हुए थे। बादशाह तक से

उन्होंने मुलाक़ात नहीं की थी—यद्यपि बादशाह और उसके अमीर-उमरा मुलाक़ात के इन्तजाम में जमीन आसमान एक कर रहे थे। खुद बादशाह मुल्के जमानिया हुक्म पर हुक्म दे रहे थे किन्तु जनाब गवर्नर-जनरल बहादुर अभी रेजीडेण्ट से सलाह-मश्विरे में संलग्न थे। इस वक्त भी मेजर वेली उनके सामने बैठे थे। गवनर-जनरल ने कहा—

"मेजर वेली, अब दुनिया का नया दौर शुरू हुआ है। इंगलैंड में नई शक्तियाँ काम कर रही हैं। अब मैं चाहता हूँ कि आनरेबुल ईस्ट इण्डिया कम्पनी हिन्दुस्तान की सर्वोच्च शासन सत्ता बन जाए। और व्यापार के अधिकार आम अंग्रेजों के लिए खुले छोड़ दिए जाएँ। इसलिए अब मैं यही नीति अमल में लाना चाहता हूँ—कि हम भारत में अंग्रेजों की एक सार्व-भौम सत्ता की स्थापना कर सकें।"

"क्या इस में इंग्लिस्तान की सरकार का भी कुछ हिस्सा रहेगा ?"

"यही, कि वह हमारी ब्रिटिश भारत सरकार की संरक्षक रहेगी। अब हमारे सामने तीन बड़ी बाधाएँ हैं, जो हमारे बाज़ू कमज़ोर करती हैं। मध्यभारत में सिंधिया—मैं चाहता हूँ कि इस बाधा को दूर करके बम्बई प्रान्त को आगरा के साथ जोड़ दूँ। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि अपनी राजधानी में महाराज जंकोजी सिंधिया को उन आपत्तियों ने घेर रखा है जो हम ने उसके चारों ओर खड़ी की हैं। अब देखना यह है कि यह इस निर्बल किन्तु अत्यन्त वफ़ादार नौजवान राजा की मुसीबतों से क्या फ़ायदा उठाया जा सकता है। इसी से मेरा चीफ़ सेक्रेटरी वहाँ के रेजीडेण्ट से इस मामले में पत्र व्यवहार कर रहा है—कि सिंधिया महा-राज उन गम्भीर आपत्तियों से घिरा हुआ होने के कारण पदत्याग करना पसन्द करेगा या नहीं। यदि वह मंजूर कर ले तो एक सुन्दर पैन्शन कम्पनी की सरकार उसे देगी, जो उसी की रियासत की आमदनी में से अदा की जायगी।"

"यह तो बहुत अच्छी योजना है योर एक्सीलेन्सी, आप की नीति से मैं सहमत हूँ।"

'इधर देखो मेजर', गवर्नर-जनरल ने ज़रा मजाक़ के टोन में कहा—और अपनी गर्दन कुर्सी पर से पीछे लटका दी। मुँह खोल दिया, और अंगूठा और एक उंगली इस प्रकार मुँह में देकर, जिस प्रकार कोई लड़का मिठाई मुँह में डालने लगता है, हंसा।

मेजर वेली ने आश्चर्यचकित होकर गवर्नर-जनरल की ओर देखा—गवर्नर कह रहा था—"कि यदि कोई रियासत इस तरह आप के मुँह में आ कर गिरने लगे तो यक़ीनन मुनासिब यह होगा कि आप उसे बिना झिझक निगल जाएँ। बस यही मेरी नीति है।"

मेजर वेली ज़ोर से खिलखिलाकर हंस पड़े। लार्ड बेंटिङ्क ने कहा—"और मेजर, हम ने सिंधिया के चारों ओर जो मुसीबतें खड़ी कर दी हैं, उन से मुझे कामिल उम्मीद है कि वह घबरा कर चुपचाप अपना राज्य हमारे हवाले कर देगा।"

"लेकिन यहाँ के राजारईस ला-औलाद मरने पर एक फ़र्ज़ी बेटा गोद लेते हैं, और चाहते हैं कि ब्रिटिश सरकार उसे उनका उत्तराधिकारी माने और उनके सब हक़ूक़ उन्हें दे दे। इस सम्बन्ध में योर एक्सीलेन्सी क्या सोचते हैं।"

"नानसेन्स मेजर, यह एक ऐसी दक़ियानूसी और बेहूदा बात है कि जिससे मुझे सख्त नफ़रत है और मैं जिसका तहेदिल से विरोधी हूँ। ये हिन्दू जो मरते दम तक अपनी गद्दी के अख्तियारात छोड़ना नहीं चाहते, यदि वे ला-औलाद मरने लगते हैं तो एक चूहे के बच्चे को कहीं से पकड़ लाते हैं और चाहते हैं कि वही चूहे का बच्चा उनकी जगह, उन के मरने के बाद, उनका वारिस बन कर, राजा बने और इसे वे अपने धर्मशास्त्र की रू से जाइज कहते हैं। लेकिन मेजर, मेरी समझ में यह बात नहीं आती, कि इस तरह एक ग़ैर नाबालिग़ और बेसमझ बच्चे को राजा बनाना, राज्य और प्रजा, इन दोनों ही के हित के लिए कहाँ तक ठीक हो सकता है। मैं हिन्दुओं के इन नक़ली बेटों को कोई कानूनी अधिकार देना नहीं चाहता, और मैं जानता हूँ कि ऐसा करके मैं कोई अन्याय नहीं

करूँगा। अब हम यही तो कर रहे हैं, मरे हुए राजाओं के फर्जी और
नाबालिग़ बच्चों को गद्दी का वारिस न बनाकर उन्हीं के ख़ानदान के
एक ऐसे होशियार आदमी को राजा बनाते हैं, कि जो अंग्रेज़ों का सच्चा
वफादार दोस्त है।"

"लेकिन माई लार्ड, हिन्दू अपनी इस पुरानी रस्म को तोड़ना नहीं
चाहते, ऐसे मौकों पर वे बहुत वावैला मचाएँगे।

"दिस आल फुलिशनैस मेजर, मैंने अपना पक्का इरादा कर लिया
है, उसको मैं नहीं बदलूँगा।"

"लेकिन योर एक्सीलैंसी, इन्दौर में तो बिल्कुल इसके विपरीत हो
गया। वहाँ तो मृत मल्हारराव होल्कर के गोद लिए गए लड़के की ही
तख़्त-नशीनी हो गई।"

"मैं तो नहीं चाहता था कि ऐसा हो, इसीलिए मैंने इंदौर के रेजीडेंट
को सख्त ताकीद कर दी थी कि वह नए राजा के राजतिलक के समय
दरबार में हाज़िर न रहे। हक़ीकत तो यह है कि इस मामले में कुछ
राजनैतिक पेचीदगियाँ आ खड़ी हुईं थीं कि जिनकी वजह से मुझे उधर
से आँखें चुरा लेनी पड़ीं। वास्तव में इन छोटी-छोटी बातों पर मैं जोर
डालना भी नहीं चाहता। अब तो मेरे सामने दो ही सबसे बड़े अहम
मसले हैं, एक सिंध और पंजाब का और दूसरे अवध का।"

"मैंने सुना है कि इंगलिस्तान के शहनशाह विलियम चतुर्थ की ओर
से पंजाब के महाराज रणजीतसिंह की ख़िदमत में एक घोड़ागाड़ी उप-
हार में दी गई है, जिसे आपने सिंध नदी के रास्ते जलमार्ग से भेजा है।
मैं समझता हूँ कि इसमें आनरेबुल कम्पनी की कोई गहरी चाल है।
क्योंकि मुझे कलकत्ते ही में सर चार्ल्स मैटकाफ़ महोदय ने यह बतलाया
था कि यह गाड़ी सिंध के जलमार्ग द्वारा भेजने के लिए खासतौर पर ईस्ट
इंडिया कम्पनी के डायरेक्टरों ने हिज एक्सीलैंसी से अनुरोध किया था।"

लार्डवैंटिक यह फिकरा सुनते ही उछल कर कुर्सी पर बैठ गए।
और भेड़िए की तरह गुर्रा कर बोले—"मैटकाफ़ ने यदि तुमसे ऐसा कहा

है तो बहुत असावधानी का काम किया है। लेकिन जब तुम पर यह राज़ ज़ाहिर हो चुका है, तब मैं तुम्हें बतलाता हूँ कि इस बात की हमें सख्त ज़रूरत है कि सिन्ध नदी की थाह ली जाए, और यह बात ठीक-ठीक जांच ली जाय कि यदि कभी हमारे जहाज सिन्ध नदी में से गुज़रें तो उन्हें कहाँ-कहाँ किस मुसीबत का सामना करना पड़ेगा। क्योंकि सिन्ध, पंजाब और अफ़गानिस्तान इन तीनों ही पर हमारी नज़र है। पंजाब और अफ़गानिस्तान पर हमला करने में सिन्ध नदी का उपयोग बहुत महत्त्वपूर्ण होगा। इसी से इस उपहार को भेजने के बहाने मैंने सिन्ध का पूरा सर्वे कर डाला है। और अब हम चाहे जब उसका उसी तरह इस्तेमाल कर सकते हैं, जैसे इंगलैंड में टेम्ज़ का।"

"लेकिन माई लार्ड सिन्ध तो स्वाधीन देश है, सिन्ध के अमीर क्या इस बात को पसंद करेंगे?"

"नहीं करेंगे, इसीलिए तो यह उपहार का कपट-प्रपंच रचा गया। इसके अतिरिक्त अमीर यदि राजी न भी हो तो हमें उसकी परवाह नहीं है। याद रखो मेज़र, एक दिन अफ़गानिस्तान और सिन्ध नदी दोनों पर अंग्रेज सरकार का कब्ज़ा होना चाहिए। तुमने सुना होगा कि हमने क़ाबुल में एक व्यापारिक एजेन्सी क़ायम की है।"

"मैं समझ गया, योर एक्सीलैंसी, सिन्ध नदी के सर्वे और काबुल में व्यापारिक कम्पनी की स्थापना, ये दोनों ही भावी अफ़गान युद्ध की भूमिका हैं।"

"राइट यू आर मेजर, दैट्स आल वी वान्ट।"

"आई कांग्रेचुलेट योर एक्सीलैंसी, मैं आशा करता हूँ कि अफ़गानिस्तान के मोर्चे पर आप मुझ अनुगत सेवक को भेजना नहीं भूलेंगे।"

"ज़रूर, जरूर, तुमको यह जानकर खुशी होगी मेज़र, कि इसी सफर में मैं रणजीतसिंह से भी मुलाक़ात कर रहा हूँ। मुलाक़ात के वक्त मैं काफी फौज़ साथ ले जाना चाहता हूँ। इस वक्त रणजीतसिंह की ताकतें बहुत बढ़ी हुई हैं। कहना चाहिए कि उसकी विशाल सेना हमारी सेना

से भी वीर और व्यवस्थित है। उसने काश्मीर, पेशावर और मुलतान के इलाकों को विजय कर लिया है। और उसकी नज़र अब सिन्ध पर है। इस नज़र को हटाना ही मेरी मुलाकात का उद्देश्य है। हमारा क़ैदी काबुल का शाहशुजा इस समय लुधियाने में बन्द है। उसे ही सामने करके और रणजीतसिंह के पल्ले उसे बाँध कर मैं इन दोनों को अफ़गानिस्तान पर हमला करने के लिए धकेल देना चाहता हूँ। और यह बात भी तय कर लेना चाहता हूँ कि सिंध नदी के निचले हिस्सों पर अंग्रेज़ों का कब्ज़ा हो जाय और हमें सिन्ध के किनारे-किनारे छावनियाँ बनाने में कोई बाधा न हो।"

"बहुत अच्छी योजना है, माई लार्ड, इससे निस्सन्देह उत्तर भारत में हमारे राजनैतिक अधिकार अटल हो जाएँगे और इधर का हमारा साम्राज्य निष्कंटक हो जायगा। लेकिन अवध के इस बदनसीब और खप्ती बादशाह के साथ आप कैसा सलूक करना चाहते हैं।"

"सीधी बात है कि जितना जल्द हो अवध को अंग्रेज़ी झण्डे के नीचे लाना हमारा फ़र्ज़ है। मेरा ख़्याल है कि अवध के बादशाह को अब और साँस लेने का मौक़ा नहीं देना चाहिए और बादशाह को अपने सब अख्तियारात कम्पनी बहादुर को दे कर पैन्शन लेने पर राज़ी कर लेना चाहिए।"

"माई लार्ड, यह कार्यवाही, शायद समय से पहले होगी, और इस पर हमें अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए।"

"तुम क्या कहना चाहते हो मेजर, क्या यही वह ठीक मौक़ा नहीं है, जबकि तमाम रियासत में चोरी, डाकेज़नी, लूट की आम वारदातें हो रही हैं। सारा देश ठगों से भरा हुआ पड़ा है, किसी की जानोमाल की खैरियत नहीं है, खेत सूखे पड़े हैं और गाँव उजड़े पड़े हैं, आबादी का नाम निशान नहीं रह गया। अकाल और अराजकता चारों ओर फैली हुई है। क्या बादशाह के अयोग्य होने के ये काफ़ी कारण नहीं हैं?"

"योर एक्सीलेन्सी, यदि इजाज़त दें तो निवेदन करूँ कि इस

अराजकता, लूट, ठगी और अकाल की पूरी जिम्मेदारी हम अंग्रेजों ही पर है। क्योंकि हम ने बे-अन्दाज़ रुपया ज़बर्दस्ती अवध के नवाबों से वसूल किया कि जिस से शाही खज़ाना खाली हो गया और उन्हें रियाया पर ज़ुल्म करके रुपया इकट्ठा करना पड़ा, जिस से तंग आ कर रियाया अपने घर-बार और खेतों को छोड़ कर भाग गई। आप क्या विश्वास करेंगे कि ये सब चोर, डाकू और ठग पेशेवर बदमाश नहीं हैं, बल्कि खानदानी ज़मींदार और शरीफ़ज़ादे लोग हैं, जो हमारे ज़ोरो-ज़ुल्म से बेज़ार हो कर मजबूरी हालत में ये बदमाश पेशे हथिया बैठे हैं।"

"पर इससे क्या? अवध के मालिक अभी तक नवाब बादशाह हैं, अंग्रेज़ नहीं। इसलिए मैं अवध के बादशाह से जवाब तलब करूँगा। मुल्क में जो बदअमनी फैली है, इस का कारण यह है कि उसमें बादशाहत करने की योग्यता नहीं। वह कारण बताए कि वह क्यों न गद्दी से उतार दिए जाएँ और सारा प्रबन्ध आनरेबुल कम्पनी बहादुर के हाथों ले लिया जाय।"

"मैं आशा करता हूँ योर एक्सीलेन्सी, कि इस बदनसीब और खप्ती बादशाह के पास, जो अपना सारा वक्त पाँच लोफ़र अंग्रेज मुसाहिबों के साथ बेहूदा हँसी मज़ाक़ करने और शराबखोरी में गुज़ारता है, जो छटे हुए शोहदे और उठाईगीर हैं, उसके पास आप के सवाल का जवाब नहीं है।"

"बस, तो अब मैं सीधा नवाब से मुलाक़ात करके मुँह दर मुँह दो-दो बात करने पर आमादा हूँ। मेजर, तुम्हारा क्या ख्याल है?"

"योर एक्सीलेन्सी, आप बिल्कुल ठीक निर्णय पर पहुँचे हैं, मैं आप से सहमत हूँ। लेकिन नवाब बादशाह ने हिज़ एक्सीलेन्सी के स्वागत-समारोह में जो बड़े-बड़े लवाज़मे और धूम-धाम के इन्तज़ामात किए हैं, उनका क्या होगा?" मेजर वेली ने हंस कर कहा—

"क्या-क्या इन्तज़ामात हैं?"

"मसलन हाथियों की लड़ाई, तीतरों की लड़ाई, मुर्ग़ों की लड़ाई, बटेरों की लड़ाई, रंडियों के मुजरे, भाँडों के तमाशे, शिकार, दावत, रोशनी, गाजे-बाजे और बहुत-से ऐसे ही आइटम जो उसके लायक़ दोस्त हज्जाम ने उसको सुझा दिए हैं।"

"कौन है यह हज्जाम ?"

"एक आवारागर्द और गुण्डा अंग्रेज़ है, जो एक जहाज़ में प्लेटे धोने का काम करता हुआ हिन्दुस्तान चला आया और कलकत्ते में हज्जाम की दूकान खोली और फिर उसकी किस्मत उसे लखनऊ ले आई, जहाँ उसने बादशाह को खुश कर लिया।"

"यह कैसे ? आखिर बादशाह तक उसकी पहुँच कैसे हुई ?" लार्ड वैंटिक ने आश्चर्य से पूछा।"

मेजर वेली ने हंस कर जवाब दिया—"किस्मत ही की बात समझिए कि मैंने ही उसे बादशाह के सामने पेश किया।"

"तुमने मेजर, एक आवारागर्द अंग्रेज़ को ?"

"हुआ यह कि वह पहले मेरे पास ही आया और उसने पहले मेरे बाल बनाए। इस फन में वह पूरा उस्ताद था और अपने काम से उसने मुझे खुश कर लिया। दुर्भाग्य से या सौभाग्य से मुझे, जैसा कहिए, बादशाह के बाल सूअर के बाल जैसे सख़्त और रुखे थे, मैंने उसे बादशाह के सामने पेश किया, और उसने बादशाह के बालों को नर्म और घूंघर वाले बना दिया, बस उसकी तक़दीर का सितारा बुलन्द हो गया। वह बड़ा बातूनी, खुशामदी और धूर्त्त आदमी है। और इन गुणों की बदौलत अब वह बादशाह की नाक का बाल बन बैठा है। और शाही दस्तरख़ान पर बादशाह के साथ खाना खाता है।

"क्या शाही दस्तरखान पर ? तब तो मैं बादशाह के साथ खाना पसन्द नहीं करूँगा।"

"बट, हिज एक्सीलेन्सी की शाही दावत में एक लाख रुपया खर्च किया जा रहा है।"

"एक लाख ?"

"और तीस लाख रुपया दूसरे समारोहों में।"

"लेकिन मेजर, तुम तो कहते हो कि शाही खजाना बिल्कुल खाली है, फिर इस क़दर फिज़ूलखर्ची ?"

"योर एक्सीलेन्सी, इन बदनसीब हिन्दुस्तानी नवाबों और बादशाहों की तबाही और मौत का मूल कारण आपके इस प्रश्न का जवाब है।"

"तो मेजर, तुम बादशाह को आगाह कर दो कि मैं इन सब लान-तान और खेल तमाशों में कोई हिस्सा न लूंगा। सिर्फ कल दरबार करूँगा, जहाँ बादशाह से मुँह-दर-मुँह बातचीत करूँगा। तुम अभी बादशाह से मिल कर कुल इन्तजाम ठीक कर लो।"

"बहुत अच्छा योर एक्सीलेन्सी, मैं आप की आज्ञा अभी पालन करता हूँ।

: ३५ :

लखनऊ का दरबार

गवर्नर-जनरल के स्वागत समारोह के लिए नसीरुद्दीन हैदर ने बड़ी धूम-धाम की तैयारी की थी। उस में चालीस लाख रुपये खर्च हुए थे। डेढ़ लाख से ऊपर रुपया तो दावत ही के मद्दे खर्च किया गया था, जिसका प्रबन्ध अंग्रेज नाई सरफ़राज खाँ के सुपुर्द था—एक लाख रुपया नाच-मुजरे और रंडियों के खर्च किए गए थे—और काश्मीर तक से रंडियां बुलाई गई थीं। हाथी-ऊँट, सिंह, तीतर-बटेर, मुर्ग़-गैंडे आदि पशु-पक्षियों की लड़ाई के लिए भारी खर्च करके अनेक पशु मंगा कर शिक्षित किए गए थे। एक सौ हाथी, चार सिंह, चौदह बाघ, दस गैंडे, तीस जंगली भैंसे, सात ऊंट, दस भालू तथा—अनगिनत अन्य पशु-पक्षी एकत्र किए गए थे। गवर्नर-जनरल महोदय के आने से महीनों पूर्व से बादशाह और उनके अंग्रेज पार्षद सब काम छोड़ इन्हीं पशुओं के युद्धों—शिकारों और

नाच मुजरों में रात-दिन संलग्न रहते थे। परन्तु लार्ड वैंटिक ने इन सब मनोरंजक समारोहों में सम्मिलित होना अस्वीकार कर दिया। उसने शाही दावत भी मंजूर नहीं की। प्रथम तो वह बादशाह की चाण्डाल-चौकड़ी और छिछोरी सोहबत से चिढ़ गया, जो बादशाह एक बदमाश हज्जाम के साथ दस्तरखान पर बैठ कर खाना खाता है—उसके साथ इस तेजस्वी अंग्रेज ने खाना खाना अपनी शान के खिलाफ़ समझा। इस के अतिरिक्त उसकी मुलाक़ात सोलह आना राजनैतिक थी। उसके बंधे हुए मनसूबे थे—और दृढ़ अडिग धारणाएँ थीं। अतः नगर सजाने में जो लाखों रुपया खर्च किया गया था—उसकी भी उसने परवाह नहीं की। उसने रेजीडेण्ट की मार्फ़त साफ़ कहला दिया था, कि ये सब ऊल-जलूल और फ़ालतू बातें उसे पसन्द नहीं हैं। और वह केवल दरबार में एक बार बादशाह से खुली मुलाक़ात करेगा। यह सुन कर नसीर का दिल बुझ गया। वह खीझ गया और अपने मुसाहिबों में बैठ कर भाँति-भाँति की अटकलबाज़ियाँ लगाने लगा।

लार्ड विलियम वैंटिक ने कुल छह दिन लखनऊ में मुक़ाम किया, जिस में पूरे चार दिन वह रेज़ीडेण्ट से तमाम राज-काज के कागज़पत्रों—मामलों, संधियों, दस्तावेज़ों और राज्य की वर्तमान दशा पर विचार-विमर्श करता रहा। इन चार दिनों में वह न रेज़ीडेन्सी से बाहर निकला न उसने किसी रईस-अमीर या नवाब-बादशाह से मुलाक़ात की। पाँचवें दिन उसने अकस्मात ही दरबार की घोषणा कर दी। नसीर के हाथ-पाँव फूल गए—पर जैसे बना जल्दी-जल्दी—दरबार का प्रबन्ध किया गया।

दरबार बहुत ही संक्षिप्त और अनपेक्षित रीति से हुआ। बादशाह पूरे शाही लिबास में ताज पहन कर तख़्त पर बैठे—उनके दाहिनी ओर गवर्नर-जनरल और बाईं ओर रेज़ीडेण्ट मेजर वेली सुनहरी कुर्सियों पर बैठे। उनके पीछे उनके शरीर-रक्षक नंगी तलवारें लिए तैनात खड़े हुए। हकीम महदी अली—वज़ीर आज़म बादशाह की बग़ल में खड़े हुए। बादशाह के मुसाहिबों का इस दरबार में कोई स्थान न था।

साधारण शिष्टाचार और औपचारिक बातों के बाद लार्ड बैंटिक ने एक शाही ख़रीता पढ़ा जो कि आनरेबुल ईस्ट इण्डिया कम्पनी के आनरेबुल कोर्ट आफ़ डायरेक्टर की ओर से आया था। उसमें उन सब बातों के लिए बादशाह को धन्यवाद दिया गया—जिनसे उसकी आर्थिक सहायताओं का संकेत था। बदले में आनरेबुल कम्पनी की ओर से दोस्ती का पैग़ाम पढ़ा गया। इसके बाद गवर्नर-जनरल ने कहा—'योर मेजस्टी को ज्ञात हो कि आप को इसी शर्त पर आनरेबुल कम्पनी ने अवध का तख़्त इनायत किया है, कि आप ठीक-ठीक रियासत का इन्तज़ाम करेंगे। मगर मैं सुनता हूँ कि आप का खज़ाना खाली है, मुल्क में बदअमनी फैली है। और आप राज-काज में दिलचस्पी नहीं ले रहे। ऐसी हालत में मैं यदि आनरेबुल बोर्ड आफ़ डायरेक्टर को यह सलाह दूं कि आप को अवध की बादशाहत से उतार दिया जाय और एक माक़ूल पैन्शन आप के लिए नियत की जाय, तो आप को इस में कुछ उज्र है ?" गवर्नर-जनरल की ऐसी दो टूक बात सुन कर बादशाह की बोलती बन्द हो गई, उसने हकीम महदी अली की ओर देखा।

महदी अली एक सुलझा हुआ वजीर और पुराना रईस था। उसने कहा—"हिज एक्सिलेन्सी गवर्नर-जनरल यदि मुझे कहने की इजाज़त दें तो अर्ज करूँ कि आनरेबुल कम्पनी के प्रथम गवर्नर-जनरल वारेन हेस्टिंग्स के जमाने में लखनऊ के जन्नत-नशीन नवाब वजीर आसफुद्दौला ने बहुत सा रुपया दूसरों से क़र्जा लेकर गवर्नर-जनरल बहादुर को दिया था। उनके बाद जब नवाब वज़ीर सआदतअली खाँ गद्दी पर बैठे तो उन सब पावनेदारों ने उन से वह क़र्जे का रुपया माँगा। परन्तु नवाब वजीर वह रुपया नहीं चुका सके। तब कर्ज दाताओं ने गवर्नर-जनरल बहादुर से फरियाद की। गवर्नर-जनरल बहादुर ने कोर्ट आफ डाइरेक्टर को लिखा। पर उन्होंने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। इस पर ऋण दाताओं ने इंगलैण्ड के बैरिस्टरों की मार्फत लंदन की कोर्ट आफ-किंग्स बैन्च में आनरेबुल ईस्ट इण्डिया कम्पनी के विरुद्ध नालिश कर दी। कोर्ट आफ किंग्स बैन्च से

ईस्ट इण्डिया कम्पनी के ऊपर अनुज्ञा हुई कि ईस्ट इण्डिया कम्पनी अवध के बादशाह को ऋण का रुपया अदा करे तथा अवध के बादशाह ऋण-दाताओं को ऋण अदा कर दें। वह ऋण अवध के राज कोष से अदा कर दिया गया था, पर आनरेबुल ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने वह रक़म अभी अदा नहीं की है। तथा इसके अतिरिक्त अवध के राजकोष से और भी ऋण आनरेबुल कम्पनी की सरकार को भेंट किया गया है। वह सब, या उसका एक जुज़ यदि आनरेबुल कम्पनी अवध को अदा कर के हमारी सहायता करे तो—तो हम रियाया की वहबूदी के लिए उसे काम में लाएँ।"

लार्ड वैंटिक का चेहरा क्रोध से तमतमा गया। उसने कहा—"वजीरे अवध को मालूम हो,—कि आनरेबुल ईस्ट इण्डिया कम्पनी अवध राज्य की अधिराज है। और यह ज्यादा ठीक होगा—कि वह तमाम अख्तिया-रात मय पूरे खजाने के अपने हाथ में ले ले—और देखे—कि कौन सा क़र्जा किस तरह चुकाया जा सकता है। इस के अलावा हिज मेजस्टी के लानतान और फजूलखर्चियां भी ऐसी हैं—जिन से रियासत की बेहतरी का कोई ताल्लुक नहीं है। चूँकि आनरेबुल कम्पनी ने हिजमेजस्टी को बादशाह बनाया है, उसे यह पूरा हक है कि वह उन्हें उससे बर-तरफ भी कर दे। फिलहाल जो शिकायतें हमारे पास पहुँची हैं, उनसे साफ प्रकट होता है कि हिज मेजस्टी सलतनत का बोझ उठाने योग्य नहीं हैं—इस लिए क्यों न सलतनत को ब्रिटिश अधिकार में ले लिया जाय।"

हकीम महदीअलीखां निरुत्तर हुए। बादशाह ने आँखों में आँसू भर कर कहा—"आप मेरे ऊपर इस क़दर सख्ती करेंगे, यह मैंने उम्मीद नहीं की थी। अब तो मैं आप के रहम पर ही उम्मीद कर सकता हूँ। मैं बादशाह हूँ और मैं अब अपने शाही फर्ज से ग़ाफिल न रहूँगा।"

"तो ज्यादा बेहतर होगा, कि एक अंग्रेज कमिश्नर वजीर हकीम महदी अली के सलाह मश्वरे को मुक़र्रिर कर दिया जाय और वजीर अवध उसकी राय से सब इन्तज़ाम करें। साथ ही हिज मेजस्टी वादा करें कि वह

ठीक तौर से रियासत का इन्तजाम देखेंगे। और मुल्क की बदअमनी दूर करेंगे, तो मैं उन्हें दो साल का समय दे सकता हूँ। दो साल के अन्दर रियाया की हालत सुधार लें। वरना अवश्य ही अवध का राज्य ब्रिटिश राज्य में मिला लिया जायगा।"

इतना कह कर गवर्नर-जनरल एकदम उठ खड़े हुए। बादशाह ने उन्हें कांपते हाथों रत्न-जटित सुनहरी हार पहनाया जिसका मूल्य एक लाख रुपए था। गवर्नर-जनरल ने बादशाह से हाथ मिलाया और चल दिए। दरबार बर्खास्त हो गया।

: ३६ :

कुत्ते की मौत और कुत्ते की जिन्दगी

लार्ड वैंटिक के लखनऊ से जाने के बाद बादशाह नसीरुद्दीन अर्द्ध विक्षिप्त की भाँति रहने लगा। बड़े-बड़े प्रतिष्ठित अधिकारियों को उसने पदच्युत करना और उन्हें जेल भेजना आरम्भ कर दिया। हज्जाम के साथ बादशाह खाना खाते हैं, यह कारण बता कर जब गवर्नर-जनरल ने बादशाह के साथ खाना अस्वीकार कर दिया—तब बादशाह के अन्य अंग्रेज मुसाहिबों ने भी हज्जाम के साथ खाने से इन्कार कर दिया। इस पर बादशाह ने खीझ कर सब को मौकूफ कर दिया। अब उसकी नजर हज्जाम से भी फिर गई। वह बात-बात पर उसे डांटने-फटकारने और अपमान करने लगा। अब हज्जाम भी समझ गया कि उसकी उतरती जोत है। वह बड़ा चालाक था, उसने अपना सारा संचित धन, सत्तर-अस्सी लाख, एकत्र किया और उसे लेकर कलकत्ते भाग गया। और वहाँ से वह जहाज में सवार हो कर विलायत चला। वहाँ कुछ दिन ठाट-बाट से रहा। उसने चाहा कि रुपया खर्च करके वह बैरन बन जाय, वह बड़े-बड़े आदमियों को भारी-भारी भोज देता रहा। लंदन में उसका नाम 'इण्डियन-नवाब' के नाम से मशहूर हो गया। परन्तु

वह बैरनट न बन सका। जिस-जिस कारोबार में उसने रुपया फँसाया—उसी का दिवाला निकल गया। धीरे-धीरे उसका सब धन नष्ट हो गया। और वह चार ही पाँच वर्षों में छूछ हो गया। एक बार उसने फिर लंदन में नाई का धन्धा चलाना चाहा—पर वह भी न चला और अन्त में बुरी तरह उसकी मौत हुई।

नाई के लखनऊ से चले जाने पर नसीरुद्दीन की सारी दिल्लगी का सामान ख़त्म हो गया और वह बीमार हो गया। उसे यह भय हो गया कि उसे सब लोग जहर देकर मार डालना चाहते हैं। खाना सामने लाने पर वह उसे गुस्सा करके फेंक देता था और बड़ी देर तक बड़बड़ाया करता था। उसे किसी पर विश्वास न था। बहुधा वह साधारण सिपाहियों को बुला कर उनसे बाजार से चना-चबेना मंगा कर खाता। उनसे क़स्में लेता कि कहीं उन्होंने ज़हर तो नहीं मिला दिया है।

रंगमहल में इन दिनों अनेक दल बन गए थे—सब एक दूसरे से षड्यन्त्र रच रहे थे। महदीअली ने अपना दल अलग बना लिया था। बादशाह बेगम और बेगम आलिया का दल अलग था। जनाब बेगम आलिया को लड़-झगड़ कर उसने फ़ैज़ाबाद भेज दिया था। मन्नाजान अब बादशाह बेगम के पास था। उन्होंने उसे अपना दत्तक पुत्र घोषित किया था। परन्तु बादशाह ने घोषणा द्वारा प्रचारित कर दिया था कि मन्नाजान मेरा बेटा नहीं है। उसे मैं गद्दी का वारिस बनाना नहीं चाहता।

इस वक्त एक बांदी अशरफ उसकी खिदमत में रहती थी। अब वह बहुत कम बाहर निकलता था।

१८३७ की जुलाई को तीसरे पहर गर्मी से घबरा कर बादशाह ने शर्बत मांगा, अशरफ ने शर्बत ला दिया। शर्बत पीने के आधा घन्टे बाद बादशाह छटपटाने लगा। बाँदियाँ, लौंडियाँ शोर मचाने लगीं। तुरन्त हकीम मिर्जा अली की तलबी हुई। मिरज़ा अली ने देख कर कहा—"बादशाह ने ज़हर खा लिया है।"

थोड़ी देर में बादशाह की मृत्यु हो गई। मृत्यु की खबर रेजीडेन्सी पहुँची। नए रेजीडेन्ट कर्नल लॉ तत्काल अपने दोनों सहयोगियों—पाटन और शेक्सपियर के साथ महल में आए। पाटन को महल के द्वार पर बिठाकर रेजीडेण्ट ने बादशाह के कमरे में प्रवेश किया। बाँदी अशरफ़ लापता थी।

इसके बाद नसीर के वृद्ध चचा नवाब मुहम्मद अली को तलब किया। और उनसे कहा—"हम आप को बादशाह बनाने की कोशिश करेंगे।"

वृद्ध नवाब ने तीन बार झुक कर कर्नल लॉ को सलाम किया। और कहा—खुदा कम्पनी बहादुर को सलामत रखे। उसके बाद वे नमाज पढ़ने चले गए।

रेजीडेंट रेजीडेंसी में लौट आए। महल पर उनके सहयोगी पाटन की निगरानी रही।

रात के दो बजे बादशाह बेगम अपनी स्त्री सैन्य लेकर पालकी पर चढ़ मुन्नाजान को हाथी पर बैठा महल के द्वार पर आईं। पाटन साहब ने द्वार बन्द कर दिया। पर बेगम ने हाथी से द्वार तुड़वा डाला। इस समय बेगम के सम्पर्क के पन्द्रह सौ सिपाही आ जुटे। वे सब हथियार लेकर

मरने-मारने को तैयार हो गए। बेगम ने महल में प्रवेश किया। पाटन साहब ने पालकी पकड़ ली। बेगम के सिपाही तलवार लेकर उन पर टूट पड़े। पाटन साहब घोड़े पर चढ़ कर रेजीडेंसी भाग गए।

बेगम ने मन्नाजान को दरबार में जाकर तख़्त पर बैठा दिया। तत्काल ही महल में जश्न होने लगे।

परन्तु सूर्योदय के साथ ही अंग्रेज़ी सेना ने महल को घेर लिया और हुक्म दिया कि यदि बादशाह-बेगम पाँच मिनट में महल से बाहर न निकलीं तो अंग्रेज़ी सेना महल पर गोले बरसाएगी। बेगम ने कुछ ध्यान नहीं दिया। अब महल पर गोले बरसने लगे। देखते-ही-देखते बेगम के पाँच सौ सिपाही मारे गए। जो बचे वे भाग खड़े हुए।

अंग्रेज़ी सेना के कमाण्डर ने भीतर घुस कर मन्नाजान को रस्सियों से बाँध लिया। एक मेहतरानी बादशाह-बेगम को पकड़ कर रेजीडेन्सी ले चली।

सारा लखनऊ देख रहा था। बेगम और मन्नाजान चार दिन रेजी-डेन्सी में कैद रहे। फिर उन्हें कैदी ही की हालत में कानपुर भेज दिया गया।

इसके बाद अंग्रेज़ों ने वृद्ध नवाब मुहम्मद अली को सिंहासन पर बैठा कर उन्हें अवध का बादशाह घोषित किया। बादशाह बन कर उन्होंने सब पुराने राज-कर्मचारियों को पदच्युत कर दिया। केवल हकीम महदी अली खाँ प्रधानमन्त्री बने रहे।

: ३७ :

पुराने घरानों का ख़ात्मा

उस समय मुग़ल बादशाहों और दूसरे हिन्दू राजा रईसों की ओर से हज़ारों घरानों को और हज़ारों धार्मिक और शिक्षा सम्बन्धी या समाज-

सुधार सम्बन्धी संस्थाओं और व्यक्तियों को माफ़ी की ज़मीन, जागीरें मिली हुई थीं जिन्हें लाखिराज कहते थे। अभी तक इन माफ़ीदारों पर अंग्रेजों की नज़र नहीं गई थी, न उन्होंने इन में हस्तक्षेप किया था। परन्तु लार्ड वैंटिक ने हर ज़िले के कलक्टरों को यह अधिकार दे दिया कि वह अपने ज़िले की जिस लाखिराज ज़मीन को उचित समझें कम्पनी के नाम ज़ब्त कर लें। इस आदेश के कारण अनेक पुराने खुशहाल घराने बर्बाद हो गए और उन्हें उनके घरबार से निकाल बाहर कर दिया गया।

अब उसने जागीरदारों, ज़मींदारों और जायदाद वालों की ओर रुख किया। वह नहीं चाहता था कि कोई पुराना घराना सम्मानित रहे। अतः जो ज़मींदार या जागीरदार अपुत्र मर जाते उनकी ज़मीन-जायदाद छीन कर ज़ब्त कर ली जाती थी। पिछले मालिकों के दत्तक पुत्रों—भाई-भतीजों के सब अधिकारों को रद्द कर दिया गया। इसके अतिरिक्त सब ज़मींदारियों की उसने सबसे ऊँची बोली बोलने वालों को नीलाम कर तीस वर्षों के लिए सैटिलमैंट का विधान किया। जिस ने सभी प्राचीन ज़मींदारों को उखाड़-पछाड़ डाला। सब पुराने घराने उलट-पुलट हो गए। किसानों, व्यापारियों और दूकानदारों से टैक्स और चुंगी के नए नियमों के अनुसार टैक्स लिया जाने लगा। जिसके कारण व्यापार-वाणिज्य और कारोबार में गड़बड़ी फैल गई। यह सब टैक्स बड़ी कठोरता से वसूल किए जाते थे। सड़क के ऊपर की दूकानों और सायबानों पर भी टैक्स लिया जाता था। लोगों के धन्धों और औज़ारों पर भी टैक्स लिया जाता था। यहाँ तक कि चाकुओं पर भी टैक्स लगा दिया गया था जो कभी-कभी चाकू की क़ीमत से छह गुना तक होता था।

इन सब क़ानूनों से उस समय के समाज के सब छोटे-बड़ों का ढाँचा ही उलट-पुलट हो गया।

: ३८ :

शतरंज का दूसरा मोहरा

सन् १८०६ में पंजाब के महाराज रणजीतसिंह और अंग्रेज़ों के बीच यह सन्धि हुई थी कि सतलुज के इस पार का इलाक़ा कम्पनी के लिए छोड़ दिया जाए। और सतलुज के दूसरी ओर रणजीतसिंह अपना साम्राज्य जितना चाहें बढ़ा लें, अंग्रेज बाधक नहीं होंगे। रणजीतसिंह ने ईमानदारी से इस शर्त का पालन किया था. और उसने काश्मीर, मुलतान और पेशावर के इलाक़ों को अपने साम्राज्य में मिला लिया था। इन बीस वर्षों में उसने बड़ी भारी शक्ति और प्रबल सेना सुगठित कर ली थी। इस समय उसकी सेना भारत की सब से अधिक संगठित और वीर सेना थी। उस का साम्राज्य विशाल, समृद्ध और उर्वर था। अब वह सिन्ध विजय के सुपने देख रहा था। परन्तु अंग्रेज़ों की नज़र उससे बड़ी थी, उसे सिन्ध नदी और सिन्ध प्रान्त को ईरान, रूस और अफ़ग़ानिस्तान पर अपनी नज़र रखने के लिए अपने हाथ में रखना आवश्यक था।

इसी प्रयत्न के सिलसिले में उसने रणजीतसिंह के पास उपहार भेजे थे। और इसके बाद बैंटिक ने उससे मिलने की प्रार्थना की थी। बादशाह विलियम द्वारा भेजे हुई घोड़ागाड़ी से प्रसन्न होकर उसने वैंटिङ्क से मिलना स्वीकार कर लिया था। अब लखनऊ से फ़ारिग़ होते ही लार्ड बैंटिक सीधा पंजाब पहुँचा और रोपड़ में जा कर महाराज रणजीतसिंह से मुलाक़ात की। यह मुलाक़ात खूब शानदार रही। इस समय दोनों ओर से भरपूर शान का दिखावा रहा। वैंटिङ्क इस समय काफी सेना साथ ले गया था। इस समय अफ़ग़ानिस्तान का शाहेशुजा लुधियाने में क़ैद था। इस मुलाक़ात में यह तय हुआ—कि शाहशुजा को सामने रखकर अफ़ग़ानिस्तान पर हमला बोल दिया जाए। शाहशुजा को तीस हजार सेना दी गई, जिसे ले कर वह पहले सिंध की ओर बढ़ा, और वहाँ से वह कंधार होता हुआ काबुल पर जा धमका। पर काबुल के तत्कालीन शाह दोस्त मुहम्मद ने उससे करारी टक्कर ली, और उसे काबुल से मार

भगाया। बैंतों से पीटे हुए कुत्ते की भाँति शाहशुजा दोस्त मुहम्मद से मार खा कर फिर लुधियाने में आ कर अंग्रेज़ों का बन्दी हो गया।

इस चाल में मात खा कर अंग्रेजों ने सिंध नदी के निचले हिस्सों पर क़ब्ज़ा करना और सिंध के किनारों पर अपनी छावनियाँ बनाना आरम्भ किया। रणजीतसिंह ने इस का विरोध तो किया पर वह अंग्रेज़ों से बिगाड़ने की हिम्मत न कर सका। और इस प्रकार सिंध विजय के उस के मनसूबे मन ही में रह गए। वह अब बहुत वृद्ध हो चुका था। तथा अपनी खालसा सेना को क़ाबू में रखना उसे दूभर हो रहा था। अंग्रेज़ अब वहाँ चाँदी की गोलियाँ चला रहे थे। इससे रणजीतसिंह के सम्मुख बड़ी-बड़ी उलझनें पैदा हो रही थीं—वह उन्हीं में अपने अन्तिम क्षण तक उलझा रहा। और जब वह सन् १८३६ में मरा तो अंग्रेजों के फैलाए हुए जाल में फंस कर देखते ही देखते उसका विशाल सिख साम्राज्य विध्वंस हो गया।

सिंध नदी की जो सर्वे की गई थी उसके गुल थोड़े दिन बाद खिले जब कि धीरे-धीरे सिंध—पंजाब—बलोचिस्तान, चित्तराल और अफ़ग़ानिस्तान का भी कुछ भाग अंग्रेज़ी राज्य में मिल गया और ब्रिटिश-भारतीय साम्राज्य की साइन्टिफिक फ्रन्टियर स्थापित हो गया।

सिंध नदी की सर्वे करने और रणजीतसिंह को ब्रिटेन के राजा की सौग़ात घोड़ा-गाड़ी भेंट करने एक चतुर अंग्रेज़ लेफ्टिनेन्ट वर्न्स गया था। लार्ड बैंटिंक ने उसे वहाँ से मध्य एशिया भेज दिया कि वह मध्य एशिया और भारत की बीच की ताक़तों को कम्पनी की ओर करे। उसके साथ डाक्टर गेरार्ड, मुन्शी मोहनलाल और सरवेयर मोहम्मद अली थे। ये लोग पहले अफ़ग़ानिस्तान पहुँचे। उसके बाद भाँति-भाँति के बहाने बना कर मध्य एशिया में घूमते—वहाँ का सर्वे करते—और नक़्शे बनाते रहे। और जब लार्ड बैंटिङ्क अपनी यात्रा सफल करके कलकत्ते लौटा तो ये लोग भी अपनी अफ़ग़ानिस्तान की पूरी भूमिका तैयार कर बहुत-से नक़्शे—मानचित्र—और गुप्त कागज़-पत्र लेकर भारत लौट आए।

: ३९ :

मुक्तेसर की तबाही

मराठों के जाने के बाद चौधरी ने मुक्तेसर के गढ़ के भीतर ही हवेली बनवाई थी। हवेली बहुत भारी थी। उसका विस्तार भी बहुत था। यों तो मुक्तेसर भी बहुत भव्य बना था। गढ़ के चारों ओर चार सिंहद्वार थे। उत्तर द्वार से ही नया बाज़ार आरम्भ होता था—जो काफी दूर तक चला जाता था। इस बाज़ार में आजकल काफी रौनक़ रहती थी। पश्चिम की ओर मुक्तेसर महादेव का देवाधिष्ठान था। उसी के निकट गंगा का मन्दिर भी था। मन्दिर के पास ही पुराने ढंग का कुंआ था। जिस के सम्बन्ध में बहुत सी किम्बदंत्तियां प्रसिद्ध थीं। वहीं कुछ वैरागियों के उजड़े हुए मठ थे। कभी इन मठों में हाथी झूमते थे—पर इस समय दस पाँच वैरागी यहाँ रहते और हरिभजन करते थे। दक्षिण की ओर नौकरों—और प्रजाजनों की बस्ती थी। जो अब काफी बढ़ गई थी। अब मुक्तेसर ने एक अच्छे क़स्बे का रूप धारण कर लिया था। गढ़ के पूर्वी द्वार के बाहर मराठों की सेना की छावनी थी, जहाँ के घर अब उजड़ चुके थे। और उन में अब चौधरी के कुछ सिपाही और पशु रहते थे। यहाँ पर कुछ कंजर-सांसिए और खानाबदोश कौमें बस गईं थीं जिन्हें चौधरी ने कुछ ज़मीन देकर कृषक बना दिया था।

गढ़ के मध्य में चौधरी की दुमंजिली हवेली थी। हवेली का फाटक बहुत विशाल था। फाटक से घुसते ही विशाल मैदान था। जिसके चारों ओर बारकें बनी थीं। बारकों में चौधरी के हाथी, घोड़े, रथ-बहल और नित्य काम आने वाले पशु और साईस—कोचवान, घसियारे—बरकन्दाज—सिपाही पहरेदार रहते थे। इसके बाद फिर एक भीतरी चहार दिवारी थी—जिसे एक फाटक से पार किया जाता था। चहार दिवारी के भीतर उम्दा बागीचा था, जिस में सदा फूल खिले रहते थे। चौधरी को फूलों से बड़ा प्रेम था। इस पुष्पोद्यान के बीचोंबीच ही का एक

रास्ता पश्चिम की ओर जाता था। जहाँ चौधरी की कचहरी— बैठकखाना और दरबारघर था। इसी के एक छोर पर ज़नानखाना था। जिस के बीच बड़ा सा आंगन था। उस के पिछवाड़े घरेलु नौकर, दाइयाँ, और महरियों के रहने का स्थान था।

नया बाज़ार इन दिनों खूब गुलज़ार रहता था। गुड़ और गल्ले की अच्छी मण्डी थी। उस दिन बाजार का खास दिन था। बाहर के व्यापारी और ग्राहक भी आस-पास के ग्रामों से आए थे। इन व्यापारियों के जिन्सों के ढेर सड़कों पर पेडों की छाया में लग रहे थे, लोग झुण्ड के झुण्ड जहाँ-तहाँ खडे अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ खरीद रहे थे। तीसरे पहर का समय था कि कुछ लोग बदहवासी की हालत में भागते हुए बाज़ार में आए—और कहने लगे -भागो-भागो, कम्पनी बहादुर का चकलादार बहुत से वरकन्दाजों और अंग्रेज़ी फौज सहित इधर ही आ रहा है। वह सब से टैक्स वसूल कर रहा है। नयागांव लूट लिया गया है। और बड़े मियां गिरफ्तार हो गए हैं। अब वे मुक्तेसर आ रहे हैं। जो पाते हैं, वही समेट लेते हैं। अपना-अपना सामान लेकर भागो-भागो।

बाज़ार में भगदड़ मच गई। जिसका जिधर मुँह उठा भाग निकला। पर जिनका सामान फैला हुआ था—वे हक्का-बक्का एक दूसरे का मुँह देखने लगे। कुछ ने कहा—भाग कर कहाँ जाएं, जिन्स-सामान कहाँ ले जाएं। यह तो बड़ी मुसीबत की बात हुई।

परन्तु अभी ये बातें हो ही रहीं थीं कि कम्पनी का चकलादार मुहम्मद इकरामखां और हापुड़ का तहसीलदार हाथी पर सवार आ बरामद हुए। इनके साथ मेजर फास्टर के साथ एक हथियारबन्द फौज भी थी। इस के अतिरिक्त बहुत से सिपाही और वरकन्दाज़ थे। इस फौज ने देखते-देखते ही बाज़ार को चारों ओर से घेर लिया। तहसीलदार ने हाथी ही पर से हुक्म दिया—चकलादार, तुम सब से सरकारी टैक्स वसूल करो।

चकलादार मुहम्मद इक़रामखां इस काम में बहुत होशियार और

मुस्तैद आदमी था। हाथी से उतर कर उसने अपने आदमियों को इशारा किया और वे एक सिरे से बाज़ार को लूटने लगे।

लूट-खसोट होने पर कुछ लोग अपनी जमा-जथा सम्हाल कर भागने लगे। कुछ ने दबादब अपनी दूकानें बन्द कर दीं, कुछ रोने गिड़-गिड़ाने और चीखने चिल्लाने लगे, कुछ सिपाहियों से मारपीट पर आमादा हो गए। एक नवयुवक एक गाड़ी गेहूँ लाया था—उसका उसने एक आढ़ती से सौदा किया था। जिन्स तोल वह रुपया गिन रहा था। खरीदार के आदमी गेहूँ बोरों में भर रहे थे—कि बरकन्दाजों ने बोरों पर कब्जा कर लिया। चकलादार ने आकर रुपयों की न्योली युवक की कमर से खोस

कर कहा—साला बदज़ात, बिना ही सरकारी टैक्स अदा किए सब रकम कमर में बांधे लिए जा रहा है। लड़का चिल्लाने लगा—ताऊ दौड़ना-दौड़ना, इन्होंने ने सब रुपए छीन लिए, ये गेहूँ के बोरे लिए जा रहे हैं। लड़के के रिश्तेदार और आढ़ती के आदमियों ने आकर बोरे रोक दिए। और चकलेदार से रुपया तलब किया—तो चकलादार ने तहसीलदार से कहा—दुहाई सरकार, ये सब बदमाश डाकू सरकारी काम में दखल देते हैं, सरकारी कुर्क माल को छीनना चाहते हैं। इस पर तहसीलदार ने सब को गिरफ्तार करने का हुक्म दिया। तुरन्त सब की मुश्कें कस ली गईं इस पर बहुत भीड़ इकट्ठी हो गई और मार-पीट होने लगी।

: ४० :

चौधरी की विपत्ति

जिस समय मुक्तेसर के बाजार में यह सब घटना, लूट-खसोट हो रही थी उसी समय बड़ेगाँव के छोटे मियाँ—अहमद बदहवास उनके पास पहुँचे। उन्होंने कहा—"चाचाजी, ग़जब हो गया। कम्पनी सरकार के आदमी अब्बा हुज़ूर को गिरफ्तार कर के ले गए हैं। उन्होंने उन्हें मेरठ जेल में ठूँस दिया है। इसके अलावा घर का सारा असबाब कुर्क करके घर में सरकारी ताले जड़ दिए हैं।"

चौधरी अभी मरण-शैया पर थे। वे हड़बड़ा कर उठ बैठे। उन्होंने छोटे मियां को ढारस दी और कहा—"घबराओ मत, खुलासा हाल कहो, मामला क्या है।"

छोटे मियां रो उठे। रोते-रोते उन्होंने कहा—"क्या कहूँ, सखावत अब्बा को खा गई। मालगुज़ारी अदा नहीं हुई, वह रुपया जो आपसे लिया था—कल्लू भंगी की लड़की की शादी में खर्च हो गया। माल-गुज़ारी अदा करने के बन्दोबस्त में अब्बा परेशान थे ही कि यह क़यामत

बर्पा हो गई। लाचार मैं आप की खिदमत में हाज़िर आया हूँ। आप ही हमारी इज्ज़त बचा सकते हैं चाचा जान।"

छोटे मिया रोते-रोते चौधरी के पैरों में लोट गए। चौधरी ने ढारस देते हुए कहा—"होंसला रखो बेटे, बड़े भाई ने कोई जुर्म नहीं किया। वे मालगुज़ारी ही लेंगे—या किसी की जान लेंगे। तुम घबराओ मत। अभी मालगुज़ारी अदा करके अपने अब्बा को जेल से छुड़ा लाओ। रुपए की फिक्र मत करो।"

उन्होंने सुरेन्द्रपाल को बुला कर कहा—"बेटे, अभी तुम भाई के साथ मेरठ चले जाओ। तीन तोड़े रुपया नक़द रख लो, दो सिपाही साथ ले लो। यहाँ से तावड़-तोड़ रथ में जाओ। मैं ही चलता—पर लाचार हूँ। मेरठ में हमारे दोस्त ठाकुर रघुराजसिंह हैं, उनके घर चले जाना। वे सब काम आनन-फानन में करा देंगे। बड़ा दब-दबा है उनका कम्पनी के नौकरों पर। कलक्टर के चीफ रीडर हैं। अपने ही आदमी हैं।"

सुरेन्द्रपाल और छोटे मियाँ तोड़े लेकर अभी रथ पर सवार हुए ही थे—कि बहुत से लोग गढ़ी में घुस आए। उन्होंने कहा—"चौधरी सरकार की दुहाई—मुक्तेसर का बाज़ार लुट रहा है। सारा बाज़ार फौज ने घेर रखा है।"

इसी समय रामपालसिंह और दूसरे चौधरी के लड़के भी वहाँ आ जुटे। सभी के चेहरों पर घबराहट छाई हुई थी। पर चौधरी ने धैर्य से काम लिया और रामपाल से कहा—"बेटा, तू जाकर देख, कौन अफसर है और झगड़े का कारण क्या है, तथा जैसे बन सके झगड़े को रफ़ा-दफ़ा कर। लोग घबराए हुए हैं। और समय ख़राब है।"

रामपालसिंह घोड़े पर चढ़ कर बाजार की ओर चल दिए। फरियाद करने को जो लोग आए थे—वे भी साथ हो लिए। राह में भागते हुए लोगों को रामपालसिंह ने तसल्ली दी तो वे भी साथ हो लिए। बाज़ार में पहुँचते-पहुँचते सौ-पचास आदमियों का हजूम रामपाल के

आगे-पीछे हो गया। रामपालसिंह ने दूर ही से देखा कि बाज़ार में लाठियाँ खिंची हुई हैं। इसी समय उसे बन्दूक की आवाज़ सुनाई दी।

रामपाल के कुछ साथी ठिठक गए। कुछ और तेज़ी से आगे बढ़े। इसी समय दो-चार आदमी भागते आए—वे कह रहे थे—वहाँ तो लाशें फड़क रही हैं चौधरी, वहाँ मत जाओ। पर रामपाल ने तीर की भाँति अपना घोड़ा छोड़ दिया। कम्पनी की फौज के अफसर फास्टर ने ज्यों ही रामपालसिंह को एक भारी गिरोह के साथ आते देखा, पिस्तौल दाग़ दिया। गोली रामपालसिंह की कनपटी को फोड़ कर पार हो गई। राम-पालसिंह वहीं मर कर ढेर हो गए।

बड़ी भारी दुर्घटना हो गई। बाज़ार में भगदड़ मच गई। बड़ा हो-हल्ला मचा। क्षण भर ही में यह खबर गढ़ी में पहुँच गई। गढ़ी और हवेली में हाहाकार मच गया। सुखपाल, किशोरपाल और विजयपाल, नरेन्द्रपाल और यशपाल बन्दूकें उठा, लोगों को ललकारते हुए नंगी पीठ घोड़े पर चढ़ दौड़े। बूढ़े चौधरी रोकते ही रहे। सेवाराम ने पीछे से हाँक लगाई और अपनी तलवार सूंत ली। उसने कहा—चलो आज इन फिरं-गियों का खून पिएँ। अरे, मालिक ठौर ही गए, सेवक के जीवन को धिक्कार है। देखते-ही-देखते चार-पाँच सौ आदमी गंडासे, भाले, सुर्खी, लाठी, तलवार ले लेकर दौड़ पड़े।

बाज़ार में इस समय लाशें फड़क रही थीं। लोग चारों तरफ़ भाग रहे थे। अब चौधरियों को धावा करते देख, हर-हर महादेव करते—सब लोग लौट चले। चौधरियों के सिर पर खून सवार था। वे हवा में उड़े जा रहे थे। सेवाराम लोगों को ललकारता, बढ़ावा देता उनके पीछे-पीछे तलवार घुमाता दौड़ रहा था। चारों ओर से सिमट-सिमट कर लोग उन के साथ हो लिए। उन्होंने तहसीलदार और चकलेदार को घेर लिया। मेजर फास्टर घोड़े पर एक ऊँचे स्थान पर खड़ा अभी अपने सिपाहियों को पंक्तिबद्ध कर ही रहा था कि विजयपाल की गोली उसके सीने से पार हो गई। वह घोड़े से गिर पड़ा। यह देख चकलेदार और तहसीलदार

हाथी पर चढ़ कर भाग चले। पर सैंकड़ों आदमियों की भीड़ ने उन्हें घेर लिया। अंग्रेज़ अफ़सर के मरने पर सिपाही मैदान छोड़ कर भाग खड़े हुए। चौधरी ने घेर कर तहसीलदार और चकलेदार को हाथी से खींच कर ठौर मार डाला। और भी सरकारी सिपाही मारे गए। शेष भाग गए। मुर्दों को घसीट कर बीच चौक में डाल उन्हे फूंक दिया गया। हाथी को पीट कर भगा दिया गया। मरे हुए सिपाहियों की बन्दूकें और हथियार लूट लिए गए।

बड़े चौधरी ने सुना तो वह सक्ते की हालत में देर तक पड़े रहे। फिर उन्होंने छहों बेटों को बुला कर कहा—"काम बहुत बुरा हुआ। अब जो कुछ इसका परिणाम होगा मैं देखूंगा। पर तुम लोग स्त्रियों को ले कर पंजाब की ओर भाग जाओ। महाराज रणजीतसिंह हमारी मदद करेंगे पर किसी ने भी भागना स्वीकार नहीं किया। सबने कहा, जो भोगना होगा सभी भोगेंगे। चौधरी हताश भाव से पलंग पर गिर गए। चौधरी बड़े दीर्घदर्शी थे। उन्होंने बड़ी दुनिया देखी थी। क़त्ल और लूट के संगीन जुर्म उनकी आँखों में थे। कम्पनी के राज्य की अंधेरगर्दी वह जानते थे। इस बुढ़ापे और रुग्णावस्था में वे अपने पुत्र का ज़ख्म तो खा ही गए, भावी विपत्ति जैसे मुँह बा कर उनके समूचे सौभाग्य को ग्रसने को तैयार हो गई थी। रामपाल बहुत सुयोग्य पुरुष था। इस समय वही घर-बार का स्वामी—और कर्ता-धर्ता था। सब भाई उसे मानते थे। वह धीर-वीर गम्भीर था। उसका अन्याय पूर्वक ही वध हो गया। यद्यपि काफ़ी बदला लिया जा चुका था—पर चौधरी के लड़के सब बफरे शेर की भाँति दहाड़ते फिर रहे थे—वे अब भी मरने मारने पर तुले हुए थे।

फास्टर पर गोली विजयपाल ने चलाई थी। उसे बहुत लोगों ने देखा था। इसलिए चौधरी ने बहुत अनुनय-विनय की—कि वह औरतों को तथा धन सम्पत्ति को ले कर पंजाब भाग जाए। महाराज रणजीतसिंह उसे मदद देंगे। पर उसने एक न सुनी। उसने कहा—मैं भागूँगा नहीं। इन फ़िरंगियों से निबटूँगा अच्छी तरह। अब चौधरी को असल विपत्ति

स्पष्ट दीखने लगी। उसे स्त्रियों की चिन्ता हुई। उसने छोटे बेटे सुखपाल से कहा—बेटा, तू ही—मेरी सुन, सब स्त्रियों और बच्चों को यहाँ से हटा ले जा, तू मेरठ जा और ठाकुर रघुराजसिंह के यहाँ सब को छोड़ आ। जा, देर न कर। स्त्रियाँ किसी तरह जाने को राज़ी न होती थीं। परन्तु चौधरी ने किसी तरह सब को बहलों में बैठा कर मेरठ रवाना कर दिया। साथ में जितना नक़दी और ज़ेवर जवाहरात थे—वे भी रख दिए। सुखपाल को समझा दिया, तू वहाँ हमारी प्रतीक्षा करना हम भी मेरठ आ रहे हैं। मेरठ में सुरेन्द्रपाल है, ठाकुर है। उनकी सलाह से काम करना। जल्दी न करना।

इन सब बातों में दिन बीत गया। दिन ढल रहा था, जब सुखपाल बहलियों में सब स्त्रियों को लेकर मुक्तेसर से निकला। स्त्रियाँ ज़ार-ज़ार रो रही थीं। सब लोग लहू का घूँट पिए बैठे थे। क्षण-क्षण का वातावरण भारी होता जा रहा था। बहल के साथ दस-बारह हथियारबन्द सिपाही भी सुरक्षा के विचार से थे। सुखपाल बन्दूक़ लिए घोड़े पर सवार था। मंगला किसी तरह दादा को छोड़ कर नहीं गई। पिता के आघात से वह क्रुद्ध सिंहनी की भाँति अंग्रेज़ों के खून की प्यासी थी।

वह दिन भी यों ही बीत गया। शायद मुक्तेसर में उस दिन किसी के घर चूल्हा न जला था। बहुत लोग रातों-रात घर-बार छोड़ भाग गए थे। जो रह गए थे—वे सब गढ़ी में एकत्र हो रहे थे। वे सब मरने मारने पर तुले हुए थे।

अभी दिन पूरे तौर पर नहीं निकला था कि अंग्रेज़ी सेना ने गढ़ी और हवेली को घेर लिया। सेना के साथ मेरठ का कलक्टर, ज़िले का मैजिस्ट्रेट और दूसरे अफ़सर भी थे। मैजिस्ट्रेट ने हुक्म दिया कि गढ़ी और हवेली में जितने स्त्री-पुरुष हैं सब गिरफ़्तार हो जाएँ।

परन्तु इसके जवाब में वहाँ दूसरा इन्तज़ाम हो रहा था। अंग्रेज़ी फौज को आते देख—चौधरी लोग छतों पर बन्दूकें ले लेकर चढ़ गए। सेवाराम एक बन्दूक लेकर गढ़ी के द्वार पर आ डटा। दूसरे लोग भाले—

सुर्खी और गंडासे, लाठियाँ ले लेकर मुस्तैद खड़े हो गए। मैजिस्ट्रेट के मुँह से अभी शब्द निकले ही थे—कि तुरन्त उन पर गोलियों की बौछार होने लगी। जवाब में सेना ने भी बाढ़ दागी। बड़ा भारी शोर और हो-हल्ला मच गया। लोगों ने झरोखों में पत्थर रख कर करारी मार मारनी आरम्भ की—बहुत लोग लाठियाँ सुर्खी भाले-गँडासे ले कर सिपाहियों से भिड़ गए। नमक के नाम पर लड़ने वाले सिपाही भाग खड़े हुए। जिले के मैजिस्ट्रेट की आँख में एक पत्थर आ लगा—उसकी आँख फूट गई।

अब तो यह विग्रह मुक्तेसर के विद्रोह का रूप धारण कर गया। कलक्टर ने ताबड़ तोड़ मेरठ से गोरी पल्टन और तोप मंगाई। तीसरा पहर होते-होते तोप और नई फौज आ गई। तोप को हवेली के सिंहद्वार के आगे रख कर अंग्रेज़ कप्तान ने कहा—दस मिनट का समय है, कि गढ़ी और हवेली के सब लोग और चौधरी हथियार रख कर ताबे हो जायँ—वरना सबको तोप से उड़ा दिया जायगा।

एक बार चौधरी ने फिर लड़कों से कहा—कि वे चुपचाप गिरफ्तार हो जायँ। पीछे देखा जायगा। पर लड़के अभी आत्म-समर्पण करने को तैयार न थे।

इसी समय एक गोला तोप से छूटा और हवेली के फाटक की धज्जियाँ हवा में उड़ गईं। साथ में जो आदमी फाटक पर थे—उनके हाथ, पैर-धड़ छिन्न-भिन्न हो कर हवा में उछल गए। इसके बाद बन्दूकों की बाढ़ दगी। फिर तोप का धड़ाका। हवेली का सामने का भाग समूचा ही तहस-नहस हो गया। कुछ लोग मलबे में दब गए और मर गए। बहुत लोग क़ायल हो कर चीखने-चिल्लाने और हाय-हाय करने लगे। इसी समय एक और गोला गिरा जिसने हवेली के भीतरी हिस्से में आग लगा दी।

अब चौधरी काँपता हुआ उठा। वह लाठी टेकता हुआ बाहर आया। उसने हवा में सफेद रूमाल फहराया। बन्दूकों की बाढ़ रुक गई।

उसने आगे बढ़ कर कहा—"आप हमें गिरफ्तार कर सकते हैं। ज्यादा खून खराबी की आवश्यकता नहीं है।"

पिता को गिरफ्तार होता देख सब चौधरियों ने हथियार रख दिए। एक-एक करके सब चौधरी गिरफ्तार कर लिए गए। परन्तु मंगला ने गिरफ्तार होने से इन्कार कर दिया। उसने पिस्तौल हाथ में लेकर शुद्ध अंग्रेज़ी भाषा में कहा—"जो मेरे ऊपर हाथ डालेगा—उसे मैं गोली मारूँगी।" मैजिस्ट्रेट ने उसे बहुत समझाया। पर उसने एक न सुनी—वह जलती हुई हवेली के आगे आ खड़ी हुई। उसी समय तोप का गोला उस पर पड़ा और उसके कोमल अंग-प्रत्यंग टुकड़े-टुकड़े होकर हवा में उछल गए। भीड़ में हाहाकार मच गया। चौधरी प्राणनाथ मूर्च्छित

हक्का-बक्का हो गए। उन्होंने सिपाहियों को घेर लिया और मार-मार करते ठोकर के पीछे भागे। इसी समय चौधरी ने बन्दूक की एक बाढ़ दागी। हाबूड़े रुक गए। अब ठोकर उनके पहुँच से बाहर थी।

दो तीन मील का सफ़र तै करने के बाद रघुवीर ने बैलों को धीमा किया। बैल फेन उगल रहे थे, उसने उन्हें थपथपाया। फिर कहा—"तो हैं, कि गए।"

"हैं।"

रघुवीर आश्वस्त हुआ। उसने कहा, मैं लौट कर देखूँगा। इन हाबूड़ों की सिरकियों में दो बार मैं आग लगा चुका हूँ। लेकिन फिर ये इस जंगल में आ पड़े।

बेचारे रघुवीर को और सुरेन्द्रपाल को क्या पता था—कि उनके पीछे मुक्तेसर पर तबाही आ चुकी है। और अब उन में से कोई भी वापस मुक्तेसर नहीं लौट सकता।

अभी पहर दिन शेष था कि सुरेन्द्रपाल मेरठ जा पहुँचा। यहाँ उसने उड़ती हुई खबर सुनी कि मुक्तेसर में हंगामा हो गया है, और सरकारी आदमियों का क़त्ल हो गया है, परन्तु अभी यह अफवाह ही थी। फिर भी ठाकुर रघुराजसिंह ने उन्हें अपने घर में न रख कर एक दूसरे स्थान पर डेरा दिया और समझाया कि अभी जब तक मुक्तेसर की पूरी ख़बर न आ जाय वे चुपचाप बैठें।

: ४२ :

मेरठ की जेल में

मेरठ की जेल में बड़े मियाँ और चौधरी मिले। पर चौधरी उस समय विक्षिप्तावस्था में थे। उन्होंने बड़े मियाँ को नहीं पहचाना। छोटे चौधरी ने रोते-रोते सारा क़िस्सा बड़े मियाँ को सुनाया। सुन कर बड़े मियाँ ने अपनी डाढ़ी के बाल नोच लिए। उन्हें अभी यह ज्ञात न था--

क छोटे मियाँ पर कैसी बीती तथा वह कहाँ हैं। पर इस समय तो वे धरी की हालत देख कर अधीर हो गए। उनकी आँखों से चौधारे सू बहने लगे। वे चौधरी को गोद में लेकर या-खुदा या-खुदा के नारे गाने लगे। मेरठ की जेल में भी हलचल मच गई। मुक्तेसर के ग़दर र क़त्ल तथा चौधरियों की गिरफ़्तारी के ऊपर मंगला के बलिदान के क़िस्से भाँति-भाँति का रूप धारण करके लोगों की ज़बान पर चढ़ गए। लोग भाँति-भाँति की बातें करने लगे। अंग्रेज़ों को गालियाँ देते और उन्हें क्रोध भरी नज़र से देखने लगे।

चौधरी और उनके बेटों ने अपनी प्यारी लाडली बेटी मंगला के कोमल अंगों को तोप से उड़ते हुए अपनी आँखों से देखा था। छोटे चौधरी अभी तरल आँखों में खून भरे मरने मारने पर तुले बैठे थे। वे चाहते थे, सामने दो-दो हाथ करके जवाब दे दें। बूढ़े चौधरी बदहवास थे। वे आँखें फाड़-फाड़ कर चारों ओर देख लेते। कभी हंस पड़ते। कभी मंगला का अक्सर नाम उनके मुँह से निकल जाता। कभी वे अस्पष्ट शब्द बड़बड़ाने लगते। कभी एकदम मुर्दे की तरह गिर जाते।

उन की चिकित्सा और देख-भाल का कोई प्रबन्ध कम्पनी सरकार की ओर से नहीं किया गया था। परन्तु मेरठ जेल का जेलर सहृदय था। उसने उन्हें बड़े मियाँ की देख-रेख में छोड दिया। बड़े मियाँ के ऊपर कोई संगीन जुर्म न था। बक़ायदा लगान न देने ही से वे जेल भेजे गए थे—इसके अतिरिक्त उनकी बुजुर्गी—गम्भीरता—व्यक्तित्व भी ऐसा था कि जिस से अंग्रेज़ जेलर प्रभावित हुआ था। उसने उन्हें जेल में सब सम्भव सुविधाएँ दे रखी थीं। इसी से जहाँ सब चौधरी अलग-अलग कोठरियों में हथकड़ी बेड़ी से जकड़ कर बन्द कर दिए गए वहाँ प्राणनाथ चौधरी की हथकड़ियाँ खोल दी गईं और उन्हें बड़े मियाँ की देख-रेख में खुला छोड़ दिया गया।

बड़े मियाँ प्राणपन से चौधरी प्राणनाथ की प्राण-रक्षा की चेष्टा करने में लग गए।

ठाकुर रघुराजसिंह के प्रभाव और दौड़-धूप से बड़े मियाँ और चौधरी प्राणनाथ जेल से छूट गए। बड़े मियाँ की मालगुज़ारी अदा कर दी गई। पर उनकी ज़मींदारी नीलाम कर दी गई थी—अतः अब बड़ागाँव उन के तहत में न रह गया था। सुखपाल, सुरेन्द्रपाल को भी गिरफ़्तार कर लिया गया। हाँ, जो धन-रत्न मुक्तेसर से निकल आया था उसमें से जो कुछ इस छुटकारे में खर्च हुआ उसे दे कर शेष बच रहा था।

बड़े मियाँ को अब अपनी ज़मींदारी की चिन्ता न थी। वह मेरठ रह कर अब चौधरी प्राणनाथ की सेवा-सुश्रुषा करने में लग गए।

सब अभियुक्तों का चालान कलकत्ता कर दिया गया। जहाँ सुप्रीम-कोर्ट में उन पर मुक़दमा चलने वाला था।

: ४३ :

भाग्य के हेर फेर

बड़े मियां की बड़ी अथक सेवा-सुश्रुषा और दौड़-धूप कुछ भी कार-गर न हुई, चौधरी प्राणनाथ की प्राण रक्षा न हो सकी। अनेक चिकित्सकों को बुलाया गया, पर व्यर्थ। वे कभी-कभी कुछ होश में आते तो अस्फुट स्वर में मंगला का नाम लेते। पहचानते किसी को नहीं। बड़े मियां कहते—भाई जान, मुझे नहीं पहचाना? तो वे कांपती उंगलियाँ ऊपर उठा कर अस्फुट वाणी में कहते—तुम फिरंगी हो—लेकिन मेरी बेटी को मत मारो, मुझे बाँध लो। फिर वे बेहोश हो जाते। रोते-रोते बड़े मियां की दाढ़ी भीग जाती। खाना-पीना सोना उन्होंने सभी तर्क कर दिया, अपने इकलौते बेटे तक से न बोलते। छोटे मियां उन्हें राहत पहुँचाने की चेष्टा करते, पर ऐसा प्रतीत होता था कि मस्तिष्क उनका भी आहत हो चुका था।

तीन महीने प्राणनाथ जीवित रहे। और अन्त में बड़े मियां की गोद में सर रख उन्होंने प्राण त्यागा। मरने से कुछ पहले उनके होश-हवाश ठीक हो गए। उन्होंने बड़े मियां को पहचाना, मुस्कराए। फिर

क्षीण स्वर में कहा—"अब जाऊँगा, बड़े भाई ! मंगला वहाँ मेरी बाट जोह रही है," और वह मुस्कान उनके ओठों पर फैली ही रह गई। उनकी आँखें पलट गईं।

बड़े मियाँ ने अब एक क्षण भी खोना ठीक नहीं समझा। उन्होंने छोटे मियाँ को बुला कर समझाया—"बेटे, तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं छोड़े जा रहा हूँ। बड़ा गाँव गया, पर क्या ग़म। हमने कभी किसी पर जुल्म नहीं किया, किसी का दिल नहीं दुखाया। खुदा की मर्जी—बेहतर हो तुम दिल्ली चले जाओ और कोई अच्छी नौकरी कर लो। मैं अभी तो कलकत्ते जाऊँगा। चौधरियों को बचाने की जो भी बन पड़ेगी कोशिश करूँगा। यदि फिर ज़िन्दा वापस आ सका तो देखूँगा कि तुम्हारे लिए क्या कर सकता हूँ। नहीं तो बस खुदा हाफिज।"

छोटे मियाँ बहुत रोए। कलकत्ते चलने का बहुत इसरार किया। पर बड़े मियाँ ने नहीं मंजूर किया। जिस क़दर ज़र-जवाहरात रुपया चौधरी का बचा था, सब लेकर वे डाक पर डाक बैठा कर कलकत्ते चल दिए। कलकत्ते पहुँचने में उन्हें दो महीने लग गए। वहाँ पहुँच कर उन्होंने बड़े-बड़े अंग्रेज़ बैरिस्टर खड़े किए। पर परिणाम कुछ न हुआ। मुकदमा बहुत दिन तक चलता रहा—अन्त में चौधरी के सब बेटों को और उनके साथ और पचास-साठ आदमियों को फाँसी की सज़ा सुना दी गई। अपील में भी कुछ न हुआ। यथा-समय उन्हें फाँसी दे दी गई, अन्य सैकड़ों अपराधी-निरपराधी आजन्म कालेपानी भेज दिए गए। बड़े मियाँ फिर लौट कर न आए। न किसी को पता—फिर वे कहाँ गए। लोग कहते सुने गए—कि एक बूढ़ा मुसलनान फ़कीर कलकत्ते की गलियों-बाज़ारों में अर्ध-विक्षिप्त अवस्था में बहुत दिन तक भटकता फिरता रहा। वह न कुछ किसी से माँगता था, न बोलता था। न उसे शरीर की सुध थी—न वस्त्रों की। और एक दिन उसे कलकत्ते में एक सड़क के किनारे—मरा पड़ा पाया गया। और कुछ मुसलमान फ़कीरों ने उसे ले जाकर दफना दिया।